हिन्दी निबन्ध मञ्जरी

सम्पादक

बृजभूषण दूबे

प्रकाशक :

भारतीय विद्या संस्थान

सी० २७/५९, जगतगंज, वाराणसी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रकाशक—

भारतीय विद्या संस्थान

प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता

(सं० सं० विश्वविद्यालय, इलाहाबाद बैंक के समीप)

सी० २७/५९, जगतगंज-वाराणसी २२१००२

अन्य प्राप्ति स्थान

ओरियण्टल बुक सेण्टर

दुकान नं० १४, द्वितीय तल

चौ० काशीराम मार्केट

दुर्गाकाम्प्लेक्स, न्यू चन्दावल

दिल्ली—११०००७

संस्करण-द्वितीय १९९७

मूल्य—२५)

मुद्रक—

न्यू प्रिंटिंग सेण्टर

सा० २/२४० ए-१, पाण्डेयपुर, वाराणसी.

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विषय-सूची

१.	देशाटन से लाभ	१
२.	स्वदेश प्रेम	४
३.	विश्व शांति और भारत	६
४.	भारत महिमा	१०
५.	भारतीय नारी	१३
६.	भारतीय ग्राम	१६
७.	गंगा गरिमा	१९
८.	वाराणसी	२२
९.	आदि काव्य रामायण	२५
१०.	पंचम वेद महाभारत	३०
११.	भगवद्गीता	३३
१२.	शंकराचार्य	३७
१३.	भगवान श्रीकृष्ण	४०
१४.	महात्मा बुद्ध	४४
१५.	महात्मा गांधी	४७
१६.	महामना पं. मदन मोहन मालवीय	५०
१७.	पं. जवाहर लाल नेहरू	५४
१८.	प्रियदर्शिनी इन्दिरा गांधी	५८
१९.	युवा नेता राजीव गांधी	६१
२०.	महाकवि कालिदास	६३
२१.	प्रिय कवि तुलसीदास	६६
२२.	हमारे पर्व	६९
२३.	स्वतन्त्रता दिवस	७२
२४.	विजयादशमी	७५
२५.	दीपावली	७७

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२६. होलिका ८०
२७. ऋतुराज वसन्त ८२
२८. आदर्श विद्यार्थी ८५
२९. अनुशासन ८९
३०. विद्यार्थी जीवन ९१
३१. परोपकार ९४
३२. ब्रह्मचर्य ९७
३३. व्यायाम १००
३४. सैनिक शिक्षा १०४
३५. पुस्तकालय १०६
३६. समाचार पत्र ११०
३७. विज्ञान के चमत्कार ११३
३८. दहेज-प्रथा ११५
३९. आरक्षण समस्या और समाधान ११८
४०. जनसंख्या १२[illegible]
४१. पर्यावरण की समस्या १२५
४२. वृक्षारोपण या वन महोत्सव १२८
४३. राष्ट्र भाषा हिन्दी १३०
४४. अमर वाणी- वैभव १३२
४५. संस्कृत की उपयोगिता १३७
४६. संस्कृत भाषा का प्रचार प्रसार १४२
४७. सम्पूर्णानन्द सं० विश्वविद्यालय १४७

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भूमिका

निबन्ध शब्द का इस समय जिस अर्थ में प्रयोग किया जा रहा है, वह संस्कृत साहित्य की देन नहीं है। वैसे तो निबन्ध शब्द संस्कृत भाषा का ही है, इसका अर्थ है—बन्धन। प्राचीनकाल में भोज-पत्रों पर लिखे गये लेखों को एकत्र कर सँवारने और सिलकर बाँधने की क्रिया को ही निबन्ध कहा जाता था। कालान्तर में इस शब्द का प्रयोग साहित्यिक तथा धार्मिक गद्य की रचना के लिए होने लगा। हिन्दी साहित्य में निबन्ध का विकास अंग्रेजी साहित्य के अनुकरण से हुआ है। पारिभाषिक शब्दों में—"निबन्ध गद्य साहित्य की वह विद्या या रचना है जिसमें किसी विषय से सम्बन्धित प्रमुख तत्वों का क्रम से संकलन हो तथा जिसमें लेखक के व्यक्तित्व की झलक मिलती हो।" प्रबन्ध, रचना, लेख तथा सन्दर्भ आदि निबन्ध के समानार्थी शब्द हैं।

निबन्ध की उपयोगिता

निबन्धों के अध्ययन से हम किसी विषय अथवा वस्तु का समुचित ज्ञान थोड़े ही समय में प्राप्त कर सकते हैं। निबन्धों के अध्ययन से भाषा का परिष्कार तथा भावों का विकास हो सकता है। निबन्धों के माध्यम से हमें १६न तथा विज्ञान की आवश्यक बातों का ज्ञान होता है। अनेकों निबन्ध-कारों की शैलियों से परिचित होकर स्वयं अपनी एक शैली बनाने में सहायता मिलती है। अपने अन्तःकरण के भावों को व्यक्त करने की क्षमता, निबन्धों के अध्ययन तथा लेखन से विकसित होती है। इस प्रकार मानव जीवन में निबन्धों की बड़ी उपयोगिता है। नाना विषयों के निबन्धों के अध्ययन, अध्या-पन तथा लेखन से हमारे भीतर सांस्कृतिक भावना का विकास होता है।

निबन्ध के मुख्य तत्व

निबन्धों में मुख्यतया दो तत्व होते हैं–(१) विषय-ज्ञान तथा (२) शैली। इन दोनों का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। इसमें यदि सामग्री को निबन्ध का शरीर माना जाय तो शैली ही उसकी आत्मा होगी। निबन्ध लिखने के लिए सर्वप्रथम तद्विषयक ज्ञान होना परमावश्यक है। जिससे सामग्री का चयन किया जा सके। वही लेखक अच्छी सामग्री का चयन कर सकता है, जिसने

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उस विषय के सम्बन्ध में गहन अध्ययनोपरान्त चिन्तन किया हो। साथ ही साथ दर्शनीय वस्तु तत्व का साक्षात् दर्शन करके निरीक्षण किया हो। किसी महापुरुष या कवि के विषय में निबन्ध लिखने के लिए यदि अध्ययन आवश्यक है तो, किसी घटना, दृश्य तथा स्थान के सम्बन्ध में उसको साक्षात् देखकर सूक्ष्म निरीक्षण करना। अध्ययन और निरीक्षण के अलग-अलग क्षेत्र हैं। लेखक को इन दोनों क्षेत्रों का ज्ञान आवश्यक है।

वैसे तो सभी को चाहिए कि अध्ययन के उपरान्त मुख्य तथ्यों को कहीं अलग से लिख लें परन्तु यह लेखक के लिए परमाश्यक है। क्योंकि आवश्यकता पड़ने पर इससे लेखन में सहायता मिलती है। विद्यार्थियों के लिए भी यह उपयोगी है। कई स्थानों से आवश्यक तथ्यों का चयन करना पड़ता है, जो हर समय पूरा पढ़ना सम्भव नहीं होता। संक्षेप में लिखे गये विवरण का बार-बार अनुशीलन करने से मुख्य बातें याद करने में सहायता मिलती है। अतः सामग्री चयन के लिए आवश्यक तथ्यों को 'नोट-बुक' में लिखना सबके लिए आवश्यक है। तभी उत्तम निबन्ध लिखा जा सकता है।

कहा गया है कि 'करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान' इस उक्ति के अनुसार लेखक को निरन्तर लिखने का अभ्यास करना चाहिए। बिना अभ्यास के शब्दों का गुम्फन सौन्दर्यपूर्ण नहीं हो पाता है। बिना अभ्यास के कोई भी अच्छा लेखक नहीं हो सकता है। अतः लेखक को अनवरत, अध्ययन, लेखन, मनन तथा चिन्तन के कार्य में लगा रहना चाहिए।

शैली ही कसौटी है। गूढ़ से गूढ़तम विषय को सरलतम रूप में अभिव्यक्त करना शैली की ही महत्वपूर्ण विशेषता है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक शैली होती है। इसी आधार पर कहा जा सकता है कि—"शैली ही मनुष्य हैं।" इस शैली में महत्वपूर्ण स्थान भाषा का होता है। क्लिष्ट भाषा में लिखे गये निबन्ध की शैली क्लिष्ट होती है और सरल भाषा के लिए सरल शैली का प्रयोग होना चाहिए। अलंकारों से गुम्फित शब्दावली वाले निबन्ध 'अलंकृत-शैली' में नियोजित किये जाते हैं। इसी प्रकार व्यंग्यात्मक तथा विश्लेषणात्मक आदि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कई शैलियाँ होती हैं। हिन्दी में संस्कृत, उर्दू तथा अंग्रेजी शब्दों से युक्त भाषा व्यवहार में लाई जाती है। संस्कृत-निष्ठ भाषा परिनिष्ठित शैली में तथा अंग्रेजी-उर्दू के शब्दों से मिश्रित भाषा प्रचलित शैली के नाम से जानी जाती हैं। व्यक्ति विशेष के नाम पर भी शैली बनती है। जैसे—बाणभट्ट की शैली, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की शैली।

अपने भावों को व्यक्त करने का प्रमुख साधन भाषा ही होती है। अतः लेखक को भाषा पर विशेष ध्यान देना चाहिए। भाषा जितनी ही शुद्ध तथा परिमार्जित होगी लेख उतना ही सुन्दर होगा। व्याकरण के नियमों को ध्यान में रखने से भाषा में शुद्धता आती है। विराम, अर्धविराम, अनुस्वार तथा विसर्ग आदि का उचित स्थानों पर प्रयोग के लिये भी व्याकरण पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। व, ब, श, स, ष, ह्रस्व दीर्घ मात्राओं आदि की अशुद्धियों से भाषा के निर्माण में घातक प्रभाव पड़ता है। इनके गलत प्रयोग से कभी-कभी अर्थ का अनर्थ हो जाता है। लेखक को इस महत्वपूर्ण बात पर विशेष ध्यान देना चाहिये। लम्बे-लम्बे समास बहुल शब्दों का प्रयोग लेख को बोझिल तथा दुरूह बना देता है। अधिकांशतः सन्धि को तोड़कर शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। हिन्दी भाषा की जननी संस्कृत भाषा है अतः शब्दों का प्रयोग अधिकांशतः संस्कृत के भंडार से ही करना चाहिये। उर्दू तथा अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का यथा स्थान प्रयोग भाषा को टकसाली बना देता है। अतः लेखक को इन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। मुहावरों का समुचित प्रयोग से भी भाषा में चार चाँद लग जाता है, जो भाषा की सजावट के लिये आवश्यक है। निबन्ध को आकर्षक तथा बोधगम्य बनाने के लिये अनुच्छेदों में विभक्त होना आवश्यक है। परन्तु अनुच्छेदों का निर्माण बहुत सोच समझकर करना चाहिये। बीच-बीच में यथा स्थान सूक्तियों का प्रयोग भी निबन्ध को सुन्दर तथा आकर्षक बनाने में सहायक होता है। उपर्युक्त सभी बातों पर लेखक को पूर्ण ध्यान देना चाहिये। क्योंकि इन्हीं के आधार पर निबन्धों को कसौटी पर आँका जाता है। भाषा शरीर होने के नाते सर्वाङ्गसुन्दर एवं सुडौल होनी चाहिये।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उस विषय के सम्बन्ध में गहन अध्ययनोपरान्त चिन्तन किया हो। साथ ही साथ दर्शनीय वस्तु तत्व का साक्षात् दर्शन करके निरीक्षण किया हो। किसी महापुरुष या कवि के विषय में निबन्ध लिखने के लिए यदि अध्ययन आवश्यक है तो, किसी घटना, दृश्य तथा स्थान के सम्बन्ध में उसको साक्षात् देखकर सूक्ष्म निरीक्षण करना। अध्ययन और निरीक्षण के अलग-अलग क्षेत्र हैं। लेखक को इन दोनों क्षेत्रों का ज्ञान आवश्यक है।

वैसे तो सभी को चाहिए कि अध्ययन के उपरान्त मुख्य तथ्यों को कहीं अलग से लिख लें परन्तु यह लेखक के लिए परमाश्यक है। क्योंकि आवश्यकता पड़ने पर इससे लेखन में सहायता मिलती है। विद्यार्थियों के लिए भी यह उपयोगी है। कई स्थानों से आवश्यक तथ्यों का चयन करना पड़ता है, जो हर समय पूरा पढ़ना सम्भव नहीं होता। संक्षेप में लिखे गये विवरण का वार-बार अनुशीलन करने से मुख्य बातें याद करने में सहायता मिलती है। अतः सामग्री चयन के लिए आवश्यक तथ्यों को 'नोट-बुक' में लिखना सबके लिए आवश्यक है। तभी उत्तम निबन्ध लिखा जा सकता है।

कहा गया है कि 'करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान' इस उक्ति के अनुसार लेखक को निरन्तर लिखने का अभ्यास करना चाहिए। बिना अभ्यास के शब्दों का गुम्फन सौन्दर्यपूर्ण नहीं हो पाता है। बिना अभ्यास के कोई भी अच्छा लेखक नहीं हो सकता है। अतः लेखक को अनवरत, अध्ययन, लेखन, मनन तथा चिन्तन के कार्य में लगा रहना चाहिए।

शैली ही कसौटी है। गूढ़ से गूढ़तम विषय को सरलतम रूप में अभिव्यक्त करना शैली की ही महत्वपूर्ण विशेषता है। प्रत्येक व्यक्ति की अपनी एक शैली होती है। इसी आधार पर कहा जा सकता है कि—"शैली ही मनुष्य हैं।" इस शैली में महत्वपूर्ण स्थान भाषा का होता है। क्लिष्ट भाषा में लिखे गये निबन्ध की शैली क्लिष्ट होती है और सरल भाषा के लिए सरल शैली का प्रयोग होना चाहिए। अलंकारों से गुम्फित शब्दावली वाले निबन्ध 'अलंकृत-शैली' में नियोजित किये जाते हैं। इसी प्रकार व्यंग्यात्मक तथा विश्लेषणात्मक आदि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कई शैलियाँ होती हैं। हिन्दी में संस्कृत, उर्दू तथा अंग्रेजी शब्दों से युक्त भाषा व्यवहार में लाई जाती है। संस्कृत-निष्ठ भाषा परिनिष्ठित शैली में तथा अंग्रेजी-उर्दू के शब्दों से मिश्रित भाषा प्रचलित शैली के नाम से जानी जाती हैं। व्यक्ति विशेष के नाम पर भी शैली बनती है। जैसे—बाणभट्ट की शैली, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल की शैली।

अपने भावों को व्यक्त करने का प्रमुख साधन भाषा ही होती है। अतः लेखक को भाषा पर विशेष ध्यान देना चाहिए। भाषा जितनी ही शुद्ध तथा परिमार्जित होगी लेख उतना ही सुन्दर होगा। व्याकरण के नियमों को ध्यान में रखने से भाषा में शुद्धता आती है। विराम, अर्धविराम, अनुस्वार तथा विसर्ग आदि का उचित स्थानों पर प्रयोग के लिये भी व्याकरण पर ध्यान देने की आवश्यकता होती है। व, ब, श, स, ष, ह्रस्व दीर्घ मात्राओं आदि की अशुद्धियों से भाषा के निर्माण में घातक प्रभाव पड़ता है। इनके गलत प्रयोग से कभी-कभी अर्थ का अनर्थ हो जाता है। लेखक को इस महत्वपूर्ण बात पर विशेष ध्यान देना चाहिये। लम्बे-लम्बे समास बहुल शब्दों का प्रयोग लेख को बोझिल तथा दुरूह बना देता है। अधिकांशतः सन्धि को तोड़कर शब्दों का प्रयोग करना चाहिये। हिन्दी भाषा की जननी संस्कृत भाषा है अतः शब्दों का प्रयोग अधिकांशतः संस्कृत के भंडार से ही करना चाहिये। उर्दू तथा अंग्रेजी के प्रचलित शब्दों का यथा स्थान प्रयोग भाषा को टकसाली बना देता है। अतः लेखक को इन बातों पर विशेष ध्यान देने की आवश्यकता होती है। मुहावरों का समुचित प्रयोग से भी भाषा में चार चाँद लग जाता है, जो भाषा की सजावट के लिये आवश्यक है। निबन्ध को आकर्षक तथा बोधगम्य बनाने के लिये अनुच्छेदों में विभक्त होना आवश्यक है। परन्तु अनुच्छेदों का निर्माण बहुत सोच समझकर करना चाहिये। बीच-बीच में यथा स्थान सूक्तियों का प्रयोग भी निबन्ध को सुन्दर तथा आकर्षक बनाने में सहायक होता है। उपर्युक्त सभी बातों पर लेखक को पूर्ण ध्यान देना चाहिये। क्योंकि इन्हीं के आधार पर निबन्धों को कसौटी पर आँका जाता है। भाषा शरीर होने के नाते सर्वाङ्गसुन्दर एवं सुडौल होनी चाहिये।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

निबन्ध के मुख्य अंग

निबन्ध के मुख्यतया तीन अंग होते हैं—(१) प्रस्तावना या प्रारम्भिक भाग (२) मध्य भाग तथा (३) उपसंहार या अन्तिम भाग। प्रस्तावना निबंध का महत्वपूर्ण भाग है। यह भावपूर्ण तथा रूचिकर होनी चाहिये। क्योंकि इसकी रोचकता से ही पाठक पूरा लेख पढ़ने के लिये प्रेरित होता है। प्रस्तावना लिखने के कई प्रकार हैं। कोई विषय की उपयोगिता अथवा परिभाषा से आरम्भ करता हैं। कोई किसी कवि की आकर्षक उक्ति देकर निबन्ध की शुरूआत करता है। कोई किसी दृश्य से ही निबन्ध का श्रीगणेश करता है। कोई किसी कहावत या कथा से ही निबन्ध आरम्भ करता है। इस प्रकार से हम देखते हैं कि निबन्ध की प्रस्तावना लिखने के अनेक ढंग है। इसमें से किसी तरीके को अपनाया जा सकता है।

निबन्ध के दूसरे भाग में अर्थात् मध्य भाग में लेखक जितना विस्तार करना चाहे यथेष्ट विस्तार कर सकता है। प्रत्येक पहलुओं को अनुच्छेदों के माध्यम से व्यक्त किया जा सकता हैं। इसमें इस पर विशेष ध्यान देना चाहिये कि प्रधान वस्तु का वर्णन विस्तृत हो तवा गौण वस्तु का वर्णन संक्षिप्त। अपनी वात को प्रमाणित करने के लिये इस भाग में विद्वानों की सूक्तियों तथा लोकोक्तियों का उल्लेख करना समीचीन होता है।

निबन्ध का उपसंहार या अन्तिम भाग थोड़े में ही रोमांचकारी होना चाहिये। अधिक समीचीन तो यह होगा कि लेख का सारांश देकर ही उसका उपसंहार करना चाहिये। प्रस्तावना के ही समान उपसंहार भी अधिक महत्वपूर्ण होता है। लेखक को ऐसा प्रयास करना चाहिए कि केवल उपसंहार मात्र के पढ़ने से सम्पूर्ण निवन्ध का भाव स्पष्ट हो जाय। यह भाव इतना प्रभावशाली होना चाहिये कि तत्काल ही पाठक उससे प्रभावित हो जाय। अतः इसकी रचना के समय लेखक को अधिक सावधान रहने की आवश्यकता होती है। विद्यार्थियों के लिये भी इस भाग का बड़ा ही महत्व होता है। क्योंकि उनके उपसंहार की अच्छाई उत्तम अंक प्राप्त कराने में सहायक होती है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यद्यपि इस सम्बन्ध में कोई नियम विशेष नहीं है, पर स्थूल रूप से निम्न-लिखित बातें उपसंहार में लिखनी चाहिए–(१) सारांश (२) परिणाम (३) उपदेश (४) अपनी सम्मति (५) कोई सूक्ति (६) विषय का महत्व (७) निवेदन।

निबन्ध के भेद

निबन्ध मुख्यतया चार प्रकार के होते हैं, जो इस प्रकार हैं—

१—वर्णनात्मक,

२—विवरणात्मक या चरितात्मक,

३—विचारात्मक,

४—समीक्षात्मक या आलोचनात्मक,

वर्णनात्मक निबन्ध में स्थान, दृश्य, भवन, नदी, पर्वत, जीवजंतु, पेड़, पौधे, यात्रा, त्योहार आदि प्राकृतिक तथा अप्राकृतिक वस्तुओं का साहित्यिक ढंग से सारगर्भित वर्णन प्रस्तुत किया जाता है। विद्यार्थियों को सर्वप्रथम वर्णनात्मक निबन्ध ही लिखने का अभ्यास करना चाहिये। ऐसे निबन्धों को लिखने में सफलता के लिए अध्ययन चिन्तन मनन तथा निरीक्षण की आवश्यकता होती है।

विवरणात्मक निबन्ध में ऐतिहासिक घटना, जीवन-चरित्र, आत्मकथा आदि का रोचक वर्णन प्रस्तुत किया जाता है। इन निबन्धों में कालक्रम के ऊपर विशेष ध्यान देना चाहिये। ऐसा न होना चाहिये कि किसी के जीवन चरित्र को लिखते समय पहले उसकी मृत्यु ही लिख दी जाय। बाद में अन्य कार्यों का विवरण दिया जाय, ऐसा करना उपहास्यस्पद है। कालक्रम के साथ-साथ शैली में रोचकता होनी चाहिये।

विचारात्मक निबन्ध में अमूर्त अर्थात् आकार रहित विषयों का विचारात्मक वर्णन रहता है। व्यायाम, सैनिक शिक्षा, क्रोध, करुणा, मैत्री, स्वदेश प्रेम आदि निबन्ध इसी के अन्तर्गत आते हैं। ऐसे निबन्धों में तर्क एवं उक्तियों द्वारा वर्ण्य विषय की उपादेयता और अनुपादेयता तथा उससे होने वाले हानि तथा लाभ का वर्णन किया जाता है। इसमें भी सफल होने के लिये अध्ययन,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मनन, चिन्तन, अनुभव है, सूक्ष्मवेक्षिका की आवश्यकता होती है। आचार्य रामचन्द्र शुक्ल जी के निबन्ध इसी कोटि में आते हैं।

आलोचनात्मक निबन्ध का क्षेत्र बड़ा ही व्यापक है। इसमें सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक तथा साहित्यिक विषयों की युक्त ढंग से आलोचनात्मक समीक्षा की जाती है। किसी तथ्य को सिद्ध करने के लिये अन्य तर्क एवं दृष्टांतों द्वारा खंडन मण्डन करना समीक्षात्मक निबन्धों की प्रमुख विशेषता है। छायावाद, रहस्यवाद तथा समाजवाद आदि के निबन्ध इसी कोटि में आते हैं।

अतः हम कह सकते हैं कि निबन्ध-लेखन एक उत्कृष्ट कला है। इसमें सिद्धहस्त होने के लियें अध्ययन, चिन्तन, मनन तथा निरीक्षण और अभ्यास की नितान्त आवश्यकता होती है। भाषा का समुचित ज्ञान भी निबन्ध लेखक के लिये परमावश्यक होता है। छात्र जीवन में निबन्ध लिखने आलस्य कदापि नहीं करना चाहिए। क्योंकि बार-बार लेख लिखकर दिखाने से उनकी कमियाँ दूर हो सकती हैं और वे सफल निबन्धकार बन सकते हैं। लेख लिखने से पूर्व लेखक को उसकी संक्षिप्त रूप-रेखा निश्चित कर लेना चाहिये। क्योंकि इसकी सहायता से ही निबन्ध के लिये आवश्यक एवं महत्वपूर्ण तथ्य क्रमबद्ध स्वरूप में समायोजित किया जा सकता है। लेखन की कला में निपुण होना मानव जीवन की हर पहलुआं के लिये सहायक होता है।

बृजभूषण दूबे

वाराणसी

सन्–१९८९

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हिन्दी निबन्ध मञ्जरी

१. देशाटन से लाभ

चलते रहने का नाम ही जीवन है। गतिशील व्यक्ति ही भविष्य में अपने को विकसित कर संसार को शोभायमान बनाता है। वही मनुष्य प्रगति के पथ पर अग्रसर हो सकता है। जिसका जीवन स्वच्छ एवं बन्धन रहित हो, तथा जिसके मन में नवीनतम वस्तुओं दृश्यों एवं स्थानों के प्रति कौतूहल तथा जिज्ञासा हो। नगरों तथा देश-देशान्तर में घूमना ही देशाटन है। देशाटन से मनुष्य को विभिन्न स्थानों को देखने तथा नवीन विचारों को प्राप्त करने का सुअवसर प्राप्त होता है। अन्तःकरण में उदारता की भावना जागृत होती है। मनुष्य को चिन्तनशील एवं क्रियाशील बनाने के लिए परमावश्यक है। इस विषय पर किसी उर्दू के कवि की क्या ही सुन्दर उक्ति—

सैर कर दुनिया की गाफिल जिन्दगानी फिर कहाँ।
गर जिन्दगानी कुछ रही तो नौजवानी फिर कहाँ॥

देशाटन का मूल कारण मानव की परिवर्तनशील प्रवृत्तियाँ हैं। मनुष्य हमेशा परिवर्तन नवीनता का इच्छुक होता हैं, यह उसका स्वभाव है। खाने-पीने, पहनने, लिखने-पढ़ने आदि सभी में वह परिवर्तन चाहता है। इसी में उसे आनन्द मिलता है। इसी परिवर्तनशील प्रवृत्ति से प्रेरित होकर देश-विदेश का भ्रमण करना चाहता है। जब वह भ्रमण करता है तो, नित्य नये-नये देश, वेश, भवन, जीव-जन्तु, नर-नारी आदि के दर्शन होते हैं। उससे मानव की अन्तरात्मा प्रसन्न तथा ज्ञान वृद्धि होती है।

हमारे स्वास्थ्य पर भी देशाटन का प्रभाव पड़ता है। जलवायु के परिवर्तन से शरीर स्वस्थ तथा मन प्रसन्न होता है। विभिन्न नई वस्तुओं को देखकर आखें तृप्त हो जाती हैं। घर की चिन्ता से अनायास ही मुक्ति मिल जाती है। अनेक प्राकृतिक वस्तुओं को देखने से हृदय बरबस सहृदय बन जाता है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि देशाटन स्वास्थ्य साधन और आत्मविकास का उत्तम द्वार है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

देशाटन से हमारा अहंभाव नष्ट हो जाता है। देश-विदेश के गणमान्य मनीषियों के दर्शन से अपनी योग्यता का सही-सही ज्ञान होता है। जिसके कारण मनुष्य विनयी तथा उदार बन जाता है। अनेक विद्वानों के सम्पर्क में आने से ज्ञान भी विकसित होता है। साधु-महात्माओं, सुधारकों, तथा नेताओं के दर्शन एवं व्याख्यानों से न केवल मन को प्रसन्नता होती है, अपितु सदाचार और नीति सम्बन्धी बहुत सी बातों का ज्ञान भी हो जाता है। इस प्रकार देश का भ्रमण मनुष्य को व्यवहारिक ज्ञान देने में सहायक हैं।

वैसे तो देशाटन सभी के लिये आवश्यक एवं उपयोगी है, पर साहित्यकार के लिये इसकी अधिक उपादेयता है। साहित्य और समाज का अन्योन्याश्रय सम्बन्ध है। साहित्यकार समाज की गतिविधि से परिचित हुये बिना, सही साहित्य को जन्म नहीं दे सकता। अतः उसे समाज की चेतना से अवगत होने के लिये देशाटन अवश्य ही करना होगा। कविता, कला, नाटक, इतिहास आदि सभी प्रकार की पुस्तकों की लिखने के लिये देशाटन से सहायता मिलती है। विश्व के सभी अच्छे कवि और लेखक प्रायः पर्यटक थे। कालिदास, भवभूति, श्रीहर्ष, सूर, तुलसी, भूषण, गालिब, शेली, कीटस आदि कवियों को देशाटन ने ही अमर बना दिया है।

शिक्षा सम्बन्धी ज्ञान भी हमें देशाटन से प्राप्त होता है। पुस्तक में पढ़े गये स्थानों को हम साक्षात् देखकर अपने ज्ञान को दृढ़ कर लेते हैं। प्लासी और पानीपत का मैदान, हड़प्पा, मोहनजोदड़ो और सारनाथ का भग्नावशेष, अजन्ता तथा एलोरा की गुफायें, आगरा का ताजमहल, दिल्ली का लाल किला, गया का बुद्ध मंदिर आदि का साक्षात ज्ञान हमें देशाटन से ही सम्भव है। अन्य देशों की शासन प्रणाली एवं सभ्यता का परिचय भी हमें देशाटन के द्वारा ही मिलता है। अनुभव से प्राप्त शिक्षा ही सर्वश्रेष्ठ होती है। अतः अनुभव के लिये देशाटन परमावश्यक है।

चारित्रिक उन्नति में भी देशाटन की सहायता आवश्यक है। इससे मानव के अन्दर सहनशीलता आती है। वह धैर्यवान् एवं शक्ति सम्पन्न होता है। उसके

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हृदय में स्नेह और भ्रातृत्व की भावना के साथ ही साथ उदारता की भावना भी पैदा होती है। उसके विचारों में दृढ़ता तथा उसका चरित्र उज्ज्वल एवं समुन्नत हो जाता है।

देशाटन से मनुष्य में व्यवहार कुशलता आ जाती है। इसके साथ ही साथ विचारों में दृढ़ता तथा व्यक्तित्व में मौलिकता आ जाती है। इसलिए विद्यार्थियों को अवकाश के समय देशाटन करना परमावश्यक हो जाता है। इससे उसकी बौद्धिक उन्नति, उसमें मृदु भाषण की कला, तथा विश्व बन्धुत्व की भावना प्रबल होगी। इसके साथ ही साथ अध्ययन में रुचि पैदा होती है।

परमपिता परमेश्वर की सौन्दर्य मयी सृष्टि का साक्षात्कार हमें देशाटन से ही प्राप्त हो सकता है। इसके द्वारा विभिन्न भाषा-भाषियों तथा अनेक जाति के लोगों का सम्पर्क प्राप्त होता है। इस प्रकार से देशाटन हमारे अन्तःकरण में विश्व-बन्धुत्व की भावना पैदा करते हुए सुशिक्षित बनाता है। हमें यथाशक्ति देशाटन के द्वारा ज्ञान-अर्जित कर अपने जीवन को सार्थक बनाना चाहिए।

प्राचीन भारत में अध्यात्म चिन्तन अधिक होता था। अतः इसके लिए एकान्तिक साधना की आवश्यकता थी। लोग पर्यटन पसन्द नहीं करते थे। उस पर धार्मिक प्रतिबन्ध भी लगा दिये गये थे। उस समय यातायात के साधनों की बड़ी कमी थी। अधिकांशतः पैदल ही चलना पड़ता था। रास्ते में चोर डाकुओं का भी भय बना रहता था। इन्हीं कारणों से लोग पर्यटन में रुचि नहीं लेते थे।

आज की स्थिति बदल चुकी है। यातायात के साधन सुलभ हो गये हैं। डाकुओं का भय नहीं रह गया है। अतः देशाटन में लोगों की अभिरूचि बढ़ रही है। एक देश से दूसरे देश में आने-जाने पर कोई प्रतिबन्ध नहीं रह गया है। अतः देशाटन से विश्व बन्धुत्व की भावना के साथ-साथ हमारी आत्मा का विकास तथा परस्पर प्रेम का प्रकाश सर्वत्र फैलेगा। कहा गया है कि—

"देशाटनं पंडित मित्रता च वारांगना राजसभा प्रवेशः।
अनेक शास्त्राणि बिलोकतानि चातुर्यमूलानि भवन्ति पंच।"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२. स्वदेश-प्रेम

जन्म देने वाली माता और जन्म स्थान दोनों का महत्व तुल्य है जो स्वर्ग से भी बढ़कर है। कहा गया है कि–'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसि'

आज अन्तर्राष्ट्रीयता के युग में भी हम स्वराष्ट्र को महत्व देते हैं, इससे भी यह सिद्ध होता है कि राष्ट्र प्रेम अन्तर्राष्ट्रीय प्रेम से उच्चतर है।

अपने देश की रक्षा एवं उन्नति के लिए अपना तन, मन, धन देश के लिए समर्पित कर देना ही वास्तविक देश भक्ति है, और यही है स्वदेश प्रेम। सच्चा देश प्रेमी अपने प्राणों की परवाह किए बिना उसकी उन्नति के लिए प्रयत्न-शील रहता है। वास्तविक प्रेम आत्म-बलिदान की भावना पैदा करता है। भारतवर्ष में अनेक देश प्रेमी पैदा हुए हैं। जो अपने त्याग और बलिदान से देश को गौरवान्वित किये हैं। महाराणाप्रताप तथा शिवाजी की देशभक्ति किसे आकृष्ट नहीं करती? यूरोप में आयरलैण्ड तथा इटली के स्वाधीनता रूपी सूर्य की परतन्त्रता रूपी राहु से रक्षा करने वाले मैविस्वन मेनिनी तथा गैरीवाल्डी के आदर्श नाम सम्पूर्ण विश्व को राष्ट्र प्रेम की शिक्षा देते हैं। काकोरी षडयन्त्र, देहली बम काण्ड तथा मेरठ षडयन्त्र रूपी विशुद्ध राष्ट्रीय यज्ञ में आत्म बलिदान करने वाले पवित्र कीर्ति सुभाषचन्द्रबोस, चन्द्रशेखर आजाद, भगत सिंह और उनके साथी राजगुरु आदि इतने अनगिनत है जितने कि आसमान के तारे। इन महापुरुषों से हमें राष्ट्र प्रेम की शिक्षा ग्रहण करना चाहिए।

अपने देश के सर्वांगीण विकास के लिए सभी लोगों को राष्ट्रप्रेमी होना परमावश्यक है। जिस देश के निवासी देश की उन्नति में अपनी उन्नति, अपने देश के कल्याण में कल्याण, देश कष्ट को अपना कष्ट, देश समृद्धि को अपनी समृद्धि समझते हैं, वह देश निरन्तर उन्नति करते हुए अन्य देशों के सामने गौरव से अपना मस्तक ऊँचा किए रहता है। अतः देश की उन्नति के लिए हम लोगों को हर क्षेत्र में हर प्रकार से सतर्क रहना चाहिए। जिसमें अपनी जन्मभूमि या देश के प्रति प्रेम नहीं होता वह निरा पशु होता है। यहाँ तक की वह जीते जी मरे हुए के समान होता है। कहा गया है कि—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"जिसको न निज गौरव तथा निज देश का अभिमान है।
वह नर नहीं है पशु निरा और मृतक समान है॥"

वैसे तो जहाँ आदमी कुछ दिनों तक रह लेता है उसका वहाँ से प्रेम हो जाना स्वाभाविक है। कौन ऐसा व्यक्ति होगा जिसको अपने देश से प्रेम न होगा। कोई स्थान दूसरे के लिये भले ही दुखदायी हो सकता है, परन्तु वहाँ पैदा होने वालों के लिये वह स्थान स्वर्ग से भी बढ़कर होता है। जिस प्रकार कभी अपने माता-पिता, भाई-बहन को छोड़ने की इच्छा नहीं होती उसी प्रकार से अपने देश को छोड़ने की इच्छा नहीं होती है। अगर किसी कारण-वश अपनी जन्म-भूमि को छोड़कर कहीं जाना पड़ता है तो हृदय में एक प्रकार की वेदना होने लगती है इसके विपरीत कहीं अन्यत्र से अगर वापस लौटना पड़ता है तो उस समय जो उल्लास जागृत होता है उसके सुख का वर्णन शब्दों के माध्यम से करना असम्भव है। विषुवत् देश का निवासी देश में हाँफ-हाँफकर जीवनयापन करता है। परन्तु वह अपना देश छोड़कर कहीं अन्यत्र नहीं जाना चाहता। इसी प्रकार ठंडे देश का निवासी काँप-काँप कर अपने ही देश में जीवन यापन करना चाहता है। इसका मूल कारण है स्वदेश प्रेम। इस सम्बन्ध में कहा गया है कि—"

"विषुवत् रेखा का वासी जो जीता है नित हाँफ हाँफ कर।
रखता है अनुराग अलौकिक, वह भी अपनी मातृभूमि पर॥
हिम वासी जो हिम में तम में जी लेता है काँप-काँप कर।
वह भी अपनी मातृभूमि पर, कर देता है प्राण निछावर॥"

यदि हम अपने देश से प्रेम करते हैं तो मेरे लिये आवश्यक हो जाता है कि हम कोई ऐसा कार्य न करे जिससे हमारे देश का मस्तक अन्य देशों के सामने झुके। हमको सच्चा देशप्रेमी बनना चाहिये। धन्य है वे लोग जो अपने देश को प्रेम करते हैं। धन्य है वह देश जहाँ अपने देश के लिये सर्वस्व न्योछावर करने वाले देश प्रेमी जन्म लेते हैं। यदि हम लोग अपने व्यक्तिगत स्वार्थों को छोड़कर पवित्र आत्मा से देश सेवा का कार्य आरम्भ कर दें तो

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हमारा देश भारतवर्ष निःसन्देह विश्व के उच्चतम राष्ट्रों की कतार में महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त कर लेगा । श्रीरामनरेश त्रिपाठी ने सच्चे प्रेम को देश प्रेम के साथ एकाकार करते हुये कहा है कि—

"सच्चा प्रेम वही हैं जिसकी तृप्ति आत्मबल पर हो निर्भर ।
त्याग बिना निष्प्राण प्रेम है, करो प्रेम पर प्राण निछावर ॥
देश-प्रेम वह पुण्य क्षेत्र है अमल असीम त्याग से विकसित ।
आत्मा के विकास से जिसमें, मानवता होती है विकसित ॥"

अतः सच्चा देश प्रेमी वही हो सकता है जो देश के एक छोटे से छोटे कार्य के लिये अपना बलिदान तक करने का साहस रखता हो । इसी प्रकार के देश प्रेमियों से ही देश की अखण्डता कायम रहकर विकास की तरफ अग्रसर होती रहती है ।

●

३. विश्व शान्ति और भारत

आज सम्पूर्ण विश्व का वातावरण अशान्त है । एक ओर अणुबम बना हैं तो दूसरी ओर हाइड्रोजन तथा नाइट्रोजन बम बनाये जा रहे हैं । इनको गिराकर किस पर प्रहार किया जाय इसकी उधेड़ बुन चल रही है । एक राष्ट्र दूसरे को शान्त और सुखी नहीं देखना चाह रहा है । चीन की राज्य लिप्सा तथा अफ्रीका का गृह-युद्ध सभी राष्ट्र देख रहे हैं । कहीं शीत युद्ध हुआ तो कहीं पर युद्ध के बादल मँडरा रहे हैं । सभी राष्ट्रों के होड़ से सम्पूर्ण विश्व में स्वार्थ तथा हिंसा का अखण्ड ताण्डव नृत्य हो रहा है । मानव द्वारा मानव का तथा राष्ट्र द्वारा राष्ट्र का शोषण पूंजीवाद तथा साम्राज्यवाद को बढ़ावा दे रहा है । विज्ञान समाज को अज्ञात एवं अनिश्चित दिशा की ओर खींचे लिये चला जा रहा है ।

संसार में युद्ध की विभीषिकायें उड़ रही हैं । मानवता को नष्ट करने के उपाय बन गये हैं । दूसरी तरफ शान्ति और सहयोग के आडम्बर फैलाये जा रहे हैं । इन कठिन परिस्थितियों में पड़ा संसार अपने भाग्य को कोस रहा है ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वह ऐसे साधनों को पाना चाहता है जिससे सम्पूर्ण विषमताएँ दूर की जा सकें ! विश्व शान्ति की गोद में शयन करना चाहता है। शान्ति भी न्याय के साथ रहना चाहती है। क्योंकि संघर्षमय वातावरण में उसका मन नहीं लगता है। दिनकर जी की उक्ति है—

न्याय शान्ति का प्रथम न्याय है, जब तक न्याय न आता।
जैसे भी हो भवन शान्ति का, सुदृढ़ नहीं रह पाता ॥

विगत दो विश्व युद्धों तथा चीन-भारत युद्ध, भारत-पाकिस्तान युद्ध, अरब-इजराइल युद्ध, वियतनाम युद्ध आदि में अपार धन तथा जन की हानि हो चुकी है। जिसे सोचकर मानवता आज भी काँप उठती है। अब मानव युद्धों से उब चुका है। अब वह रक्तपात का पक्षधर नहीं है।

भारत देश आदिकाल से ही शान्ति का उपासक रहा है। इसकी तो कामना रही है कि—"सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः........"। महात्मा बुद्ध ने समवन्य की नीति अपनाकर परिस्थितियों को शान्त करने का प्रयास किया। सम्राट अशोक ने हिंसा की ज्वाला में अनेक व्यक्तियों को झुलसा हुआ देखकर, अहिंसा को अपनाकर, शान्ति की उपासना की थी। इन्होंने विश्व-शान्ति के लिए विश्व में शान्ति दूत भेजे थे। अहिंसा और सत्य का अवलम्बन लेकर महात्मा गान्धी ने शान्ति स्वर को अपनाया था। इन्होंने हिंसा करने वालों के प्रति भी उदारता का परिचय दिया क्योंकि शान्ति ही उनकी विभूति थी। कबीर ने भी शान्ति के गीत गाये।

त्याग परोपकार और उदारता भारतीय संस्कृति का प्रमुख गुण है। 'बहुजन हिताय, बहुजन सुखाय' ही उसके स्वर हैं। भारत का ही सिद्धान्त रहा है कि पाप से घृणा करो पापियों से नहीं। 'सत्यमेव जयते' ही भारतीय संस्कृति का नारा है। पं० जवाहर लाल ने कहा था—"मानवीय प्रगति का कार्य हिंसा और घृणा के द्वारा पूरा नहीं हो सकता। विश्व की समस्यायें मित्रता तथा सहकारी प्रयत्नों से ही सुलझ सकती है। अतएव हम संसार के प्रत्येक राष्ट्र और संसार की प्रत्येक जाति की ओर मैत्रीपूर्ण हाथ बढ़ा रहे हैं। संसार के किसी भी देश एवं जाति के प्रति मेरे मन में वैमनस्य नहीं है।"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानवता का सबसे अधिक हनन अस्त्र शस्त्रों के द्वारा ही हुआ है अतः विश्व शान्ति के लिए परमावश्यक है कि अस्त्र-शस्त्रों की होड़ बन्द हो। विश्व के दो महानतम राष्ट्र अमेरिका और रूस शस्त्रों का पर्याप्त भण्डार रखते हुए भी निरस्त्रीकरण तथा परस्पर सहयोग के लिए प्रयत्नशील हैं। परमाणु शक्ति का निर्माण होने पर भी उसका प्रयोग विश्व-शान्ति के कारण ही रूका हुआ है। निरस्त्रीकरण के लिए अस्त्र-शस्त्रों को नष्ट कर देना चाहिए। शक्तिशाली देशों द्वारा अस्त्र-शस्त्रों की बिक्री नहीं करनी चाहिए। क्योंकि इसके द्वारा विश्व शान्ति को खतरा होता है। आज के विद्यार्थी कल के नागरिक होंगे, अतः विद्यार्थियों को शुरू से ही विश्वशान्ति, प्रेम, सहयोग और सद्भावना की शिक्षा देनी चाहिए। जिससे वे भविष्य में इन्हीं सद्गुणों का आचरण करें तथा शान्ति और सहयोग के लिए सदैव अग्रसर रहें।

विज्ञान तकनिकी ज्ञान ने सम्पूर्ण विश्व की दूरी और काल पर विजय प्राप्त कर ली है। सम्पूर्ण संसार के सभी राष्ट्र एक परिवार के समान हो गये हैं। रेडियों, वेतार का तार, वायु-यान, दूरदर्शन आदि के माध्यम से संसार की सभी सभ्यताओं तथा संस्कृतियों का संगम हो रहा है। अनेक राष्ट्रों के व्यक्तियों का सम्मेलन तथा विज्ञान, कला और साहित्य की अन्तर्राष्ट्रीय प्रदर्शनियाँ विश्व शान्ति की दिशा में प्रभावशाली कदम हैं। इन सभी के माध्यम से व्यक्ति एक दूसरे के विचारों, रीति-रिवाजों, सभ्यताओं तथा संस्कृतियों को धीरे-धीरे समझते हुए करीब आ जाते हैं।

इस समय सभी देश शान्ति की स्थायी स्थापना के लिए एक विश्व भाषा तथा मुद्रा की व्यवस्था कर रहे हैं। जिसके माध्यम से एकता की भावना विकसित हो रही है। संयुक्त राष्ट्र संघ इस दिशा में काफी कार्य कर रहा है। यद्यपि स्वार्थी देशों की स्वार्थनीति के कारण विश्व शान्ति में कई बार अवरोध उत्पन्न हुआ। फिर भी प्रयत्न जारी है।

पंचशील के सिद्धान्त जो नेहरू ने सभी देशों के समक्ष सन् १९५५ में रखा था, भारत आज भी उन्हीं सिद्धान्तों का पालन कर रहा है। स्वेज नहर के

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

राष्ट्रीयकरण के झंझट को पं० नेहरू के प्रयत्नों से ही शान्त हुआ था। विश्व में नेहरू नासिर शान्ति दूत के नाम से प्रसिद्ध हुये थे। कई देशों से मैत्री होना, भारत की शान्तिप्रियता का प्रमाण है। संयुक्त राष्ट्रसंघ में विश्वशांति के लिये सबसे उच्च एवं सुरीली आवाज भारत की ही थी। परमाणु परिक्षणों तथा अस्त्र-शस्त्रों का विरोध भारत पहले से ही कर रहा है। विश्वशांति की भावना से ही भारत ने बँगलादेश की सहायता किया था। श्रीमती गान्धी ने चीन तथा पाकिस्तान से समझौता करके विश्व को आश्चर्य चकित कर दिया था और यह सिद्ध किया कि हम शत्रु को भी गले लगाना चाहते हैं।

भारत की नीति उपनिवेशवाद के खिलाफ रही है। दासतावृत्ति का विरोध यह हर स्तर पर करता है। गोवा इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। निग्रो तथा अफ्रीकनों की स्वतन्त्रता का पक्ष लेना भी भारत की शान्तिमय नीति का परिचय देता है। इस प्रकार की नीतियों के पालन में अमेरिका आदि कभी कभी बाधक बनते हैं। परन्तु भारत अपनी संयमनीति से इन बाधाओं को पार कर जाता है। यही कारण है कि ये सभी देश भारत के महत्व को स्वीकार करते हैं। भारत तो सभी के साथ सहृदयता का सम्बन्ध चाहता है। भारत यह सन्देश देता है कि—

"तुम शान्ति नहीं ला पाये युद्धों के द्वारा,
अब फेंक जरा तलवार, प्यार लेकर देखो।
सच मानो निश्चय ही विजय तुम्हारी होगी,
दुश्मन को अपना हृदय जरा देकर देखो॥"

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि भारत विश्वशान्ति का पक्षधर है। आज के इस विषम युग में भी वह इस दिशा में पूर्णतः सफल है। क्योंकि विज्ञान के भयंकर विस्फोटों, पारस्परिक संघर्षों तथा अनावश्यक कलहों से मुक्ति पाने का यही एकमात्र साधन है। हमें आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि भारतवर्ष इस दिशा में शतप्रतिशत सफलता प्राप्त करेगा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

४. भारत-महिमा

हमारे देश का नाम भारतवर्ष है। इसका यह नाम पुराणों की अनुश्रुति के अनुसार ऋषभदेव के ज्येष्ठ पुत्र भरत के नाम पर पड़ा है। कुछ लोग शकुन्तला पुत्र भरत के नाम पर मानते हैं। यह अमरवाणी की उद्‌गम तथा देवताओं की अवतार भूमि है। विद्वानों की ऐसी मान्यता है कि सर्वप्रथम सभ्यता का विकास यहीं पर हुआ था। साहित्य और संस्कृति के विषय में यह अन्य देशों का गुरु रहा है। यहाँ का दर्शन और धर्म अन्य सभी दर्शनों तथा धर्मों का प्रेरणास्रोत है। यहाँ की कला इतिहास में अमरनिधि है। यहाँ प्रकृति साधना तथा कल्पना की जननी है। सही अर्थों में यहाँ की भूमि वसुन्धरा है। इसीलिये इसकी महिमा का गान देवताओं ने भी किया है—
'गायन्ति देवः किल गीतकानि, धन्यास्तु ते भारतभूमि भागे।' (वि०पु०)

यह एशिया महाद्वीप का एक प्रमुख देश हैं। इसका विस्तार उत्तर में हिमालय से दक्षिण में महासागर तक तथा पश्चिम में काठियावाड़ से पूरब में आसाम तक है। यहाँ अनेक प्रकार की जलवायु, वनस्पति, जीव-जन्तु एवं मानवजातियाँ पाई जाती हैं। परन्तु इन अनेकताओं में भी महान एकता है। इस एकता का महान आधार संस्कृत भाषा का प्राचीन वाङ्‌मय है।

प्रकृति का सहज रूप हिमालय पर्वत की अनन्त चोटियाँ हैं, जो प्रकृति देवी का रमणीय क्रीड़ा स्थल है। यह पर्वत भारत के लिए प्रहरी का कार्य करता है, जो साधनों के लिए साधना तथा कवियों के लिए कल्पना भूमि है। यहाँ कैलाश शिखर पर माँ पार्वती, भगवान शिव के साथ निवास करती हैं। यहीं गुफाओं में बैठकर भारतीय मनीषियों ने अमरवाणी का अमृत मथा था। इसी गोंद से गंगा-यमुना आदि अनेक पवित्र नदियाँ निकलकर भारत की भूमि को 'सुजला,' एवं सस्यश्यामला की उपाधियों से विभूषित किया है। काव्य और केशर का देश कहा जाने वाला काश्मीर प्रदेश इसी के अञ्चल में है, जहाँ का प्राकृतिक दृश्य देखने योग्य है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पश्चिमी समुद्र से बंगाल की खाड़ी तक विस्तृत विन्ध्य पर्वत की चोटियाँ हैं, जो मेखला की तरह से इसकी कटि प्रदेश में स्थित होकर उत्तर और दक्षिण की विभाजक रेखा सी बनी हुई है। समतल और उपजाऊ होने से प्रसिद्ध दक्षिण का पठार इसके दक्षिण-पूर्वी तथा पश्चिम भागों में है। इस पठार के पश्चिम और पूर्व में पर्वतों की दो चोटियाँ उत्तर से दक्षिण की ओर चली गई हैं, जिन्हें पूर्वी और पश्चिमी घाट कहते हैं। दक्षिण की सभी नदियाँ पश्चिमी घाट पठारों को सींचती हुई बंगाल की खाड़ी में आ गिरती हैं। पश्चिमीघाट और पश्चिमी सागर के बीच एक पतला सा समुद्र का किनारा है, जो उत्तर में कोंकण से लेकर दक्षिण में केरल तक चला गया है। पानी अधिक बरसने से यहाँ की भूमि हमेशा हरी-भरी रहती है।

सांस्कृतिक एवं साहित्यिक दृष्टि से भी भारतवर्ष का महत्व कम नहीं है। यहाँ की आर्य संस्कृति इतनी उदार एवं महान है कि यवन, शक, हूण, द्रविण आदि अनेक अनार्यो की संस्कृतियाँ इसमें अनायास ही विलीन हो गयीं। यहाँ की सामाजिक व्यवस्था में वर्ण तथा जाति का आधार प्रायः सब स्थानों पर पाया जाता है। सभी जगह सामाजिक रीति-रिवाज साधारणतः एक तरह के पाए जाते हैं। सांस्कृतिक एकता के लिये भाषा एवं साहित्य उच्चतम साधन रहे हैं। हिन्दी, संस्कृत, पालि, प्राकृत आदि भाषायें समूचे देश में समान रूप से आदरणीय हैं। वेद, पुराण, रामायण, गीता, महाभारत, श्रुति, स्मृति, काव्य, नाटक आदि साहित्य सम्पूर्ण देश की अक्षुण निधि हैं। कला के आदर्श भी समान ही हैं। यहाँ सभी लोगों के लिए समान रूप से पाप-नाशक तथा पुण्यदायक एक से बढ़कर एक पावन तीर्थ हैं। जिसमें अयोध्या, द्वारिका, काशी, प्रयाग, काञ्ची, पुरी, अवन्ती, विन्ध्यक्षेत्र, हरिद्वार, ऋषिकेश, बदरीनाथ, रामेश्वरम् आदि विशेष उल्लेखनीय हैं। यहाँ की पावन नदियों में स्नान करने से विविध पापों तथा विविध तापों का नाश होता है।

ऐतिहासिक दृष्टि से भी इस देश का महत्व सराहनीय है। रामायण के राम तथा महाभारत के कृष्ण ऐतिहासिक महापुरुष हैं। महात्मा बुद्ध के बौद्ध धर्म ने भारतीय इतिहास में चार चाँद लगा दिया। यहाँ के अशोक कनिष्क आदि राजा बौद्ध थे। [illegible] कीर्ति में पूर्ण प्रकाश दिये थे।

CC-0 Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इस बौद्ध धर्म के चीन, वर्मा, लंका, जापान, कम्बोडिया आदि अनेक देशों में भारत का मैत्री सम्बन्ध कराया। इसी प्रकार जैन धर्म का भी इतिहास में महत्वपूर्ण स्थान है। गुप्तकाल को भारतीय इतिहास का स्वर्णयुग कहा जाता है इस समय चन्द्रगुप्त, विक्रमादित्य का समुद्रगुप्त राजा थे। इनके समय में महाकवि कालिदास हुए, जिनकी कविता और कल्पना आज भी वेजोड़ है। सातवीं शताब्दी में महाराज हर्ष के समय में वाणभट्ट ने कादम्बरी और हर्षचरित की रचना की। मुसलमान शासकों में अकवर और शाहजहाँ का नाम उल्लेखनीय है। अकवर ने हिन्दू धर्म को पूर्ण प्रश्रय दिया। शाहजहाँ ने कला और साहित्य को प्रोत्साहन दिया। आगरे का ताजमहल और मोती-महल उसकी कीर्ति को अमर कर दिए हैं। अंग्रेजों का शासन भी भारत के लिए अनेक अंशों में सराहनीय रहा है। उनके कारण ही हम अंग्रेजी सीखकर विज्ञान, राजनीति तथा व्यापार के क्षेत्र में आगे बढ़े हैं। संस्कृत के विषय में अंग्रेजों की देन अविस्मरणीय है।

भारतीय स्वतन्त्रता का इतिहास अन्य देशों के स्वतन्त्रता इतिहास से विशिष्ट है। महात्मा गान्धी के नेतृत्व में हिंसाहीन आन्दोलन द्वारा भारतवर्ष ने जो स्वतन्त्रता प्राप्त की, वह अतुलनीय है। इस संग्राम में योद्धाओं में पं० मोतीलाल नेहरू, मदनमोहन मालवीय, लोकमान्य तिलक, सुभाषचन्द्र बोस, सरदार पटेल, जवाहरलाल नेहरू, गोविन्दवल्लभ पंत, राजेन्द्र बाबू आदि असंख्य नेताओं के नाम चिरस्मरणीय हैं। स्वतन्त्रता मिलने के बाद अनेकों योजनाओं के माध्यम से भारत ने जो सर्वाङ्गीण विकास किया है, वह सभी के सामने दिखाई दे रहा है।

इस प्रकार से यह देश अपनी प्राकृतिक, सांस्कृतिक, साहित्यिक तथा ऐतिहासिक परम्पराओं एवं विशेषताओं सहित सम्पूर्ण विश्व में एक अनुठा स्थान रखता है। यह भारतवर्ष हमारी परमादरणीय मातृभूमि है। इसकी सर्वविधि रक्षा के लिए तथा आवश्यकता पड़ने पर प्राणों को न्योछावर तक करने के लिए हम भारतवासियों को सर्वदा सतर्क रहना है। क्योंकि—

'जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी !'

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

५. भारतीय नारी

जीवन रूपी रथ के दो पहिये हैं—एक स्त्री, दूसरा पुरुष। इसलिए आदर्श जीवन यापन में दोनों का समान महत्व है। स्त्रियों को पुरुष की अर्धाङ्गिनी कहा जाता है। शास्त्र विधान के अनुसार बिना स्त्री के पुरुष कोई धार्मिक कार्य करने का अधिकारी नहीं होता। नारी ही हमारी माँ है। श्रद्धा, करुणा, क्षमा, दया आदि अनेकों कोमल भावनाओं की साक्षात् मूर्ति नारी है। कहा भी गया है कि—

"नारी तुम केवल श्रद्धा हो।"

पुराने समय में स्त्रियों का समाज में महत्वपूर्ण स्थान था। वे शिक्षा प्राप्त करती थीं। मैत्रेयी गार्गी आदि स्त्रियों को मन्त्रों का पूर्ण ज्ञान था। मनुस्मृति में लिखा गया है कि—"यत्र नार्यस्तु पूज्यन्ते रमन्ते तत्र देवता।" अर्थात् जहाँ स्त्रियों की पूजा होती है उस जगह देवता गण निवास करते हैं। अतः इससे स्त्रियों के महत्व का अनुमान लगाया जा सकता है।

मध्यकाल में भी स्त्रियों की स्थिति उत्तम थी। महात्मा बुद्ध के समय में अनेकों नारियाँ शिक्षणी थीं। मुसलमानों के शासनकाल में स्त्रियों की स्थिति दयनीय हो गई थी। नारी घरों की चहारदिवारियों के भीतर बन्द रहने लगीं। पर्दा प्रथा, सतीप्रथा, बाल-विवाह आदि कुप्रथाएँ शुरू हो गयीं। परिणामतः नारियों की दशा बिगड़ने लगी। जिससे वे अशिक्षित होकर संकीर्णता का घर होने लगीं।

आधुनिक युग में आकर नारियों की स्थिति में पुनः सुधार हुआ। आज की स्त्रियाँ विदेशी नारी आन्दोलन से प्रभावित होकर स्वतन्त्रता की ओर उन्मुख हैं। धीरे-धीरे उनमें शिक्षा का संचार होने लगा, जिससे व्याप्त कुप्रथाएँ दूर भागने लगीं। अब नारियाँ धीरे-धीरे सार्वजनिक जीवन में भी प्रवेश करने लगी हैं। जिसके फलस्वरूप वे विधायक, सांसद, मंत्री, प्रधानमंत्री आदि पदों से अलंकृत होने लगी हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पुरुषों की अपेक्षा स्त्रियाँ अधिक उत्साह सम्पन्न होती हैं। माँ, पत्नी तथा गृहलक्ष्मी के रूप में भारतवासी उन्हें उच्च स्थान प्रदान करते हैं। भारतीय नारियाँ त्याग, तपस्या तथा वात्सल्य की प्रतिमा हैं। हमारे यहाँ स्त्रियाँ केवल सन्तानोत्पत्ति अथवा भोग विलास के लिए ही नहीं है बल्कि पत्नी के रूप में भारतीय नारियों का रूप धार्मिक एवं आत्मिक भी है। हिन्दू नारी का सम्मान वासना की पृष्ठभूमि से ऊपर उठाकर पवित्र धर्मलोग में प्रतिष्ठित किया गया है।

प्राचीनकाल के महर्षियों ने जहाँ स्त्रियों के गुणों की प्रशंसा की है, वहीं इनमें रहने वाले दोषों का भी संकेत किया है। इसी कारण से इन्हें स्वतन्त्र न रहने के लिए आदेश दिया है। यथा—

"पिता रक्षति कौमारे भर्त्ता रक्षति यौवने।
पुत्रो रक्षति वार्धक्ये न स्त्री स्वातन्त्र्यमर्हति॥"

ऐसा इसलिए किया गया है कि स्त्रियाँ स्वभाव से ही अत्यन्त चञ्चल हुआ करती हैं, कहीं वे पथ विचलित न हो जायँ। आज की नारी यदि उक्त ऋषि वचन की उपेक्षा कर स्वतन्त्र हो विचरण कर रही हैं तो यह उनकी भयंकर भूल है।

पाश्चात्य सभ्यता की जगमगाहट में आज की स्त्रियाँ पुरुषों के समान अधिकार की लालची बन गयी हैं। उन्हें यह नहीं मालूम है कि पुरुष और स्त्री की प्रकृति में मौलिक अन्तर है जिसके कारण दोनों के कार्यक्षेत्र अलग-अलग हैं। एक दूसरे के स्थान को ग्रहण कर जीवन को आनन्दमय नहीं बनाया जा सकता है। वास्तव में जीवन सुखमय तभी हो सकता है जब दोनों अपनी नियत सीमा में रहेंगे। भारतीय दाम्पत्य जीवन की यही मधुरिमापूर्ण आदर्श है कि पत्नी अपने पति का अनुसरण करे पति अपनी पत्नी को गृहलक्ष्मी स्वीकार कर स्नेह एवं आदर दें।

आज का नारीसमाज उक्त प्राचीन परम्पराओं का पूर्णरूपेण विरोधी हो गया है। इस समय ये पुरुषों की होड़ में मदमस्त हैं। विवाह के प्रति उनका

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वरूप बदलता जा रहा है। ये विवाह संस्कार के महत्व को भूलती जा रही हैं। इस पवित्र एवं दृढ़ बन्धन को तोड़ना उनके बाँयें हाँथ का खेल सा हो गया है। इस सम्बन्ध के विषय में लौकिक दृष्टिकोण अपनाती हैं। उनको यह मालूम नहीं कि हमारे यहाँ विवाह संस्कार का पारलौकिक महत्व अधिक हैं। विवाह का अर्थ वे भोग मात्र समझती हैं। क्या भोग वासना से किसी को शान्ति मिली है ? भोग अनन्त होने के कारण इनसे तृप्ति कथमपि सम्भव नहीं है। तृप्ति तो संयम और नियमित जीवन से प्राप्त होने वाली हैं।

शिक्षा के क्षेत्र में आज स्त्रियाँ प्रगति पर हैं, परन्तु प्राचीनकाल में उनके लिए जैंसी शिक्षा थी वैंसी आज नहीं। कुछ लोग स्त्री शिक्षा का विरोध करते हुए तर्क देते हैं कि शिक्षित स्त्रियों में पाश्चात्य सभ्यता की छाप पड़ जाती हैं, जिससे पारिवारिक जीवन में कटुता आ जाती हैं। यह बात सत्य भी हैं। क्योंकि वर्तमान शिक्षा प्रणाली स्त्रियों के लिए उचित नहीं हैं। इन्हें भारतीय शिक्षा में शिक्षित करना चाहिए। अर्थात् इनको अधिक अंग्रेजी न पढ़ाकर संस्कृत पढ़ाने पर जोर देना चाहिए। क्योंकि संस्कृत के अध्ययन से उनके उदार धार्मिक भावना जागृत होगी जिससे वे घर की लक्ष्मी बनकर परिवार में आपसी प्रेम तथा सहानुभूति का वातावरण पैदा करेंगी। अनुसूया, सीता तथा सावित्री आदि पतिव्रता एवं आदर्श नारियों का जीवन चरित्र पढ़कर उनके समान ही अपना जीवन बनाने का प्रयास करेंगी। नारियों के लिए इसी प्रकार की शिक्षा की जरूरत है, उन्हें आज की दोषपूर्ण शिक्षा में शिक्षित करने से पतन ही सम्भव हैं। उनकी शिक्षा इस प्रकार की हो कि वे एक आदर्श माँ बनें।

भारतीय सभ्यता में नारी का पतिव्रता धर्म अन्य सभी धर्मों से महान माना गया है। इसके पालन से लौकिक और पारलौकिक दोनों प्रकार के सुखों की प्राप्ति होती है। वर्तमान में शान्ति तथा भविष्य में समृद्धि इसी से मिलती हैं। यद्यपि अपने अज्ञान के कारण आज का युग इसका विरोधी है। परन्तु सत्य, करुणा, दया तथा ब्रह्मचर्य आदि गुणों के बिना समाज को सन्मार्ग

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पर नहीं लाया जा सकता। अतः नारी को अपने प्राचीन आदर्शों को ध्यान में रखते हुए पतिव्रत धर्म का पालन करना चाहिए।

हमारी भारतीय संस्कृति में नारी का आदर्श अत्यन्त ऊँचा है। वह नारी ममता प्रेम तथा स्नेह की प्रतिमूर्ति हैं। वह मानव के आदर्श जीवन के लिए रस हैं तथा अमृत और प्राण है।

६. भारतीय ग्राम

हमारे देश भारतवर्ष में लगभग अस्सी प्रतिशत लोग गाँवों में रहते हैं, इसी कारण इसे गाँवों का देश कहा जा सकता है। शहरों में रहने वाले अधिकतर लोग गाँव के ही मूल निवासी हैं। व्यापार या नौकरी के उद्देश्य से शहरों में रहने लगे हैं, वास्तव में वे गाँव से सन्बन्धित हैं। अतः यह कहना कि हमारा भारत गाँवों में रहता है, अतिशयोक्ति नहीं है। इसलिए गाँवों का सुधार और उत्थान ही वास्तविक भारत का सुधार और उत्थान है।

पुराने समय के गाँव और इस समय के गाँव में पर्याप्त अन्तर आ गया है। पहले गाँव वाले बहुत सीधे-साधे ईर्ष्या द्वेष तथा छल-कपट से बहुत दूर थे। वे परिश्रमी होते थे। किसी कार्य को करने में उन्हें लेशमात्र भी आलस्य नहीं होता था। विलासिता पूर्ण जीवन तथा राजनीति से वे लोग कोसों दूर रहते थे। अशिक्षित होने पर भी शिक्षा का अभाव उन्हें खटकता नहीं था, क्यों कि वे लोग आपस में एक दूसरे से प्रेम करते थे। वे अपनी कठिन तपस्या से सभी लोगों के भोजन के लिए भरपूर अन्न पैदा करते थे। शास्त्रों में वर्णित गृहस्थाश्रम के अनुकूल वे आचरण सम्पन्न थे। अतिथि, ब्राह्मण तथा गायों की सेवा करना उनका सहज धर्म था। साधु-महात्माओं का वे खुले दिल से आदर करते थे, उन्हें आवश्यकतानुसार अन्न-वस्त्र प्रदान कर अपना जीवन सार्थक मानते थे। गृहस्थ के लिए अतिथि सेवा का बड़ा महत्व था। अनेकों धार्मिक

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानते थे। गृहस्थ के लिए अतिथि सेवा का बड़ा महत्व था। अनेकों धार्मिक कार्यों में उनकी प्रवृत्ति थी। इन्हीं सब कारणों से कभी किसी प्रकार की परेशानी नहीं होती थी, वे लोग सर्वथा सुखी थे।

समय के परिवर्तन के साथ शहरों की जगमगाहट गाँवों तक फैल गयी। निष्ठुर ठगों के समान राजनीतिक छल प्रपंच भोले-भाले गाँव वालों को भी ठगना शुरू कर दिया। जिससे विलासिता का बोलबाला हो गया। ग्रामीणों का पवित्र एवं सात्विक जीवन आपसी खीचातानी के कारण मलीन हो गया। ईश्वर के विषय में सन्देह किया जाने लगा। यज्ञ आदि धार्मिक कार्यों का नाम लेना भी पाप हो गया। इसी कारण से अब उन्हें अनेकों दैवी आपदाओं का सामना करना पड़ रहा है। आये दिन बाढ़, अकाल, अवर्षण आदि प्रकोप हो रहे हैं। पहले की अपेक्षा आज गावों का जीवन दुःखदायी हो गया है। उसको पहले की स्थिति में लाने के लिए सरकार भगीरथ प्रयत्न कर रही है। इस समय गाँवों के विकास के लिए हितकर योजनायें चलायी जा रही हैं। निकट भविष्य में फिर से गाँव अपनी पुरानी प्रतिष्ठा प्राप्त करने में सफल होगा।

पहले गाँवों में शिक्षा व्यवस्था कम थी। इसको दूर करने का महत्वपूर्ण प्रयास सरकार द्वारा किया जा रहा है। आज ऐसा ही कोई गाँव होगा जहाँ प्रारम्भिक शिक्षा की व्यवस्था न हो। गाँव के लोगों को साक्षर करने के लिए प्रौढ़ शिक्षा की योजना चल रही है। अनेकों गाँवों में पुस्तकालय तथा वाचनालय की व्यवस्था हो गई है। इसमें साहित्यिक तथा सांस्कृतिक पुस्तकें सरकार द्वारा दी जाती हैं। कहीं-कहीं सरकार के माध्यम से गाँवों में पत्र-पत्रिकाएँ तथा रेडियों की भी व्यवस्था की गई है। इसमें हम ग्रामवासियों का परम पुनीत कर्त्तव्य होता है कि सरकार द्वारा प्राप्त सुविधाओं का लाभ उठाकर गाँव को सुरक्षित तथा सुसंस्कृत बनाने में सरकार की पूरी मदद करें। सरकारी योजना का दुरुपयोग न हों, इसके लिए सरकार को सचेष्ट होना चाहिए। जिससे वास्तविक उद्देश्य की प्राप्ति सुलभ हो सके।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पुराने समय में संस्कृत शिक्षा का पूर्ण प्रबन्ध था। सब जगह संस्कृत की पाठशालाएँ थी। संस्कृत के विद्वानों का सर्वत्र सम्मान था। विद्यार्थी संस्कृत पढ़ने में अपना गौरव मानता था। वहीं निःशुल्क शिक्षा की व्यवस्था थी। गुरुजन वृन्द भी त्यागी तथा अध्यापनानुरागी थे। गरीब विद्यार्थी को आर्थिक सहायता देना धनियों का गौरव था। लोगों में धर्म के प्रति पूर्ण आस्था थी। पूरे समाज में धार्मिक एवं सांस्कृतिक वातावरण बना हुआ था।

आज गाँवों में संस्कृतज्ञों का अभाव हो गया है। पहले जो पाठशालायें गाँव-गाँव में थी, अब दो-चार कहीं रह गई हैं। गाँवों का वास्तविक सुधार तभी सम्भव है जब वहाँ पर संस्कृत शिक्षा की समुचित व्यवस्था होगी। हमारा भारत गाँवों में ही रहता है तथा संस्कृति का मूल्य स्रोत संस्कृत है। अतः भारतीय गाँवों को संस्कृतमय बनाना अत्यन्त आवश्यक हो गया है। ऐसा सम्भव होने पर ही हमारे राष्ट्र का वास्तविक विकास संभव हो सकेगा।

पुराने समय में गाँवों में रहने वाला व्यक्ति पूर्ण स्वस्थ होता था, क्योंकि गाँवों की हवा शुद्ध होती थी। आज भी शहर की अपेक्षा यहाँ का वातावरण ठीक ही है। परन्तु गाँवों में गरीबी है, अधिकांश लोगों को भोजन समुचित ढंग से नहीं मिल पाता है। ऐसी दशा में उनका स्वास्थ बिगड़ता जाता है। गाँवों की गरीबी दूर करने के लिए आज सरकार प्रयत्नशील है। सरकार द्वारा कई योजनायें चलायी जा रही हैं।

गाँव के लोग स्वच्छ नहीं रह पाते हैं क्योंकि उनका कार्य ही ऐसा है कि वे हमेशा उसी में लीन रहते हैं। उनको चाहिए कि वे अपने शरीर वस्त्र तथा निवास स्थान को साफ रखें। स्वतः अपना विकास करने के लिए उन्हें सचेष्ट होने की आवश्यकता है। स्वतन्त्रता के बाद गाँवों में विकास की जो प्रगति हुई है और हो रही है, उसको देखकर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि शीघ्र ही निकट भविष्य में भारतीय ग्राम उन्नति के ऊँचे स्थान पर पहुँच जायेंगे।

गाँव और शहर दोनों में चोली दामन का सम्बन्ध है। बहुत शीघ्र ही गाँवों में शहर का साक्षात् अनुभव होगा। हम लोगों को दोनों में समान दृष्टि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

रखकर विभेद की भावना का समूल नाश करना होगा, तभी हमारे गांवों की उन्नति हो सकती है। कहा गया है कि—

"परस्पर भावयन्तः श्रेयः परमवाप्स्यथ"

अर्थात् जब तक ग्रामीण तथा नागरिक एक दूसरे से मिलकर प्रेमपूर्वक नहीं रहेंगे, तब तक देश का सांस्कृतिक और सामाजिक उत्थान असंभव है।

६. गंगा-गरिमा

भारतवर्ष में ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो गंगा जी का नाम न सुना हो? ये भारत माँ के वक्षस्थल पर हार की भाँति सुशोभित हैं। गंगा जी हमारे देश की सबसे अधिक पावन नदी हैं। भारत ही नहीं अपितु विश्व की हर छोटी बड़ी नदियों में परम पवित्र राजरानी के समान शोभायमान हैं। अन्य नदियां केवल ऐहिक इच्छाओं को पूरा करने वाली, भौतिक सुख के साधनों की जननी तथा प्राकृतिक सौन्दर्य के कारण मानसिक दायिनी हैं, परन्तु गंगा तो हिन्दुओं के लिए माता सदृश हैं। ऐह्िक सुख साधनों के साथ ही पारलौकिक निःश्रेयस को देने वाली हैं। इस पृथ्वी पर बहती हुई वे स्वर्गलोक की नदी हैं। इसी कारण इस लोक में रहकर भी वे परलोक की चिन्ता को दूर करने वाली हैं। किसी कवि की उक्ति है—

"नमामि गंगे तव पाद पंकजं सुरासुरैर्वन्दितदिव्यरूपम्।
भुक्ति च मुक्ति च ददासिनित्यं भावानुसारेण सदा नराणाम्॥"

गंगा ने अपनी परम पवित्रता और अलौकिक गुणों से भारतीय वाङ्मय को आदिकाल से प्रभावित किया है। वेद, पुराण, रामायण तथा महाभारत में उनकी महिमा का सविस्तार वर्णन किया गया है। बाद के कवियों ने भी गंगा की स्तुति की हैं। गंगा लहरी उसमें सर्वश्रेष्ठ हैं, जिसको पण्डितराज जगन्नाथ ने लिखा है। हिन्दी कवियों में जगन्नाथदास, रत्नाकर पद्मकर तथा भारतेन्दु जी की गंगा विषयक रचनायें प्रसिद्ध हैं। मुसलमान कवि रसखान ने भी गंगा जी के महिमा का गान किया है। उनकी एक सवैया निम्नलिखित हैं—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"बैद की औषधि खाऊँ कछू न करौ व्रत संजम री सुख मोसे।
तेरो इ पापी पियौं रसखानि सजीवनी लाभ लहौं सुख तोसे॥
ऐरी। सुधामयी भागीरथी। कौऊ पथ्य कुपथ्य करै तऽपोसे।
आँक धतूरे चबात फिरैं विष खात फिरैं शिव तोरे भरोसे॥"

भगवान शंकर की मृत्युञ्जयता में भागीरथी के सहारे देखने वाले रसखान के अलावा अनेकों मुसलमान कवि हैं। जिसमें रहीम, मीर, ता आदि की गंगा विषयक कवितायें भी हृदय को आह्लादित करने वाली हैं।

गंगा जी के कई नाम हैं; सभी नामों की उत्पत्ति का विशेष कारण है जैसे राजा भगीरथ के द्वारा पृथ्वी पर लाने से इनका नाम भागीरथी पड़ इसकी विस्तृत कहानी वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड में है। जह्नु मुनि आश्रम में निवास करने के कारण इनका नाम जाह्नवी पड़ा। स्वर्ग से आ पर यहाँ इनकी तीन धारायें हुई, इससे इनका नाम त्रिपथगा पड़ा। इस प्रकार हिमालय से निकलने के कारण हेमवती तथा शंकर जी के जटा में रह के कारण शैलसुतासपत्नी कहलाती हैं।

गंगा जी हिमालय पर्वत के गंगोत्री नामक स्थान से निकलकर हरिद्वा कानपुर, प्रयाग, पटना तथा कलकत्ता होती हुई बंगाल की खाड़ी के गंगासाग नामक स्थान पर समुद्र में विलीन हो जाती हैं। इसमें हरिद्वार, प्रयाग त वाराणसी का विशेष महत्व है। हरिद्वार में गंगाजल स्वच्छ एवं अधिक स्वा पूर्ण है। यहाँ स्नार्थियों की भीड़ लगी रहती है। 'जय गंगे' की आवाज दिशायें मुखरित होकर आकाश गूंज उठता है। अतः ठीक ही कहा ग है कि—

'गंगा गङ्गेति ब्रूयात योजनानां शतैरपि।
मुञ्चते सर्व पापेभ्यः विष्णु लोकं गतस्तदा॥'

यहाँ गंगा जी के किनारे की प्राकृतिक छटा दर्शनीय है। प्रयाग में आक वह परम पावनी गंगा-यमुना तथा सरस्वती से मिलकर त्रिवेणी के रूप

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बदल गयीं हैं। त्रिवेणी में स्नान करने का बड़ा महत्व बताया गया है। माघ के महीने में स्नानार्थियों का यहाँ पर जमघट लगा रहता है। इस त्रिवेणी संगम के कारण ही प्रयाग को तीर्थराज कहा जाता है। वाराणसी का दृश्य इन सभी से मनोरम है। यहाँ पर गंगाजी भगवान शिव के त्रिशूल पर बसी हुई इस पावन पुरी का चरण स्पर्श करती हुई प्रतीत होती है। वैसे तो यहाँ पर सैकड़ों घाट हैं, परन्तु अस्सी, हरिश्चन्द्र, दशाश्वमेध, मणिकर्णिका तथा पञ्च-गंगा का विशेष महत्व है। यहाँ पर गंगा जी के किनारे बनी सीढ़ियाँ ऐसा दृश्य उपस्थित करती हैं मानों स्वर्ग की सीढ़ियाँ हैं। यहाँ भी प्रतिदिन स्नान करने वालों की भीड़ लगी रहती है। काशी में भगवान शिव और गंगा जी का योग सोने में सुगन्ध जैसा काम करता है।

गंगा के किनारे पर स्थित अनेक स्थानों पर विशेष पर्वों के समय विशाल मेले लगते हैं। कुम्भ तथा अर्ध कुम्भ के समय हरिद्वार तथा प्रयाग का विशाल मेला देखकर गंगा जी की महिमा का अनुमान लगाया जा सकता है। लाखों की संख्या में श्रद्धालु भक्त उपस्थित होकर ऐहिक तथा पारलौकिक आनन्द की प्राप्ति करते हैं। साथ ही अपने मानव जीवन को सफल बनाते हैं।

अन्य जलों की अपेक्षा गंगा जल की यह विशेषता है कि किसी पात्र में रखने पर चिरकाल तक विकृत नहीं होता है। इसी कारण से वैज्ञानिकों ने भी गंगा जल की भूरि-भूरि प्रसंशा की है। इसमें रोगाणुओं को नष्ट करने की क्षमता है। इसके पान करने तथा इसमें स्नान करने से नाना प्रकार की बीमारियाँ दूर हो जाती हैं। चर्म रोग के लिए तो यह अपूर्व औषधि है। अतः ठीक ही कहा है कि—'औषधं जान्हवीतोयम्।'' अर्थात् गंगा जल औषधि है। अतः इसका महत्व अन्य जलों से बढ़कर है।

गंगाजी किसानों तथा व्यापारियों के लिए सहायक हैं। गंगाजी के किनारे रहने वाले किसान अधिक सुखी हैं। क्योंकि गंगा जल से सींची हुई जमीन अधिक उपजाऊ होती है। यहाँ पर जल की कभी कमी नहीं पड़ती है। व्यापारी लोग गंगा जी में नौका द्वारा व्यापार करके अधिक लाभ पाते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

प्राचीनकाल में इस प्रकार का अधिक महत्व था। इसके अतिरिक्त गंगा जी से निकली हुई नहरें भी देश को हरा भरा बनाती हैं। हरिद्वार से कानपुर तक एक नहर निकलती है जो भूमि को उपजाऊ बनाती है। इस समय गंगा जी के जल से बिजली भी पैदा की जा रही है। बिजली की उपयोगिता को हम लोग अच्छी तरह से जानते हैं, जो मानव के विकास में सहायक है।

गंगा जी हम लोगों के लिए स्वर्ग के वरदान के समान हैं। हम पापनशावनी पावनी गंगा के उपकारों से उऋण नहीं हो सकते हैं। अग्नि, वायु, सूर्य, चन्द्र तथा हिमालय की भाँति गंगा के बिना भारतवर्ष के कल्याण की कल्पना नहीं की जा सकती है। जगत पावनी गंगा की उत्तम सेवा करने से ही प्राणी सुखी एवं समृद्ध हो सकता है। हम लोगों को यही प्रार्थना करनी चाहिए कि हे गंगे!—

"त्वत्तीरे बसतस्त्वदम्बु पिबतः त्वद्वीचिषु प्रेङ्खतः।
त्वन्नाम स्मरतस्त्वदर्पित दृशः स्यान्मे शरीरव्ययः॥"

८. वाराणसी

भगवती भागीरथी के सुरम्य तट पर बसी हुई वाराणसी नगरी एक विशिष्ट नगर पावन तीर्थ स्थल है। रामायण, पुराण, इतिहास तथा दार्शनिक ग्रन्थों और काव्यों में वाराणसी नगरी का अत्यन्त ही महत्वपूर्ण स्थान है। वरुणा तथा अस्सी के मध्य भाग में स्थित होने के कारण ही काशी भी कहते हैं। पौराणिक कथाओं के अनुसार शंकर जी के त्रिशूल पर बसी हुई काशी नगरी तीनों लोकों से न्यारी है। यह नगरी शिवजी को अत्यन्त प्रिय है, अतः वे इसे कभी नहीं छोड़ते इसीलिये इसको अविमुक्त वाराणसी क्षेत्र भी कहते हैं। यह उत्तर वाहिनी गंगा से सम्पृक्त है। ऐसा लगता है कि इस पावन नगरी की महिमा से प्रभावित होकर गंगा जी इसके चरणों में झुकी हुई हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इस पवित्र नगरी की एक विशिष्ट ऐतिहासिक एवं सांस्कृतिक परम्परा है। महाभारत के काशीराज की राजधानी यहीं थी। श्रीकृष्ण तथा सुदामा के गुरु सादीपनि का घर यहीं था। राजा हरिश्चन्द्र ने यहीं पर सत्य की परीक्षा में सफल हुए थे। महात्मा बुद्ध ने सारनाथ में ही अपना प्रथम धर्मोपदेश किया था। अद्वैत मत के स्थापक भगवान शंकराचार्य, शुद्धाद्वैत के प्रवर्तक बल्लभाचार्य तथा विशिष्ट द्वैत मत के प्रवर्तक रामानुजाचार्य ने यहाँ रहकर अपने-अपने मतों का प्रचार एवं प्रसार किया था। सन्त कबीर की जन्म भूमि तथा भक्त कवि तुलसीदास की साधना भूमि यही नगरी है। सनातन धर्म के स्तम्भ करपात्री जी महराज यहीं पर धर्म संघ में रहते थे।

शास्त्रों की ऐसी मान्यता है कि काशी में मरने से मुक्ति मिलती है। "काश्यां मरणान्मुक्तिः"। इसी कारण से बहुत से लोग अपने अन्तिम समय में यहीं आकर वास करते हैं। महाकवि तुलसीदास जी ने लिखा है कि—

भुक्ति मुक्ति महि जानि, ज्ञान खानी अघ हानिकर।
जहँ बस सम्भु भवानि, सो काशी सेइय कस न॥

इस अपार संसार में चार ही वस्तुयें सार हैं, जिसमें काशीवास प्रथम है। बाकी अन्य वस्तुयें भी यहाँ उपलब्ध हैं।

असारे खलु संसारे सारमेतच्चतुष्टयम्।
काश्यां वासः, सतां संगः, गंगाम्भः शिवपूजनम्॥

ऐसा कहा जाता है कि जब कोई जीव यहाँ मरने लगता है तो उसे माता आँचल से ढक कर चैतन्य रखती हैं तथा भगवान शिव उसके दाहिने कान से तारक मन्त्र का उपदेश करते हैं जिससे उसे आत्मज्ञान हो जाता है और आत्मज्ञान होने से जीव की मुक्ति होना स्वाभाविक ही है।

यहाँ पर भगवान विश्वनाथ, भगवती अन्नपूर्णा के साथ स्वयं विराजमान हैं। यहाँ की यह विशेषता है कि माँ अन्नपूर्णा की कृपा से यहाँ कोई भूखा नहीं रहता है। यहाँ विश्वनाथ जी का मन्दिर स्वर्ण निर्मित है। इसके अतिरिक्त यहाँ पर केदार जी, मृत्युञ्जय महादेव, कालभैरव, बटुक-भैरव, साक्षी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विनायक, दुर्गा जी, संकठा जी, संकट-मोचन, मानस-मन्दिर आदि दर्शनीय स्थान है। शास्त्रों में ऐसा वर्णन है कि यहाँ सभी देवता किसी न किसी रूप में विराजमान हैं। यहाँ के निवासी के लिए कहीं अन्य तीर्थ में जाने की आवश्यकता नहीं होती है।

यहाँ पर भागीरथी के तटवर्ती घाटों की छवि निराली है। अस्सी घाट से लेकर राजघाट तक सैकड़ों घाट सुशोभित हैं। इन घाटों की भी ऐतिहासिक एवं धार्मिक महिमा है। इन घाटों की सीढ़ियाँ ऐसी बनी हैं मानों स्वर्ग की सीढ़ियाँ हों। पर्व एवं उत्सवों पर नर-नारी स्नान करते हैं। हिन्दी के प्रसिद्ध कवि भारतेन्दु जी ने इन घाटों का सजीव चित्रण इस प्रकार किया है—

कहूँ बँधे नवघाट उच्च गिरिवर सम सोहत।
कहुँ छतरी कहुँ मढ़ी बढ़ी मन मोहत जोहत।
धवल धाम चहुँ ओर फहरत छुजा पताका।
घहरत घंटा-धुनि जमकत धौंसा करि साका।
मधुरी नौबत बजत कहूँ नारी नर गावत।
वेद पढ़त कहुँ द्विज कहुँ जोगी ध्यान लगावत।

धार्मिक महत्व के साथ-साथ वाराणसी का शैक्षणिक वातावरण भी निराला है। काशी को विद्या की विश्वविख्यात राजधानी कहा गया है। भारत में यही एक ऐसा नगर है जहाँ पर तीन-तीन विश्वविद्यालय हैं और तीनों की अपनी-अपनी अलग विशेषतायें हैं। महामना द्वारा स्थापित काशी हिन्दू विश्वविद्यालय एक अद्वितीय है। यहाँ पर लगभग दस हजार से भी अधिक विद्यार्थी विभिन्न विषयों का अध्ययन करते हैं। सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय भी अपने ढंग का अनोखा है। इसकी शाखायें भारतवर्ष के कई प्रदेशों में फैली हुई हैं। पूर्वस्थित राजकीय संस्कृत विद्यालय को तत्कालीन मुख्यमन्त्री डॉ० सम्पूर्णानन्द जी ने इसे वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय का रूप दिया। इसलिए उनकी स्मृति में इसका नाम सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्व-विद्यालय रखा गया। यहाँ संस्कृत भाषा के माध्यम से शिक्षा की व्यवस्था

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

है। तीसरा विश्वविद्यालय काशी विद्यापीठ है। इसकी स्थापना शिवप्रसाद गुप्त, भगवानदास तथा महात्मा गान्धी के सत्प्रयास से की गई थी। यहाँ से स्वतन्त्रता प्राप्ति हेतु आन्दोलन भी चलाया जाता था। इस विश्वविद्यालय ने स्वतन्त्रता संग्राम सेनानियों को तैयार किया। इसलिए इसका भी महत्व-पूर्ण स्थान है। इसके अलावा यहाँ अनगिनत शिक्षण संस्थाएँ है। काशी की 'नागरी प्रचारिणी सभा' हिन्दी के उत्थान में लगी हुई है।

विद्या की राजधानी होने के नाते यहाँ पर अनेकों विशिष्ट विद्वान् निवास करते हैं। बहुत से विदेशी छात्र, नागरिक तथा विद्वान् अनेकों विद्याओं को पढ़ने यहाँ आते हैं। वाराणसी विद्वानों, तपस्वियों, ज्योतिषियों तथा तान्त्रिकों की खान है। यहाँ वेद के प्रत्येक शाखा प्रशाखा के विद्वान् उपलब्ध हैं। संगीत शास्त्र के विशिष्ट कलाकार अपनी कला से लोगों को मुग्ध करते हैं। यहाँ पर संस्कृत भाषा के अनेक उद्भट विद्वान् पैदा हो चुके हैं। आधुनिक हिन्दी के जन्मदाता भारतेन्दु हरिश्चन्द्र, छायावाद के प्रवर्तक जयशंकरप्रसाद, आचार्य रामचन्द्र शुक्ल तथा मुन्शी प्रेमचन्द जी आदि हिन्दी के विद्वान् इसी भूमि की उपज हैं।

इस प्रकार वाराणसी नगरी एक परम पावन तीर्थ, विद्याओं की राजधानी साधकों की साधना भूमि तथा मरने पर अनायास ही मोक्ष प्रदान करने वाली भारत की सांस्कृतिक नगरी है। यह आध्यात्मिकता के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध नगरी है। इसी प्रकाशित नगरी के प्रकाश से सम्पूर्ण भारत प्रकाशमान होता है।

९. आदिकाव्य रामायण

संस्कृत साहित्य में महर्षि वाल्मीकि द्वारा रचित रामायण आदिकाव्य के महत्व को प्राप्त किया है। महर्षि वाल्मीकि आदि कवि माने जाते हैं। एक प्रसिद्ध कथा है कि सज्जनों और भक्तों में श्रेष्ठ देवर्षि नारद से महर्षि ने एक बार प्रश्न किया था। महर्षि वाल्मीकि जी का वह प्रश्न यह था कि—भगवन्!

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सम्पूर्ण विश्व में वह कौन ऐसा व्यक्ति है, जो बलवान्, अनुपम गुणवान् सत्यवक्ता, कृतज्ञ, धर्मज्ञ और दृढ़व्रती है ? ऐसा कौन सा महापुरुष है जो द्वेष ईर्ष्या आदि दुर्गुणों से रहित तथा निपुणता विद्वत्ता तथा सच्चरित्रता आदि गुणों से विभूषित हो ? और ऐसा सामर्थ्यशाली कौन है, जिसके युद्ध स्थल में क्रोधित होने पर देवता भी भयभीत हो जाते हो ? आप जैसे समदर्शी देवर्षि के मुखारविन्द से उक्त आदर्श पुरुष की जीवन वृत्तान्त सुनने की मेरी बड़ी ही उत्कट अभिलाषा है।

देवर्षि नारद ने कहा—मुनि श्रेष्ठ ! जहाँ तक मुझे मालूम है, इक्ष्वाकु कुल में उत्पन्न जगविख्यात रामचन्द्र जी ही एकमात्र ऐसे आदर्श पुरुष हैं, जिनमें उक्त सभी गुण एकत्र मिलते हैं। मैं उनकी कुछ विशेषताएँ बताता हूँ ध्यान लगाकर सुनने का कष्ट करो।

श्री रामचन्द्र जी सभी शुभ लक्षणों से युक्त, बलशाली, तेजस्वी, सुन्दर तथा अच्छे स्वभाव वाले हैं। प्रकृति से शान्त, सरल तथा सुकोमल हैं। वे अत्यन्त ही सहृदय, विनम्र एवं उदार हैं। उनके चित्त में किसी के प्रति भी दुर्भाव नहीं है लोककल्याणार्थं वे महान् से महान् त्याग करने के लिए सदैव ही उद्यत रहते हैं। किसी भी परिस्थिति में वे लोक धर्म की मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते हैं। विद्या तथा बुद्धि में भी उनकी सर्वमान्यता निर्विवाद है। जिस दृष्टि से भी देखा जाय, रामचन्द्र जी एक आदर्श मानव, नेता और पूर्ण पुरुष प्रतीत होते हैं। निष्कर्ष रूप में यह समझिये कि वे गम्भीरता में समुद्र के समान तथा सत्य-पालन में दूसरे सत्य के समान हैं। ऐसे मर्यादा-पुरुषोत्तम का परिचय उनके जीवन-चरित्र से ही मिल सकता है। इसके बाद नारद जी ने संक्षेप में ही राम का पूरा जीवन चरित्र सुनाया, जो वाल्मीकि रामायण के बालकाण्ड के पहले सर्ग में संगृहित है। इसे ही 'मूल रामायण' के नाम से जाना जाता है।

कथा कहकर देवर्षि नारद के चले जाने पर महर्षि वाल्मीकि ने अपने प्रमुख शिष्य भारद्वाज के साथ तमसा नदी के तट पर चले जाते हैं। तट के समीप

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ही स्थित वन का दृश्य मनोरम था। वाल्मीकि जी उसे देखने में तल्लीन थे। वहां वे देखते हैं कि क्रौञ्च पक्षी का एक जोड़ा आनन्दपूर्वक विहार कर रहा था। उस पक्षी के जोड़े पर अचानक एक बहेलियाँ ने तीर चला दिया। नर पक्षी तीर से घायल होकर गिर पड़ता है। अनाथिनी क्रौञ्ची अपने जीवन साथी की वह दयनीय दशा देखकर अत्यन्त ही करुण स्वर में विलाप करने लगी। उसकी दयनीय दशा को देखकर महर्षि वाल्मीकि का कोमल हृदय द्रवित हो गया। उनके मुखारविन्द से यह शोक श्लोक के रूप में निकल पड़ा–

मा निषाद ! प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत्क्रौञ्चमिथुनादेकवमधीः काममोहितम् ॥

अर्थात् हे निषाद। तुमने काम से मोहित इस क्रौञ्च पक्षी को मारा है, अतः तुम सदा के लिए प्रतिष्ठा प्राप्त न करो।

इस छन्दोमयी रचना को सुनकर ब्रह्मा जी स्वयं वहाँ आकर वाल्मीकि जी से बोले—इस छन्दोमयी वाणी से रामचन्द्र जी के चरित्र को लिख डालो। इसके बाद वाल्मीकि जी ने ब्रह्मा जी के आज्ञा का पालन करते हुए, श्रीराम जी के जीवन-चरित की जो संक्षिप्त कथा देवर्षि नारद के मुखारविन्द से सुने थे, उसी का काव्यात्मक ढंग से विस्तार कर डाला। परिणामस्वरूप रामायण की रचना हो गयी। लौकिक संस्कृत साहित्य की रामायण ही प्रथम छन्दोबद्ध सरस रचना हैं। इसीलिए इसे आदिकाव्य का गौरव प्राप्त है। रामायण में कुल सात काण्ड हैं—(१) बालकाण्ड (२) अयोध्याकाण्ड (३) अरण्यकाण्ड (४) किष्किन्धाकाण्ड (५) सुन्दरकाण्ड (६) युद्धकाण्ड (७) उत्तरकाण्ड। सभी काण्ड सर्ग बद्ध है। रामायण में कुल २४ हजार श्लोक हैं। प्रत्येक हजार का आदि श्लोक गायत्री मन्त्र के ही अक्षर से प्रारम्भ होता है। रामायण की कथा अति प्रसिद्ध है। उपर्युक्त गुणों से विभूषित श्रीरामचन्द्रजी इसके नायक हैं।

रामायण में राम का चरित्र सबसे अधिक सुन्दर है। विभिन्न परिस्थितियों में रहकर भी राम के जिस शील और मर्यादा का चित्रण किया गया है वह

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

अन्यत्र दुर्लभ है। भारतवासी किसी आदर्श मानव का चरित्र सुनने के लिए लालायित थे, महर्षि वाल्मीकि ने राम का उदात्त चरित्र प्रस्तुत करके उनका बड़ा भारी उपकार किया। रामायण के अयोध्याकाण्ड के प्रारम्भ में ही श्री रामचन्द्रजी के जिस शील, स्वभाव तथा सद्गुणों का चित्र चित्रित किया गया है, वह निश्चय ही मानवता का आदर्श चित्र है। उसके अनुसार राम बड़े ही रूपवान् और पराक्रमी थे। वे किसी का दोष नहीं देखते थे। सदैव शान्त रहते थे तथा मधुर वचन बोलते थे। झूठी बात तो स्वप्न में भी कभी उनके मुख से निकलती ही न थी। वे वृद्धों का सम्मान किया करते थे। प्रजा में उनका परम अनुराग था। वे परम दयालु क्रोध पर विजय पाने वाले तथा ब्राह्मणों की पूजा करने वाले थे। शास्त्र-विरुद्ध बातों को सुनने में कभी उनकी रूचि नहीं होती थी। धर्म के तो वे साक्षात् अवतार थे। "रामो विग्रहवान् धर्मः"। वे सांगवेद—ज्ञाता तथा सम्पूर्ण विद्याओं में निष्णात थे। धनुर्विद्या में निष्णात थे। धनुर्विद्या में वे अपने पिता से भी बढ़कर थे। उनकी स्मरण शक्ति तीव्र तथा उन्हें सामायिक लोकचार का ज्ञान था। वे काल के पीछे न चलकर, काल ही उनका अनुसरण करता था। उन्हें सत्पुरुषों के संग्रह, दीनों पर अनुग्रह तथा दुष्टों के निग्रह के अवसरों का समुचित ज्ञान था।

रामायण के अनुसार राम के धर्मज्ञाता का एक उदाहरण दर्शनीय है—बाली ने जब उनके द्वारा किये कार्य को (बालिवध रूपी कार्य) अन्याय बताते हुए धर्म की दुहाई देता है तो उन्होंने उसकी सभी बातों का खण्डन युक्ति पूर्ण ढंग से किया और कहते हैं कि—"बालि! तुम्हें तो तुम्हारे पाप का दण्ड मिला है क्योंकि तुमने पुत्रवधू तुल्य छोटे भाई की स्त्री को बलपूर्वक रख लिया है तथा उसके साथ बलात्कार किया है। अतः मैंने तुझे दण्डितकर राजधर्म, मित्रधर्म तथा अपनी प्रतिज्ञा का पालन किया है। वे अपनी बात को प्रमाणित करने के लिए पूर्वजों द्वारा अपनायी गयी नीति तथा मनुस्मृति के मत का भी उल्लेख किया है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"श्रूयते मनुना गीतौ श्लोकौ चारित्रवत्सलौ"

शरणागत की रक्षा करना उनका जीवनव्रत था । विभीषण की शरणागति के प्रसङ्ग में उनके ये वचन कितने मार्मिक ढंग से प्रस्तुत किए गये हैं—

सकृदेवप्रपन्नाय तवास्मीति च याचते ।
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद् व्रतं मम ॥

धर्मज्ञ एवं शरणागतवत्सल होने के साथ ही वे कृतज्ञ भी थे । उदाहरण के लिए जब हनुमान जी सीता का पता लगाकर वापस लौटे तो उनके कृतज्ञता-ज्ञापक वचन दर्शनीय हैं यथा—"आज हनुमान जी ने सीता की खोज कर धर्मानुसार मेरी, समस्त रघुवंश की तथा लक्ष्मण की भी रक्षा कर ली है । मैं दीन हूँ, असमर्थ हूँ, मेरे मन में तो यही बात कसक रही है कि जिसने हमें ऐसा प्रिय संवाद सुनाया, उसका मैं कोई वैसा कार्य न कर सका !" ऐसा कहकर हनुमान जी को हृदय से लगा लेते हैं । इसी प्रकार रामायण में उनके इस भाव का कई स्थलों पर चित्रण किया गया है ।

धर्मज्ञता, शरणागत वात्सलता तथा कृतज्ञता के अलावा श्रीरामचन्द्र जी में और भी अनेकों गुणों का समावेश था । जो प्रारम्भ में ही गिना दिए हैं । माता-पिता तथा गुरु के प्रति अपार श्रद्धा तथा भक्ति थी । विमाता को भी वे माता ही समझते थे । तभी तो एक बार लक्ष्मण ने वन में कैकेई को कुछ कहना चाहा तो उन्होंने तुरन्त रोककर कहा कि 'ऐ लक्ष्मण । मेरे सम्मुख मध्यमा अम्बा कैकेयी की निन्दा न करो वह निन्दनीय कथमपि नहीं हैं ।' भाइयों पर उनका जो स्नेह था उसका परिचय निम्न पंक्तियों से मिलता है । उनका कथन है कि—"लक्ष्मण ! मैं सत्य तथा आयुध की शपथ लेकर कहता हूँ कि मैं धर्म, अर्थ, काम तथा सम्पूर्ण पृथ्वी सब कुछ तुम्हीं लोगों के लिए चाहता हूँ । भाइयों के लिए ही मैं राज्य चाहता हूँ । भरत तथा शत्रुघ्न तथा तुमको छोड़कर मुझे कोई सुख मिलता है तो उसमें आग लग जाय और वह जलकर भस्म हो जाय ।" भाइयों के समान ही प्रजाजनों पर भी उनका अटूट प्रेम था कि उनके वनगमन के अवसर पर सम्पूर्ण प्रजा उनके साथ जाने को तैयार हो जाती है । प्रजा की प्रसन्नता के लिए ही वे अपनी प्रिय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पत्नी सीता को वन भेजने के लिए विवश हुए। वे आदर्श राजा थे। उनके राज्य में किसी को किसी प्रकार का कष्ट नहीं था। तभी तो आज तक राम-राज्य की सराहना करते हुए दुहाई दी जाती है।

इस प्रकार रामायण में भगवान श्रीरामचन्द्र जी के पावन चरित्र का वर्णन किया गया है। श्रीराम का चरित्र आदर्श मानव का चरित्र है और रामायण भारतीय संस्कृति का सन्देशवाहक एक उच्चकोटि का उत्तम ग्रंथ है। अतः श्रीराम के पावन चरित्र का आचरण करना प्रत्येक भारतीय का परम पवित्र कर्त्तव्य है तथा रामायण का पठन पाठन और अनुशीलन करना सबके लिए परमावश्यक है।

१०. पञ्चमवेद महाभारत

भारतीय वाङ्मय में अनेकों प्रसिद्ध आकर ग्रंथ हैं, जो अपने आलोक से जनमानस को आलोकित करते रहे हैं। उन्हीं में से महाभारत भी एक प्रमुख है। महाभारत एक लाख श्लोकों वाला विशाल काव्य ग्रंथ है। इसमें कुल अठारह पर्व हैं। कौरव और पाण्डवों के प्रसिद्ध युद्ध गाथा के साथ ही साथ इसमें तत्कालीन राजनीतिक-सामाजिक व्यवस्था तथा धर्म का साङ्गोपाङ्ग वर्णन है। इसमें प्रसिद्ध ऐतिहासिक महापुरुष भगवान श्रीकृष्ण के शौर्य, कौशल, नीति उपदेश आदि के अनेक मार्मिक स्थलों ने इस ग्रंथ को और अधिक उत्कृष्ट बना दिया है। इसमें ज्ञान की अनन्त राशियाँ बिखरी पड़ी हैं। तभी तो किसी ने कहा है—"यत्र भारते तन्न भारते" अर्थात जो महाभारत में नहीं है वह भारतवर्ष में नहीं है। वास्तव में महाभारत एक महत्वपूर्ण ग्रंथ है, इसी कारण इसे पञ्चम वेद के नाम से जाना जाता है।

महाभारत उस समय में होना अनिवार्य हो गया था, जब देश में निरंकुश शासन का बोलबाला था। यज्ञ तथा पुण्य कर्म लुप्त हो रहे थे। भाई-भाई का गला काटने में तनिक भी संकोच नहीं करता था। भारतीय ललनाओं की

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लाज लूटी जा रही थी। धर्म की मर्यादा नष्ट हो रही थी। अत्याचार और अनाचार को बढ़ावा मिल रहा था। मथुरा का शासक कंस, मगध का शासक जरासंध, चेदि देश का शासक शिशुपाल उस समय के स्वेच्छाचारी एवं निरंकुश शासक थे। यहाँ तक कि हस्तिनापुर (दिल्ली) के सिंहासन पर आसीन कौरवेश्वर दुर्योधन भी उसी रंग में रंगा हुआ था।

जहाँ पर आज दिल्ली है वहाँ उस समय हस्तिनापुर था। वहाँ जो लोग राज्य करते थे कई भाई थे। उसमें आपसी कलह हो गया था। श्रीकृष्ण भगवान की उनसे रिश्तेदारी थी, क्योंकि अर्जुन के साथ श्रीकृष्ण की बहन सुभद्रा का विवाह हुआ था। अर्जुन अपने पाँचों भाइयों सहित एक ओर थे। और उनका चचेरा भाई दुर्योधन अपने सौ भाइयों तथा मित्रों सहित एक ओर था। दोनों ने श्रीकृष्ण से सहायता की याचना की। श्रीकृष्ण ने इस आपसी कलह को दूर करने का कठिन प्रयास किया, परन्तु दुर्योधन ने उनकी एक भी न सुनी। अन्त में कौरवों और पाण्डवों के बीच घमासान युद्ध शुरू हो जाता है। श्रीकृष्ण न्याय पक्ष लेकर पाण्डवों की ओर थे। इतना ही नहीं इस महाभारत युद्ध के वे ही नेता थे। यह भीषण युद्ध अठारह दिन पर्यन्त हुआ। अन्त में पाण्डवों की विजय हुई ! उस महायुद्ध में कर्ण, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा आदि महारथी वीर मारे गये। इसी बीच श्रीकृष्ण ने अर्जुन के अज्ञान को दूर करने के बहाने लोक कल्याणार्थ गीता का उपदेश भी दिया था।

इसी विषय वस्तु के आधार पर वेदव्यास लोक कल्याणार्थ महाभारत की रचना की थी। इसके अनुशीलन से मानव जीवन के सभी क्षेत्रों का ज्ञान होता है। सामाजिक, व्यवहारिक, राजनीतिक, धार्मिक भावनाओं से युक्त आख्यानों का अध्ययन कर आज का मानव अपने जीवन को सार्थक बना सकता है। धर्म के उत्कृष्ट लक्षण को बताते हुए कहा गया है कि—

धारणात्धर्मित्याहुः धर्मो धारयते प्रजाः।
यत् स्यात् धारण संयुक्त स धर्मो इति निश्चयः ॥

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अर्थात लोगों के द्वारा धारण किये जाने से तथा धर्म से सम्पूर्ण प्रजा का धारण होने से यह धारण संयुक्त ही धर्म कहलाता है।

कोई देश महान तभी हो सकता है जब उस देश में निवास करने वाले धर्मात्मा और वीर होते हैं। धर्मात्मा और वीरता की शिक्षा के लिये महाभारत एक अद्वितीय ग्रंथ हैं। क्योंकि महाभारत में ऐसी वीरता की रोमांचक कथाओं का वर्णन है कि भुजाओं का फड़क उठना स्वाभाविक हो जाता है। महाभारत की वीरतापूर्ण कथाओं से बच्चों में वीरता, साहस, धैर्य निपुणता आदि मानवोचित गुणों का विकास अनायास हो जाता है। दुःख की बात है कि आज का समाज इस मार्ग दर्शक ग्रन्थ से विमुख दिखाई दे रहा है, इसी कारण आये दिन नाना प्रकार की अनावश्यक समस्यायें देश को विकसित होने से बाधित कर रही हैं। महाभारत का अध्ययन कर आज का समाज चाहे तो अपने अन्दर मानवीय गुणों का संचार कर समस्याओं को दूर कर सकता है। वेदव्यास जी ने इस महान ग्रन्थ में अपनी तपस्या और ज्ञान के बल पर ऐसे प्रकाश की व्यवस्था कर दी है कि प्रत्येक मनुष्य इसका अनुशीलन तथा आचरण करके अपने सम्पूर्ण समाज को आलोकित कर सकता है।

महाभारत और रामायण को विश्व बेजोड़ होने का प्रत्यक्ष प्रमाण दूरदर्शन ने प्रस्तुत कर दिया है। इसकी कथाओं के चित्र दर्शन तथा शब्द श्रवण से जब सामान्य से लेकर उच्च प्रतिभा सम्पन्न व्यक्ति मन्त्र मुग्ध सा दिखाई देता है, तो हम स्वयं अनुमान लगा सकते हैं कि इनमें वर्णित शिक्षा को आचरण में उतार कर समाज कितना सुखी एवं समृद्ध हो सकता है।

धार्मिक दृष्टि से भी महाभारत का स्थान महत्वपूर्ण है। इसमें व्यास जी ने धर्म की मर्यादा का ऐसा अनोखा चित्रण किया हैं कि इसके अनुशीलन से भौतिक वस्तुयें तुच्छ सी प्रतीत होने लगती हैं। जो कि वास्तविक सत्य है। अर्थात महाभारत के अध्ययन से वास्तविक सत्य की प्रतीति शनैः शनैः दृढ़ होने लगती है। इस प्रकार के ज्ञान की दृढ़ता से अज्ञान रूपी अन्धकार का नाश होना स्वाभाविक है। मनुष्य अज्ञान के कारण ही अधर्म करता है। अतः हम अधर्मरत न हों इसलिए भी इन ग्रंथों का अनुशीलन आवश्यक है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

महाभारत में तत्कालीन सामाजिक अच्छाइयों तथा बुराइयों दोनों का वर्णन कथाओं के माध्यम से किया गया है। क्योंकि कथाओं से मनुष्य शीघ्र ही प्रभावित होता है। अतः इस भीषण सामाजिक दुर्व्यवस्था के समय में इन कथाओं के माध्यम से हम लोगों को प्रभावित करके उनको वास्तविक मार्ग पर चलने की प्रेरणा प्रदान कर सकते हैं। अतः यह सिद्ध हो जाता है कि महाभारत का अनुशीलन तथा आचरण हमारी सामाजिक व्यवस्था को सुदृढ़ बनाने में सहायक हो सकता है।

इस प्रकार से हम कह सकते हैं कि मनुष्य जीवन को जिन गुणों आदर्शों तथा भावों से विकसित किया जा सकता है वे सभी गुण महाभारत में कथाओं के रूप में बिखरे पड़े हैं। इसके अनुशीलन द्वारा ही हम उन गुण-रत्न रूपी माला से विभूषित होकर अपने जीवन को आदर्श जीवन तो बना ही सकते हैं साथ ही साथ अपने समाज को भी अनुसरण करने का मार्ग प्रशस्त करते हैं।

अन्त में यहाँ कहा जा सकता है कि महाभारत स्वार्थ तथा पुरुषार्थ की कथाओं का एक संग्रह है। जिसका अनुशीलन मानव जीवन को सफल बना सकता है। अतः हम सभी का परम पावन कर्त्तव्य होता है कि इसके अनुशीलन से अपने परम पुरुषार्थों की प्राप्ति करें।

११. भगवद्गीता

भारतीय धार्मिक ग्रन्थों में श्रीमद्भागवत्गीता का स्थान महत्वपूर्ण है। भगवान के मुख से निकलने के कारण ही गीता का नाम भगवद्गीता पड़ा। विद्वानों का कहना है कि गीता विश्व बेजोड़ ग्रंथ है, क्योंकि भगवान् ने इस छोटे से ग्रंथ में सम्पूर्ण उपनिषदों को निचोड़कर तत्व भर दिया है। यह इतना महत्वपूर्ण ग्रंथ है कि इसके महत्व का वर्णन वाणी द्वारा करना सम्भव नहीं है। क्योंकि यह एक परम रहस्यमय ग्रंथ है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जब महाभारत के युद्ध क्षेत्र के बीच में श्रीकृष्ण अर्जुन का रथ लाकर खड़ा कर देते हैं तो चारों ओर अपने कुटुम्बियों, बन्धु-बान्धवों, रिश्तेदारों और को ही देखकर अर्जुन के मन में व्यामोह उत्पन्न हो जाता है। वे अपना गाण्डीव धनुष एक किनारे रखकर व्याकुल हो उठते हैं। उस समय भगवान् उन्हें उपदेश देकर उनके मोह को दूर करते हैं। भगवान् का यही अर्जुन को कर्मयोग में प्रवृत्त करने का उपदेश ही गीता के नाम से जाना जाता है।

भगवत् प्राप्ति का उपाय ही गीता का मुख्य वर्ण्य विषय है। गीता के माध्यम से भगवान् ने अपने पाने के दो मार्गों का निरूपण किया हैं—(१) सांख्योग (२) कर्म-योग। इसमें सांख्ययोग का तात्पर्य है कि—संसार के सम्पूर्ण भौतिक पदार्थ मृगमरीचिका के जल के समान या स्वप्न की सृष्टि के समान बताया गया है। क्योंकि सम्पूर्ण विश्व माया का कार्य स्वरूप है अतः संसार में जितने गुण दिखाई देते हैं वे सभी वास्तविक न होकर मायावी होते हैं। इस प्रकार का ज्ञान जब दृढ़ हो जाता है तो मन इन्द्रियों और शरीर द्वारा होने वाले कार्यों के प्रति कर्त्तापन से अभिमान शून्य हो जाता है। जिससे सर्वव्यापी परमात्मा के स्वरूप में एकत्व भाव से नित्य स्थित होते हुए किसी अन्य का आभास तक न होना ही सांख्ययोग साधना है। तथा कर्मयोग साधना का अभिप्राय यह है कि सब कुछ भगवान मानकर सफलता तथा असफलता में समभाव होकर आसक्ति और कर्मफल की इच्छा रहित होकर, भगवान की आज्ञानुसार भगवान के लिए ही कर्मों को करना। श्रद्धा भक्ति पूर्वक मनवाणी और शरीर से भगवान की शरण में होकर नाम गुण तथा प्रभाव के साथ भगवान के स्वरूप का सतत् चिन्तन करना ही कर्मयोग साधना है।

इन दोनों साधनों का परिणाम एक होने से अभिन्न माने गये हैं। परन्तु साधना के समय अधिकारी भेद से दोनों मार्ग अलग-अलग हैं। इसलिए एक ही व्यक्ति एक ही समय में दोनों मार्गों का अनुसरण नहीं कर सकता। इनमें कर्मयोग सन्यास आश्रम में नहीं हो पाता, क्योंकि सन्यास में कर्मों के स्वरूप का भी त्याग विहित है। सांख्ययोग की साधना सभी आश्रमों में की जा सकती

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है। यदि गृहस्थ में सांख्ययोग का अधिकार न होता तो भगवान अर्जुन में युद्ध करने की योग्यता, जो जगह-जगह दिखाये हैं न दिखाते। इतना आवश्यक है कि सांख्ययोग के अधिकारों को देहाभिमान से रहित होना चाहिए। क्योंकि शरीर में अहंभाव के रहते सांख्ययोग साधना अच्छी तरह से समझ में नहीं आ सकता। इसी कारण भगवान ने इसे कठिन बताया है, तथा कर्मयोग साधन सुगम होने के कारण अर्जुन को जगह-जगह कहा है कि—तू निरन्तर मेरा चिन्तन करता हुआ कर्मयोग का आचरण कर अर्थात् फल की इच्छा रहित होकर कर्म कर।

गीता में सभी वेदों तथा शास्त्रों का सार एकत्रित किया गया है। इसका संस्कृत इतना सरल है कि थोड़ा सा भी संस्कृत जानने वाला इसको समझ सकता है। परन्तु इसका भाव इतना गम्भीर है कि आजीवन सतत् अभ्यासरत रहने पर भी उसका अन्त नहीं मिलता है। प्रतिदिन नूतन भाव पैदा होने के कारण यह सदैव नया बना रहता है। ध्यानमग्न होकर श्रद्धा भक्ति सहित चिन्तन करने से प्रत्येक शब्द में परम रहस्य भरा हुआ प्रतीत होता है। भगवान् के गुण प्रभाव और मर्म का वर्णन जैसा इस गीताशास्त्र में किया गया है वैसा अन्य ग्रंथों में दुर्लभ है। क्योंकि प्रायः ग्रन्थों में कुछ न कुछ सांसारिक विषयों का समावेश हुआ रहता है। भगवान ने 'श्रीमद्भागवद्गीता रूप ऐसा अनुपम शास्त्र कहा है, कि इसमें एक भी शब्द सदुपदेश के बिना नहीं है। श्री वेदव्यास जी ने महाभारत में गीता के वर्णनोपरांत कहा है कि—

"गीता सुगीता कर्त्तव्या किमन्यैः शास्त्रविस्तरैः।
या स्वयं पद्मनाभस्य मुखपद्माद्विनिः सृता॥"

गीता सुगीता करने योग्य है अर्थात श्रीगीता को अच्छी तरह पढ़कर अर्थ भाव के साथ हृदयङ्गम करना चाहिए, जो स्वयं पद्मनाथ भगवान विष्णु के मुख से निकली हुई। फिर अन्य शास्त्रों के विस्तार से क्या प्रयोजन।

इस गीताशास्त्र में भी मनुष्यों का अधिकार है चाहे वे किसी वर्ण तथा आश्रम में हों परन्तु भगवान के प्रति श्रद्धा तथा भक्ति आवश्यक है। क्योंकि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भगवान अपने भक्तों में ही इसके प्रचार की आज्ञा दी हैं। उनका कथन है कि स्त्री वैश्य शूद्र तथा पाप परायण भी मेरे परायण होकर परम गति का लाभ करते हैं। अपने-अपने स्वाभाविक कर्मो द्वारा मेरी पूजा करके मनुष्य परम-सिद्धि को प्राप्त करता है। इससे यह प्रमाणित होता है कि परमात्मा की प्राप्ति में सभी का समान अधिकार है।

गीता के मर्म को न जानने वाले लोग ऐसा कह दिया करते हैं कि गीता तो केवल सन्यासियों के लिए है। इसी कारण वे अपने बच्चों को भी गीता का अभ्यास नहीं करने देते हैं। क्योंकि उन्हें भय रहता है कि कहीं लड़का सन्यासी होकर घर से न भाग जाय। ऐसे लोगों को सोचना चाहिए कि मोहान्ध अर्जुन जिस परमरहस्यमय गीता के उपदेश से आजीवन गृहस्थ में रहकर अपने कर्त्तव्यों का पालन किया। उस गीता से ऐसा उलटा परिणाम कैसे हो सकता है ?

अतः कल्याण की कामना करने वालों को चाहिए कि मोह का परित्याग करके अत्यन्त ही श्रद्धा तथा भक्ति के साथ अपने बच्चों को अर्थ एवं भाव के साथ गीता का अध्ययन करावें। स्वयं भी इसका पठन और चिन्तन करते हुए, भगवान की आज्ञा के अनुसार साधना में तत्पर हों जायँ। क्योंकि अति दुर्लभ मानव-शरीर को प्राप्त कर अपने अमूल्य समय का एक भी क्षण दुःख मूलक क्षणिक भोगों के भोग में नष्ट करना ठीक नहीं है। क्योंकि गीता के महत्व को बताते हुए स्वयं भगवान श्रीकृष्ण ने भी कहा है कि—

"गीताज्ञानमुपाश्रित्य त्रीन् लोकान्पालयाभ्यहम्।"

अर्थात गीता के ज्ञान के ही बल पर मैं तीनों लोकों का पालन करता हूँ

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१२. श्रीशंकराचार्य

भगवान श्रीकृष्ण द्वारा भगवद्गीता में कथित वचन—"जब-जब धर्म की हानि और अधर्म की वृद्धि होती है, तब मैं अवतार धारण करता हूँ" को चरितार्थ करने के लिए, हमारी पावन मातृ-भूमि भारतवर्ष में, विभिन्न कालों में तेजस्वी सन्त और महापुरुष अवतरित होते रहे हैं।

उक्त इसी वचन को एक बार पुनः चरितार्थ करने के लिए आचार्य शंकर का जन्म दक्षिण भारत में केरल राज्य के कालडी नामक ग्राम में हुआ। शंकराचार्य जी नम्बूदरी ब्राह्मण परिवार में आठवीं श० ई० में पैदा हुए थे। इनकी माता का नाम विशिष्टा तथा पिता का नाम शिव गुरु था। श्री शंकराचार्य का उपनयन संस्कार आठ वर्ष की अवस्था में हो गया था, परन्तु इसके पहले ही वे पण्डितों को आश्चर्य चकित करते हुए अनेकों धर्म-ग्रन्थों में प्रवीणता प्राप्त कर ली थी। षट्दर्शन का साङ्गोपाङ्ग अध्ययन करके, सोलह वर्ष की अवस्था में ही अपनी शिक्षा पूरी कर लिए थे। परिणाम स्वरूप उनका मन बाह्य जगत की भौतिकता से पूर्णतया विरक्त हो गया। इसके बाद सन्यास ग्रहण करने का निश्चय कर लिया। परन्तु उनके इस संकल्प के पूरा होने में, उनकी परमादरणीया माता जी ही बाधक थीं। क्योंकि उनकी प्रिय माता जी परम वात्सल्यपूर्ण थीं। आचार्यशंकर भी अपनी माँ का आदर करते थे तथा बिना उनकी स्वीकृति के कोई भी कार्य नहीं करते थे। उनके सम्मुख वैराग्य तथा मातृ-प्रेम का अन्तर्द्वन्द्व उपस्थित हो गया। परन्तु श्रीशंकर को तो अखिल विश्व का सर्वोच्च कोटि का धर्म गुरु होना था, अतः कुछ आश्चर्यजनक परिस्थितियों के उत्पन्न हो जाने के कारण उन्हें सन्यासी होने की आज्ञा, माता जी के द्वारा प्राप्त हो जाती हैं।

श्री शंकरजी सन्यासी होने के पूर्व अपनी माता को यह वचन देते हैं, कि—"यद्यपि मैं एक सन्यासी का जीवन व्यतीत करने जा रहा हूँ, किन्तु जीवन के अन्तिम दिनों में तुम्हारे पास ही होऊँगा।"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तेज वैराग्य के भाव से प्रभावित होकर, मोह माया के अन्तिम बंधन से

मुक्त होकर के श्री शंकराचार्य नर्वदा के तट पर पहुँच जाते हैं। वहाँ पर उन्होंने विख्यात गौड़पाद के आत्म ज्ञानी शिष्य गोविन्द पाद को गुरु स्वीकार किया। गोविन्द पाद भी शंकर को शिष्य रूप में पाकर प्रसन्न हुए।

दीक्षा देने के उपरांत गुरु श्रेष्ठ गोविंद पाद ने श्रीशंकर को भगवान वेद व्यास के वेदांत सूत्रों पर भाष्य लिखने का आदेश दिया। इस महान कार्य को पूरा करके शंकराचार्य जी दिग्विजय यात्रा पर निकल पड़े। हिमालय से कन्याकुमारी तथा काश्मीर से आसाम के कामरूप तक उन्होंने पैदल भ्रमण किया। इस महनीय यात्रा में उन्होंने तत्कालीन सभी प्रकाण्ड विद्वानों को शास्त्रार्थ में पराजित किया। शास्त्रार्थ में पराजित अधिकांश विद्वान उनके अनुयायी शिष्य हो गए। प्रकाण्ड विद्वान महान, पं० मण्डन मिश्र तथा उनकी तत्सम विदुषी धर्म पत्नी उभय भारती को पराजित करना, आचार्य शंकर की सबसे भीषण विजय थी। यह दम्पति वैदिक कर्मकाण्ड के कट्टरअनुयायी थे। वे कुमारील भट्ट के शिष्य थे। शास्त्रार्थ के पहले की गई शर्त के अनुसार मण्डन मिश्र आचार्य शंकर के शिष्य बन गये। कुछ समय बाद मण्डन मिश्र को, श्री शंकराचार्य के प्रमुख चार शिष्यों में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त हुआ। सन्यास ग्रहण करने के बाद उनका नाम सुरेश्वराचार्य हो गया। इनके अन्य तीन शिष्य थे—पद्यपाद, तोटकाचार्य तथा हस्तामलक।

उस समय श्री शंकराचार्य के प्रबल विरोधी सम्भवतः बौद्ध ही थे क्यों कि वे लोग वैदिक धर्म के सभी रूपों का विरोध ही करते थे। परन्तु अन्त में चलकर शंकर ने अपनी विद्वत्तापूर्ण वाग् कौशल से उन सब को पराभूत कर दिया। उनमें से भी अधिकांश उनके अनुयायी हो गये।

अद्वैत वेदांत की महिमा और श्रेष्ठता प्रतिष्ठापित करने के बाद आचार्य शंकर ने भारत के चारों दिशाओं में चार मठ स्थापित किये। पूर्व दिशा में जगन्नाथपुरी में गोवर्धन मठ, उत्तर की ओर हिमालय बदारिकाश्रम में ज्योतिर्मठ, पश्चिम की ओर द्वारिका में शारदा मठ तथा दक्षिण में मैसूर राज्य के अन्तर्गत श्रृङ्गेरी मठ। इनमें उन्होंने अपने चारों शिष्यों को पीठाधीश्वर नियुक्त किया।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आज भी ये मठ अध्यात्म विद्या के प्रसिद्ध केन्द्र बने हुए हैं। जहाँ पर ज्ञान पिपासुओं की प्यास, ज्ञान रूपी पेय के द्वारा शान्त की जाती है। इसके अलावा शंकराचार्य जी ने सन्यासियों की १० सुविख्यात श्रेणियाँ भी स्थापित की जो, गिरि, पुरी, भारती, सरस्वती, तीर्थ, आश्रम, वन, अरण्य, पर्वत तथा सागर के नाम से प्रसिद्ध है।

श्री शंकराचार्यजी निर्विवाद रूपेण वेदान्त दर्शन के सबसे महान् आचार्य थे। इन्होंने ब्रह्मसूत्र, प्रमुख एकादश उपनिषदों तथा भगवद्गीता पर भाष्य लिखकर अमरता प्राप्त कर ली। उन्होंने अपनी तीक्ष्ण मीमांसा द्वारा वेदान्त का सार ग्रहण कर उस अद्भुत अद्वैत तत्त्वज्ञान को प्रतिपादित किया जो उपनिषदों में प्रणीत है। उन्होंने ब्रह्मविषयक परस्पर विरोधी व्याख्याओं में ऐक्य स्थापित करके यह दर्शाया कि चिरन्तन सत्य केवल एक है। उनका मानना था कि चढ़ाई के मार्ग पर व्यक्ति धीरे-धीरे ही गमन करता है। इसके समान ही विभिन्न व्यक्तियों की क्षमता के अनुसार विभिन्न साधन मार्ग हैं। उनके प्रख्यात प्रकरण ग्रन्थों से उदाहरणार्थ—'विवेक चूड़ामणि तथा 'अपरोक्षानुभूति, आदि से उनके अगाध ज्ञान तथा अपरिमित कल्पना शक्ति का पता चलता है। शंकराचार्य के ये ग्रंथ आध्यात्मिक साधकों के लिए आवश्यक पथप्रदर्शक हैं।

यद्यपि शंकराचार्य जी पूर्णतया अद्वैतवादी थे, परन्तु उनका अन्तःकरण प्रगाढ़ भक्ति भाव से ओतप्रोत था। उनके द्वारा विरचित अद्वितीय स्तोत्र भक्ति एवं वैराग्य की भावना से इस प्रकार परिपूर्ण हैं कि इनसे पाषाण हृदय भी द्रवित हो उठता है।

अपने अद्भुत अद्वैत दर्शन द्वारा सम्पूर्ण देश को प्लावित करके तथा धर्म में युगान्तकारी सुधार ले आने के उपरांत आचार्य शंकर सन् ८३० में ३२ वर्ष की अवस्था में हिमालय पर्वत पर केदारनाथ में महासमाधि में लीन हो गये। आचार्य शंकर के विषय में विवेकानन्द जी का कथन है कि—"आचार्य शंकर एक महान् तत्त्वज्ञानी थे। उन्होंने यह स्पष्ट किया कि बौद्ध धर्म का सार

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तत्त्वतः वेदांत दर्शन से भिन्न नहीं है। शंकर की सर्वोपरि गरिमा उनका

गीता का प्रचार है। उस महापुरुष ने अपने उदात्त जीवन में अनेक महान् कार्य किये, पर गीता का प्रचार और गीता पर उनका उत्कृष्ट भाष्य उनके सर्वोत्तम कार्यों में से है। "शंकर ने वेदों के सनातन धर्म की पूर्ण रक्षा की। अनेक अनुयायी उन्हें शिव का अवतार मानते हैं……… ।"

आज सहस्रों वर्ष बाद भी भारत के धार्मिक जीवन पर उनके व्यापक एवं प्रभावपूर्ण कार्यों का सफल प्रभाव पूर्णतः विद्यमान है। वे हमें निरन्तर प्रेरित करते रहें तथा उनके द्वारा हमारा मार्गदर्शन होता रहे, यही हमारी ऐकान्तिक कामना है।

१३. भगवान् श्रीकृष्ण

भगवान् श्रीकृष्ण का अवतार सोलह कलाओं का अवतार था। भादों के कृष्णपक्ष अष्टमी तिथि को श्रीकृष्ण जी अवतरित हुए। आधी रात का समय था, चारों ओर गहरा अंधकार फैला हुआ था। आकाश में कठोर मेघ गर्जन हो रहा था, ऐसी स्थिति में माता देवकी के गर्भ से भगवान श्रीकृष्ण का जन्म हुआ था। हम प्रतिवर्ष उन्हीं की याद में श्रीकृष्ण जन्माष्टमी का पावन पर्व मनाते हैं।

जिस समय भगवान पैदा हुए थे उस समय देश में निरंकुश शासन था। प्रायः धार्मिक तथा पुण्य कर्म समाप्त हो चुके थे। भाई-भाई का गला काटने में हिचकता नहीं था। ललनाओं की लाज लूटी जा रही थी। धर्म की मर्यादा नष्ट हो जाने से चारों ओर अत्याचार और अनाचार का ही बोलबाला था। उस समय मथुरा का राजा कंस, मगध का शासक जरासंध, चेदि देश का राजा शिशुपाल आदि पूर्णतया निरंकुश तथा स्वेच्छाचारी थे। यहाँ तक कि हस्तिनापुर की गद्दी पर आसीन कुरूनरेश दुर्योधन भी उन्हीं के रंग में रंगा हुआ था। उस समय ऐसे शक्ति सम्पन्न महापुरुष की आवश्यकता थी, जो इन दुष्टों को नष्ट करके फिर से धर्म की स्थापित करता। गीता का श्लोक है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यदा यदा हि धर्मस्य ग्लानिर्भवति भारत।
अभ्युत्थानमधर्मस्य तदात्मानं सृजाम्यहम् ॥

अर्थात जब धर्म का नाश होकर अधर्म का उत्थान होता है, तब-तब भगवान अवतरित होकर दुष्टों का दमन करके धर्म की स्थापना पुनः करते हैं। अतः उस समय भगवान श्रीकृष्ण जी का अवतार होना स्वाभाविक था।

भगवान श्रीकृष्ण के जन्म की कहानी अनोखी है। कंस की बहन देवकी से वसुदेव का विवाह हुआ था। जब देवकी वसुदेव के घर आ रही थी तो, यह आकाशवाणी हुई कि देवकी के आठवें पुत्र से कन्स का समूल नाश होगा। कंस को जब यह मालूम हुआ तो वह देवकी को मारना चाहा, परन्तु वसुदेव ने यह कहा कि इसे मत मारिए इसके गर्भ से जितनी सन्तानें पैंदा होगी, मैं उसे तुझे सर्मपित कर दूँगा। इस बात को मानकर वह उसे छोड़ दिया। जब-जब देवकी गर्भवती होती थी तो वह उसे जेल में बन्द कर देता था। और नवजात शिशु को मार डालता था। जिस समय आठवें गर्भ का नम्बर आया, उस समय और भी अधिक सतर्कता की गई। वसुदेव और देवकी दोनों को जेल में बन्द कर दिया गया। भादों की आधी रात को भगवान पैंदा हुए। भगवान की महिमा से सभी पहरेदार सो गये। जेल के फाटक अपने आप खुल गये। माता देवकी तथा पिता वसुदेव की बेड़ियाँ खुल गई। उन दोनों को यह चिन्ता थी कि सवेरा होते ही खैंर नहीं होगा। उसी समय गोकुल के नन्द बाबा के यहाँ यशोदा के गर्भ से एक लड़की पैंदा हुई थी। पैंदा होते ही यशोदा जी सो गई। बस नंद जी के घर जाकर वसुदेव ने उस लड़की को उठाकर वहाँ अपने पुत्र को सुला दिए। सबेरा होने पर कंस को पता चला कि लड़की पैंदा हुई है। समाचार पाकर कंस तुरन्त ही आया और उस नवजात बालिका को मारना चाहा, परन्तु वह आकाश में उड़ गई। वहाँ से उसने कहा हे कंस! तेरा वैंरी पैंदा हो गया। मैं तेरी वैंरी नहीं हूँ।" वह तो भगवती दुर्गाजी थी जो थी जो विन्ध्यपर्वत पर जाकर रहने लगी। तभी से उनकी वहाँ पर पूजा अर्चना होने लगी और उनका नाम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

विन्ध्यवासिनी पड़ा। यहाँ नन्द के यहाँ बालक शुक्ल पक्ष के चन्द्र की भाँति बढ़ने लगा। बालक का रङ्ग काला था इसी से उसका नाम कृष्ण रख दिया गया।

नन्द जी ग्वालों के मुखिया थे। उनके पास गायें अधिक थी। ग्वाल-बालकों के साथ कृष्ण भी गाय चराते थे। वही रहकर वे विविध लीलायें किया करते थे। इनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वे छोटे बड़े सभी से प्रेम करते थे। बालकों के खेल में भी ये कभी अन्याय नहीं होने देते थे बाल्यावस्था में ही ये दही तथा मक्खन खूब खाया करते थे। कभी-कभी पड़ोंसियों के यहाँ जबरदस्ती दही मक्खन खाने में इन्हें खूब आनन्द मिलता था। ये बाँसुरी अच्छी बजाते थे, इसलिए इनका बाँसुरी से अटूट प्रेम था। स्त्री-पुरुष सभी इनकी बाँसुरी की तान सुनकर मोहित हो जाते थे।

इनकी शिक्षा जिस पाठशाला में हुई थी वहाँ सांदीपनि जी इनके गुरु थे। पाठशाला में रहने वाले अन्य बालकों से इनकी मित्रता थी। सुदामा जी इनके साथ अध्ययन करने वाले गुरु भाई थे। उस समय स्वेच्छाचारिता का बोल-बाला था। पूरा देश किसी एक राजा की छत्रछाया में नहीं था। बल्कि छोटे-छोटे कई राज्यों में बंटा हुआ था। कृष्ण के लिए यह असह्य था। जनता के हित की कामना से ये निरंकुश स्वेच्छाचारी शासकों का अन्त किए। इससे सम्पूर्ण देश की जनता बहुत प्रभावित हुई और ये सभी के अगुआ मान लिए गए। यहाँ तक इनकी प्रसिद्धि हो गई कि जहाँ श्रीकृष्ण जी रहेंगे उधर की ही विजय होगी।

आजकल जहाँ गुजरात प्रदेश है, उस स्थान का नाम श्रीकृष्ण के समय में द्वारिका था। वहाँ की जनता श्रीकृष्ण को अपना राजा बनाया। एक महान् राजा के लिए जो गुण आवश्यक होते हैं वे सभी श्रीकृष्ण में भरपूर थे। पूरा राज्य उनकी व्यवस्था से सन्तुष्ट होक सुखपूर्वक जीवन यापन करता था।

वर्तमान दिल्ली उस समय हस्तिनापुर नाम से जाना जाता था। वहाँ राज्य करने वाले कई भाई थे। उनमें आपसी कलह उत्पन्न हो गया। श्रीकृष्ण का उनके यहाँ रिश्ता था। क्योंकि श्रीकृष्ण की बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

के साथ हुआ था। अर्जुन पाँच भाई थे उन्हें पाण्डव कहा जाता था। अर्जुन का विरोधी चचेरा भाई दुर्योधन सौ भाई था वे सब कौरव के नाम से प्रसिद्ध थे। कृष्ण जी उनके आपसी कलह को दूर करने लिए प्रयत्नशील थे। परन्तु दुर्योधन उनकी एक बात भी न माना। अन्त में कौरव और पाण्डव दोनों कृष्ण से सहायता माँगते हैं। दुर्योधन ने कृष्ण की सेना लेना स्वीकार किया और पाण्डवों ने निहत्थे सारथी के रूप में कृष्ण को स्वीकार किया। यहाँ पर श्रीकृष्ण ने न्याय का पक्ष लिया। अन्त में कौरवों तथा पाण्डवों में अठारह दिनों तक घमासान युद्ध हुआ जो महाभारत के नाम से प्रसिद्ध है। उस युद्ध में कर्ण, भीष्म, द्रोण, कृप, अश्वत्थामा आदि बड़े-बड़े योद्धा मारे गये। अन्त में पाण्डवों की विजय हुई।

इसी युद्ध के दौरान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को गीता का उपदेश दिया था। उसी गीता का आज भी सारे विश्व में उच्चतम स्थान है। गीता में वेद शास्त्रों का सार निचोड़कर रखा गया है। स्वयं भगवान् श्रीकृष्ण ने कहा है कि मैं गीता के ज्ञान के सहारे तीनों लोकों का पालन पोषण करता हूँ—

"गीताज्ञानमुपाश्रीत्य त्रीन् लोकान् पालयाम्यहम् ॥"

महाभारत के युद्ध के बाद श्रीकृष्ण के मन में ग्लानि हो गयी। देश की दुर्दशा को देखकर उनके मन में अत्यन्त पीड़ा हुई। एक सौ बीस वर्ष तक जीवित रहने के बाद उन्होंने अपना शरीर छोड़ा।

श्रीकृष्ण की महानता की गवाही आज उनके प्रशंसा में लिखी गई हजारों पुष्तकें कर रही हैं। महाभारत, भागवत आदि महानतम् ग्रंथ श्रीकृष्ण के जीवन चरित्र का विस्तार से वर्णन कर रहे हैं। श्रीकृष्ण जी के द्वारा ऐसे आदर्श कार्य किए गये थे कि पाँच हजार वर्ष से भी अधिक समय बीत जाने पर भी उनके यश की गाथाएँ बड़े ही आदर के साथ गाई जा रही हैं। अत हमको उनके उपदेश का पालन करके मानव जीवन सार्थक बनाना चाहिए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

१४. महात्मा बुद्ध

कौन ऐसा व्यक्ति है जिसने महात्मा बुद्ध का नाम न सुना हो ? राम तथा कृष्ण के समान ही गौतम बुद्ध भी अवतारी महापुरुष थे। संसार में करुणा, मैत्री और अहिंसा के द्वारा शांति लाने का प्रचार करने वाले महात्मा बुद्ध ही थे। इनके द्वारा प्रचलित धर्म का नाम 'बौद्ध धर्म' था। इनके धर्म के अनुयायी भारत के अलावा वर्मा, चीन, नेपाल आदि अन्य देशों में भी हैं। इसी कारण से इनके द्वारा चलाये गये धर्म को अन्तर्राष्ट्रीय धर्म कहा जाता है।

नेपाल की तराई में गोरखपुर से उत्तर कपिल वस्तु का नाम एक नगर था। लगभग ढाई हजार वर्ष पूर्व यहाँ शाक्य वंश के राजा शुद्धोदन राज्य करते थे। शुद्धोदन की रानी माया देवी के गर्भ से लुम्बिनी नामक जंगल में वैशाख माह की पूर्णिमा तिथि को इस दिव्य महापुरुष का अवतार हुआ। इनके जन्म के अवसर पर ही ज्योतिषियों ने यह भविष्यवाणी की थी कि यह बालक बड़ा होकर अत्यन्त तेजस्वी होगा और संसार को अपने उपदेश रूपी अमृत से तृप्त कर देगा। जन्म के सातवें दिन ही इनकी माता जी चल बसी। इनकी विमाता प्रजावती ने इनका पालन-पोषण किया। पिता की कामना इनको पाकर पूर्ण हुई थी इसी से इनका नाम सिद्धार्थ रखा गया। इनकी शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध अच्छे गुरुओं की देख-रेख में किया गया। बहुत ही कम समय में ये सभी विद्याओं के जानकार हो गये थे।

सिद्धार्थ का मन बचपन से ही संसार में नहीं लगता था। उनकी इस दशा को देखकर राजा चिन्तित रहने लगे। उन्होंने इसके लिए अनेकों प्रयत्न भी किए। सांसारिक मोह माया में फंसाने का राजा ने अनेकों जाल बिछाया। एक सुन्दर उपवन लगाया गया उसमें सुख सुविधा के सभी साधन एकत्रित किये गये। परन्तु सिद्धार्थ का मन उस मोह माया में नहीं फंसा। एकान्त में बैठकर चिन्तन किया करते थे।

राजकुमार सिद्धार्थ स्वभाव से ही अत्यन्त दयालु थे। दूसरों को जरा सा भी दुखी देखकर उनका मन पसीज जाता था। एक दिन की बात थी—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वे अपने चचेरे भाई देवदत्त के साथ खेलने के लिए जा रहे थे। आकाश में हंसों का एक झुण्ड दिखलाई पड़ा। देवदत्त ने तीर चलाया, जिससे घायल होकर एक हंस पृथ्वी पर गिर पड़ता है। उसको उस अवस्था में देखकर सिद्धार्थ का हृदय दया से ओत-प्रोत हो गया। वे उसको उठाकर हाथ से सहलाने लगे। इतने में देवदत्त उनके समीप आकर हन्स को माँगने लगा। वे उसे देना नहीं चाहते थे। इस विषय में उन दोनों भाइयों से कहा-सुनी होने लगी। उन दोनों को आपस में झगड़ते देखकर एक महात्मा ने कहा कि यह हंस राजकुमार का है क्योंकि रक्षक का अधिकार भक्षक से अधिक होता है। यह निर्णय सुनकर देवदत्त अपना मुँह बनाकर रह गया।

सिद्धार्थ के सम्वन्ध में आश्चर्यजनक बातों को देख तथा सुनकर राजा और अधिक चिन्तित हो गए। अन्त में सोच विचार के उपरांत इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि राजकुमार का विवाह करके उनको गृहस्थ जीवन की तरफ आकृष्ट करना चाहिए। इसके परिणाम स्वरूप यशोधरा नामक परम रूपवती राजकुमारी के साथ सिद्धार्थ का विवाह कर दिया गया। सब सुख सुविधा सुलभ राजमहल में पति पत्नी दोनों सुखमय दाम्पत्य जीवन बिताने लगे। धीरे-धीरे राजा भी निश्चिन्त हो गये! राजा पूर्णरूपेण विश्वस्त हो गये कि अब राजकुमार के द्वारा संसार छोड़ना सम्भव नहीं है। कुछ दिनोंपरांत यशोधरा के गर्भ से पैंदा हुए पुत्र का नाम राहुल रखा गया। इतना सब होने पर भी राजकुमार अनवरत दिन रात चिंतन में लीन रहते थे।

सहसा एक दिन राजकुमार अपने सारथी छंदक से रथ मँगाकर तथा उस पर आरूढ़ होकर बगीचे की ओर चल दिए। रास्ते में एक वृद्ध दिखाई पड़ा जो कमर टेढ़ी हो जाने से लाठी की सहायता से किसी प्रकार चल रहा था। उसके सिर के बाल सफेद थे, आँखें अंदर धँसी हुई थी। उसके शरीर की अस्थिमात्र शेष रह गई थी। उस दृश्य को देखकर राजकुमार द्रवित हो गए। वे दुःखी होकर सारथी से पूछ बैंठते हैं कि यह आदमी इस प्रकार से क्यों चल रहा है, और इसके बाल सफेद क्यों हो गये हैं? उत्तर देते हुये सारथी कहता है कि यह बूढ़ा हो गया है, वृद्धावस्था में प्रायः यही दशा सबकी होती

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है। इस प्रकार दूसरे दिन एक मरे आदमी को चार व्यक्ति ले जा रहे थे। इसको देखकर जब राजकुमार पूछते हैं तो उन्हें बताया जाता है कि सभी लोगों को एक न एक दिन मरना होगा। इसी प्रकार अन्य अनेकों घटनाओं को देखकर राजकुमार अपने मन में विचार करते हैं कि इस संसार में केवल दुःख ही दुःख है। वे इसी विषय में चिंतन करना शुरू कर दिये कि कौन सा ऐसा उपाय निकाला जाय जिससे संसार में व्याप्त दुखों से छुटकारा मिल सके।

एक दिन रात के समय सबके सो जाने के बाद राजकुमार, स्त्री तथा पुत्र को सोते छोड़कर बाहर आए और अपने सारथी को बुलाया। अपने सारथी के साथ कंथक नामक घोड़े पर सवार होकर कपिल वस्तु की सीमा पार कर गये। बौद्ध ग्रंथों में सिद्धार्थ के इस गमन को 'महाभिनिष्क्रमण' कहा गया है। कुछ दूर जाने पर सारथी को राजसी वस्त्रों के साथ वापस भेजकर स्वयं ज्ञान की खोज में निकल पड़े।

सिद्धार्थ एक जङ्गल में पहुँचकर कठोर तप करना आरम्भ कर दिया। जिसके फलस्वरूप उनका शरीर सूखकर काँटा हो गया। अन्त में उन्हें जानकारी होती है कि शरीर को कष्ट देने से सफलता मिलना असम्भव है। इसके कुछ दिन बाद वे गया में पहुँचकर एक पीपल के वृक्ष के नीचे ध्यानमग्न हो गये। उसी पीपल की छत्रछाया में उन्हें ज्ञान की झलक मिली तभी से उनका नाम बुद्ध पड़ा। जिस वृक्ष के नीचे ज्ञान प्राप्त हुआ था, उसका नाम 'बोधि वृक्ष' पड़ा।

बुद्ध जी गया में ज्ञान प्राप्त कर वे वाराणसी स्थित सारनाथ आये। वहीं पर इन्होंने विश्व के कल्याण के लिए अपने धर्म का प्रथम उपदेश देना प्रारंभ किया। वहाँ तीन मास रहकर बौद्ध धर्म की अच्छी तरह से व्याख्या करके बहुत से लोगों को अपना शिष्य बना लिया। इसके बाद वे सभी जगह जाकर अपने धर्म की बातों से सभी लोगों का मन आकृष्ट करने लगे। उनकी भाषा बोलचाल की थी, वाणी में ओज था। इसका परिणाम यह हुआ कि उस समय के महान राजा लोग उनके शिष्य बन गये। अपने संघ का नाम उन्होंने भिक्षुसंघ रखा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भगवान बुद्ध ने अपने धर्म का प्रचार भारत के कोने-कोने में किया। उनके शिष्यों ने जापान, चीन, लंका, वर्मा तथा तिब्बत आदि देशों में भी बौद्धधर्म का प्रचार-प्रसार किया। उनके धर्म का मुख्य तत्व अहिंसा, सत्य, अस्तेय, अपरिग्रह तथा ब्रह्मचर्य था। उनका धर्म सङ्कीर्ण न होकर व्यापक था। इसी अपनी व्यापकता से बौद्ध धर्म आज भी जीवित ही नहीं समादृत भी है। ४५ वर्षों तक उन्होंने अपने धर्म का प्रचार करके तथा अपने उपदेश रूपी अमृत से जन साधारण को तृप्त करके देवरिया जिले में स्थित कुशीनगर नामक स्थान पर भगवान बुद्ध ने अपना शरीर त्याग किया। बौद्ध ग्रन्थों में इसे 'महापरिनिर्वाण' कहते हैं।

—*—

१५. महात्मा गांधी

राष्ट्रपिता महात्मा गांधी केवल भारत के ही नहीं अपितु सम्पूर्ण विश्व की विभूतियों में एक महान विभूति थे। वे सफल राजनीतिज्ञ कुशल समाज सुधारक तथा वास्तविक सन्त थे। राजनीति तथा सामाजिक क्षेत्रों में उनका महत्वपूर्ण अधिकार था। अंग्रेजों की पराधीनता रूपी वेड़ी में जकड़ी हुई भारत-भूमि रूपी माँ को स्वतन्त्र करने का प्रधान श्रेय महात्मा गांधी को ही है। इनका वास्तविक नाम मोहनदास कर्मचन्द गांधी था। अपने लोकोत्तर गुणों से ही ये महात्मा की उपाधि से विभूषित किये गये।

इनका जन्म दो अक्टूबर सन् १८७९ में गुजरात (पोरबन्दर) में हुआ था। इनके पिता श्री कर्मचन्द जी थे। ये पोरबन्दर रियासत के दीवान थे। गांधी जी की माता जीं पुतली बाई धार्मिक प्रवृत्ति की महिला थीं। गांधी जी का विवाह कम अवस्था में ही कर दिया गया था। लगभग १३ वर्ष की उम्र में कस्तूरबा के साथ इनका विवाह हुआ था।

गांधी जी की प्राथमिक शिक्षा-दीक्षा राजकोट तथा भावनगर में हुई थी। मैट्रिक परीक्षा उत्तीर्ण करके बैरिस्टर बनने के उद्देश्य से पढ़ने के लिए

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इंग्लैंण्ड गये थे। यहाँ से जाते समय इनकी माता जी ने इनसे तीन प्रतिज्ञायें करा ली थीं—१—कभी मांस नहीं खायेंगे, २—कभी शराब नहीं पीयेंगे तथा ३—कभी किसी पर स्त्री का संग नहीं करेंगे। महात्मा गांधी ने इन प्रतिज्ञाओं का आजीवन निर्वाह किया। इसके बाद इन्होंने बैरिस्टरी करना प्रारम्भ किया परन्तु चली नहीं। किसी समय एक मुकदमें की पैरवी के चक्कर में दक्षिण अफ्रीका जाना पड़ा। वहाँ पर इनकी वकालत खूब चली। वहीं से इनके राष्ट्रीय जीवन का श्री गणेश हुआ। दक्षिण अफ्रीका के प्रवासी भारतीयों की नाजुक दशा को देखकर उनका हृदय दया से भर गया। इसके बाद उन्होंने उनसे सहानुभूति में सत्याग्रह आंदोलन चलाया। इनके नेतृत्व मे यह आंदोलन पूर्ण सफल रहा, जिससे भारतीय नेताओं की दृष्टि अनायास ही इनके तरफ आकृष्ट हुई। सभी लोग गांधी जी को अपना नेता मानने लगे

प्रथम विश्व युद्ध छिड़ जाने पर गांधी जी भारत वापस लौट आये अंग्रेजों ने लड़ाई में सहायता माँगते समय यह वचन दिया था कि लड़ाई पू होने पर भारत को स्वतन्त्र कर दूँगा, परन्तु ऐसा नहीं किया बल्कि भारती को और प्रताड़ित किया। जलियावाले बाग की घटना उसी समय घटी थी जिसमें हजारों भारतीय अंग्रेजी सैनिकों की गोलियों से उड़ा दिए गये। गां ने इसी समय असहयोग आंदोलन चलाया, हजारों भारतीयों के साथ गांधी जेल में बन्द किये गये। जेल से छूटकर गांधीजी ने खादी का प्रचार क तथा ग्राम सुधार कार्य शुरू कर दिये। साबरमती में उनके द्वारा एक आश्र बनाया गया। यहीं से उन्होंने रचनात्मक कार्यों को करना प्रारम्भ किया।

इतिहास प्रसिद्ध गांधी जी की दाण्डी यात्रा सन् १९३० ई० में हु नमक के कानून को तोड़कर पुनः सत्याग्रह आंदोलन को चलाया। सन् १९ में तत्कालीन वायसराय लार्ड इरविन के साथ समझौता हुआ, और आंदो स्थगित हो गया। इसी वर्ष कांग्रेस प्रतिनिधि के रूप में 'गोलमेज कान्फ्रे में शामिल होने के लिए वे लन्दन गये। परन्तु अंग्रेजों के साथ कोई समझ न हो पाया। जब गांधी जी लन्दन से भारत लौट रहे थे तो बम्बई पहुं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पर कैंद कर लिए गये। अंग्रेजों द्वारा हरिजनों को हिन्दुओं से अलग करने के मामले के खिलाफ गांधी जी ने जेल में ही आमरण अनशन शुरू कर दिया। वाद में समझौता होने पर वे जेल से छोड़ दिए गये।

सन् १९४२ में महात्मा गांधी ने 'भारत छोड़ो' आंदोलन आरम्भ किया। परिणाम स्वरूप गांधी जी भारतीय नेताओं सहित अंग्रेजों द्वारा जेल में भर दिये गए। महात्मा जी का यह क्रांतिकारी अभियान था। इससे अंग्रेजों का शासन डगमगा गया। थोड़े ही दिनों में सभी लोग जेल से छोड़ दिये गये। इस वार के आंदोलन से अंग्रेजों को यह विश्वास हो गया कि अव भारत को स्वतन्त्र करना ही होगा।

महात्मा गांधी के सतत् प्रयासों से अन्त में हमारा देश भारत १५ अगस्त सन् १९४७ को स्वतन्त्र कर दिया गया। परन्तु इस स्वतन्त्रता रूपी देश को पाने के लिए भारत को बहुत बड़ी बलि देनी पड़ी। परन्तु अंग्रेजों ने जाते-जाते ऐसी चाल चली कि भारत को दो टुकड़ों में विभाजित होना ही पड़ा। उस समय कुछ ऐसी विशेष परिस्थितियाँ थी कि महात्मा जी खुलकर इसका विरोध नहीं कर पाये। स्वतन्त्रता की प्रसन्नता आधी हो गई।

महात्मा गांधी ईश्वर पर अधिक विश्वास करते थे। उनके लेखों तथा व्याख्यानों में बार-बार ईश्वर की दुहाई दी गई। उनका कहना था कि मेरे जीवन का प्रमुख उद्देश्य आत्मज्ञान तथा ईश्वर की प्राप्ति है। इसके लिये वे वाह्य पूजा पाठ के आचारों पर उतना बल नहीं देते थे जितना कि आंतरिक गुण सत्य, प्रेम, करुणा, अहिंसा तथा परोपकार पर। महात्मा गांधी जी में ये सभी गुण कूट-कूट कर भरे गए थे। सत्य और अहिंसा के तो वे मूर्तिमान स्वरूप थे। ईश्वर प्राप्ति के मुख्य साधन यही सत्य और अहिंसा हैं। सत्य पर आधारित राजनीति तथा अहिंसा पर आधारित रणनीति ही महात्मा गांधी की सबसे बड़ी देन है।

महात्मा गांधीजी द्वारा चलाया गया खादी ग्रामोद्योग आंदोलन न केवल राजनीतिक आंदोलन था, अपितु वह एक विशुद्ध सांस्कृतिक आंदोलन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कहा जा सकता है। उनको भारत में अंग्रेजों के शासन का बोझ उतना ही दु:खदायी था जितना अँग्रेजी सभ्यता और संस्कृति का बोझ दुःखदायी होता है। उन्होंने खद्दर बनवाकर देश का बड़ा भारी उपकार किया। खद्दर सादे जीवन का सही प्रतीक है।

महात्मा गांधी की यह चाह थी कि भारत में एक बार पुनः रामराज्य की स्थापना हो। दु:ख है कि स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद वे शीघ्र ही चल बसे, नहीं तो आज भारत की स्थिति कुछ और होती। राम के वे इतने भक्त थे कि प्रतिदिन प्रार्थना सभा में राम नाम का कीर्तन करते थे। और अन्त में भी उनके मुख से केवल 'राम' ही निकला। अगर हम लोग अपने देश में राम-राज्य लाना चाहते हैं, तो महात्मा गांधी द्वारा निर्दिष्ट पथ पर हमें चलना होगा तथा अपने धर्म के प्रति जागरूक रहना होगा, क्योंकि भारतीय राजनीति सत्य पर आधारित है और सत्य धर्म का मूल स्तम्भ है। गांधी जी की राम-राज्य की स्थापना की कल्पना भी धर्म के द्वारा ही सम्भव है।

भारत को स्वतन्त्रता दिलाने के पथप्रदर्शक तथा सम्पूर्ण विश्व को एक नई दिशा देने वाले महात्मा गांधी का निधन अत्यन्त विचित्र ढङ्ग से हुआ। ३० जनवरी सन् १९४८ की जब वे प्रार्थना सभा में थे, नाथू राम ने उनके भौतिक शरीर को क्षण भर में नष्ट कर दिया। बिजली की तरह यह सनसनी फैलाने वाली खबर विश्व भर में व्याप्त हो गई। जिसने जहाँ सुना वहीं रोया। यद्यपि महात्मा गांधी जी हम लोगों के बीच आज नहीं हैं, परन्तु उनकी प्रभावोत्पादक छाप अविस्मरणीय है।

१६. महामना पं० मदनमोहन मालवीय

भारतीय परम्परा में बहुत से सन्त महात्मा तथा महापुरुषों ने समय-समय पर अवतरित होकर इस देश को धन्य किया है। जिसके आदर्श जीवन चरित्र से बहुत बड़ा लोकोपकार, देशहित तथा जन जागृति हुई। उन्हीं महापुरुषों में से मानवता की सजीव मूर्ति महामना पंडित मदनमोहन मालवीय भी एक

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

थे। आपका जीवन जितना ही सादा था, विचार उतने ही उच्च थे। मालवीय जी आधुनिक युग के ऋषि थे। उनके वाणी में ऐसा जादू था कि समीप जाने वाला व्यक्ति अनायास ही आकृष्ट हो जाता था। उनकी सबसे बड़ी विशेषता यह थी कि वे बड़े ही उदार थे। 'उदार चरितानां वसुधैव कुटुम्बकम्' को वे अपने जीवन में उतार कर लोगों के सामने उदाहरण प्रस्तुत कर दिए थे। प्राणियों पर दया करना तथा दीन-हीनों का दुःख दूर करना उनका स्वाभाविक धर्म था। वे देखने में जितने सौम्य एवं स्वच्छ थे उनका भीतरी भाव भी सहृदय एवं शुद्ध था।

मालवीय जी का जन्म पौष कृष्ण अष्टमी २५ दिसम्बर १८६१ ई० को एक मालवीय ब्राह्मण परिवार में प्रयाग की पावन भूमि पर हुआ था। उनके पिता पं० व्रजनाथ जी व्यास बड़े ही विनयी और सदाचारी ब्राह्मण थे। अपने सम्पूर्ण सद्गुण बालक मदनमोहन में वे भरना चाहते थे। वे अपने पुत्र को पाश्चात्य सभ्यता में रंगा हुआ नहीं देखना चाहते थे। इस उद्देश्य से वे मालवीय जी की प्रारम्भिक शिक्षा के लिए उन्होंने संस्कृत पाठशाला को ही उत्तम समझा। सबसे पहले मालवीय जी को संस्कृत पढ़ाया गया। बाद में उन्हें अंग्रेजी स्कूल में भेजा गया। जिससे उन्होंने १८७९ में हाईस्कूल परीक्षा १८८१ई० एफ०ए० परीक्षा तथा सन् १८८४ में बी० ए० परीक्षा उत्तीर्ण कर ली। आर्थिक कठिनाई के कारण वे एम०ए० नहीं कर पाये। उन्होंने १८९१ में एल० एल० बी पास कर लिया।

१८८४ ई० से लेकर १८८७ ई० तक आपने प्रयाग के राजकीय हाई स्कूल में अध्यापन कार्य किया। फिर उन्होंने कालाकाँकर से प्रकाशित 'हिन्दुस्तान टाइम्स' पत्र का सम्पादन किया। आगे चलकर वे अनेक पत्रों के संचालक तथा सम्पादक हुए। 'सनातन धर्म' के माध्यम से उन्होंने सनातन धर्म का प्रचार प्रसार भी किया। समाचार पत्रों के प्रकाशन में अतुलनीय यश अर्जित कर वे गुरुजनों तथा मित्रों के आग्रह से वकालत करना शुरू कर दिये। थोड़े ही दिनों में वे प्रसिद्ध वकील हो गये। इसी बीच राष्ट्रीय आंदोलन शुरू हुआ। उन्होंने

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वकालत छोड़कर देश सेवा का व्रत लिया और कांग्रेस की कई सभाओं
ओजपूर्ण व्याख्यान दिए। जिससे साधारण जनता में उनका नाम प्रसिद्ध
गया।

धार्मिक क्षेत्र में मालवीय जी द्वारा किया गया कार्य समयानुरूप था
इसी कारण उन्हें धर्म का अवतार माना जाता है। वे सनातन हिन्दू धर्म
संकीर्णता से ऊपर उठाना चाहते थे। सन् १९०६ ई० में प्रयाग के कुम्भ
अवसर पर सनातन धर्म का एक वृहद् सम्मेलन बुलाया, उसमें 'सनातन
का संग्रह' नामक एक पुस्तक प्रस्तुत किया, जिसमें धर्म की बारिकीयों
प्रकाश डाला गया था। उसी में उन्होंने विश्वविद्यालय के निर्माण की योज
सबके सामने रखा, सभी ने उस योजना का स्वागत किया। 'अखिल भारत
सनानत धर्म सभा' की स्थापना उनके ही सत्प्रयास का फल था। वे
के द्वारा अछूतों का उद्धार चाहते थे। इसके लिए सन् १९२७ में उनके
काशी में एक सभा बुलाई गई, जिसमें चारों वर्णो को समान रूप से मंत्र
दीक्षा दी गई। इससे महामना की धार्मिक उदारता प्रत्यक्ष हो गई।

वे अंग्रेजी भाषा के अच्छे जानकर होते हुए भी संस्कृत तथा हिन्दी
प्रति प्रगाढ़ प्रेम और श्रद्धा रखते थे। संस्कृत और हिन्दी के वे सफल
भी थे। संस्कृत में लिखे गये उनके श्लोक समाज के लिए कितने उपयोगी
यह निम्न श्लोकों से स्पष्ट हो जाता है।

"ग्रामे ग्रामे सभा कार्या ग्रामे ग्रामे कथा शुभा।
पाठशाला मल्लशाला प्रतिपर्वं महोत्सवः ॥
अनाथा विधवा रक्ष्या मन्दिराणि तथा च गौः।
धर्म्यं संघटनं कृत्वा देयं दानं च तद्धितम् ॥
स्त्रीणां समादरः कार्यो दुःखितेषु दया तथा।
अहिंसका न हन्तव्या आततायी वधार्हणः ॥"

वे स्वयं प्रतिदिन भागवत पुराण का पाठ किया करते थे। पुराण
कथाओं का आदर करते थे। इससे उनका संस्कृत भाषा के प्रति प्रेम
हो उठता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत के साथ-साथ हिन्दी भाषा के समर्थन में उनका अपूर्व प्रेम था। भारतेन्दु के निम्न वाक्यों का समर्थन करने वाले हमारे महामना ही थे।

'निज भाषा उन्नति अहै सब उन्नति को मूल।
बिन निज भाषा ज्ञान के मिटत न हिय को शूल।"

हिन्दी में जब वे अपना व्याख्यान देते थे तो ऐसा प्रतीत होता था मानो उनके मुखारविन्द से सरस्वती प्रत्यक्ष निकलती हुई प्रतीत होती थी।

महामना मालवीयजी जो संकल्प कर लेते थे उसको पूरा करके ही छोड़ते थे, चाहे वह कितना भी कठिन कार्य क्यों न हो। इसका सजीव उदाहरण 'काशी हिन्दू विश्वविद्यालय' है। पढ़ते समय ही वे संकल्प किये थे कि शिक्षा का भारतीयकरण होना चाहिये और इसके लिए एक ऐसी शिक्षण संस्था होनी चाहिए जहाँ पूर्ण भारतीय पद्धति से शिक्षण कार्य हो सके। वे चाहते थे कि प्राचीन भारतीय विद्यालयों की तरह एक ऐसा विश्वविद्यालय होना चाहिये, जिसमें वे वेदवेदाङ्ग तथा आधुनिक विषय सभी भारतीय पद्धति से पढ़ाये जायँ। जिसमें छात्र अध्ययन कर अपनी सभ्यता और संस्कृति का ज्ञान प्राप्त कर सकें। इसके परिणाम स्वरूप उन्होंने सन् १९१६ में बसन्त पञ्चमी को, जो सरस्वती का दिन था अपने मानस संकल्प को साकार रूप देते हुए काशी हिन्दू विश्वविद्यालय की स्थापना किया।

विदेशी सत्ता के कारण आर्थिक समस्या उत्पन्न हुई, परन्तु महामना ने यह दिखा दिया कि अच्छे कार्य के लिये पैसा उसका बाधक नहीं हो सकता। वे ब्राह्मण थे ही और वाणी में आकर्षण भी था। शिक्षा के पावन यज्ञ में सहायता देने के लिए उन्होंने एक मार्मिक सूचना निकाली। उस सूचना से प्रभावित होकर धन दाताओं का ताँता लग गया। बात ही बात में कई लाख रुपये जुट गये। विश्वविद्यालय बनने लगा उनके जीवनकाल में ही दिन-दूनी रात-चौगुनी उन्नति करता गया। इस समय उसका स्वरूप हमारे सामने है। विश्व में वह अपने ढंग का बेजोड़ विश्वविद्यालय है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मालवीय जी काशी हिन्दू विश्वविद्यालय के प्रथम कुलपति थे। बाद भी वे वहीं रहकर विश्वविद्यालय की सर्वाङ्गीण उन्नति के लिये सतत् प्रयत्नशील रहते थे। विद्यार्थियों का आदर करते थे। जब भी कोई विद्यार्थी उन पास जाता था वे उसका कार्य तुरन्त कर देते थे। उनके समय में अर्थ कमी से कोई विद्यार्थी पढ़ना छोड़ दे ऐसा सम्भव नहीं था। वे विद्यार्थी पूरी सहायता करते हुए आर्थिक सहायता में कोई कसर नहीं रखते थे।

मालवीय जी का व्यक्तित्व, उनकी वेषभूषा, खान-पान, रहन-सहन आ का आकलन करने से निष्कर्ष निकलता है कि वे एक सच्चे देशभक्त मातृभू के सफल सपूत तथा दृढ़व्रती थे। आजीवन देश की सेवा करते हुए महाम मालवीय का महा प्रयाण १२ नवम्बर सन् १९४६ को विश्वविद्यालय भ में ही उसी तरह से अस्त हो गया मानों वे भारत के भाग्याकाश में अर्धश तक प्रकाश फैलाता हुआ कोई तारा अस्त हुआ हो। उनके निधन से व्याकुल हो उठा। उनका अभाव सबके हृदय में शूल के समान चुभने ल परन्तु किया ही क्या जा सकता है, विधि की यही विडम्बना है।

"सृजति तावदशेषगुणाकरं पुरुष रत्नमलङ्करणं भुवः।
तदपि तत्क्षणभङ्गि करोति चेदहह! कष्टमपण्डितता विधेः॥"

१७. पं० जवाहरलाल नेहरू

आधुनिक युग के महापुरुष पं० जवाहरलाल नेहरू का जीवन त्याग त बलिदान पूर्ण था। उस समय चारों ओर संघर्ष का वातावरण था, एक रा दूसरे राष्ट्र को हड़पने की कोशिश में लगे थे। युद्ध में विजयी होने के लि संघारक अस्त्रों का निर्माण हो रहा था। इस विषम स्थिति में पं० जवाह लाल नेहरू अकेले ही शान्ति का सन्देश लेकर चल रहे थे। अन्तर्राष्ट्रीय क्षे में नेहरू जी का जो सम्मान था, वह किसी देश के अन्य नायक का नहीं था भारतीय संस्कृति के प्रति इनकी महान् आस्था थी।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वतन्त्र भारत के प्रधान मन्त्री पं० जवाहरलाल जी का जन्म १४ नवम्बर सन् १८८९ ई० में प्रयाग के काश्मीरी ब्राह्मण परिवार में हुआ था। उनके पिता पं० मोतीलाल नेहरू तथा माता स्वरूपा रानी जी थीं। मोतीलाल जी अपने समय के विख्यात बैरिस्टर थे। उनकी आय बहुत थी। इसी कारण वे अपने इकलौते पुत्र जवाहर लाल को उत्तम से उत्तम शिक्षा देने के लिए कोई कसर नहीं छोड़ा। जवाहर लाल जी का बचपन बड़े शानशौकत का था। सानशौकत में वे किसी राजकुमार से कम न थे। उस समय देश में अंग्रेजों का साम्राज्य था, इस कारण से शिक्षा-दीक्षा रहन-सहन में बड़े लोग उन्हीं की नकल करते थे। पं० मोती लाल ने भी ऐसा हीं किया और १५ वर्ष की अवस्था तक जवाहर लाल की प्रारम्भिक शिक्षा अच्छे से अच्छे अध्यापकों द्वारा घर पर ही सम्पन्न कराया। इसके बाद अध्ययन के लिये उन्हें इङ्गलैंण्ड भेजा गया। वहाँ रहकर जवाहर लाल ने बी०एस०सी० और एम०ए० की परीक्षा उत्तीर्ण करने के उपरान्त वकालत की परीक्षा भी पास की। वहाँ से एक अच्छे वकील के रूप में जवाहर लाल नेहरू भारत आ गये।

अध्ययन के समय में ही जवाहर लाल ने पश्चिमी देशों का पर्यटन किया, जिससे वहाँ की स्वाधीनता, नवचेतना, नये-नये आविष्कार आदि को देखकर भारत की परतन्त्रता तथा पिछड़ेपन का अनुमान लगाया। उसी समय उनके मन में भारत को स्वतन्त्र कराने तथा इसको विकसित करने की भावना जागृत हुई। जिससे उन्होंने अपनी मातृभूमि को स्वतन्त्र कराने का संकल्प ले लिया। इङ्गलैंण्ड से वापस आने के तुरन्त बाद सन् १९१२ ई० में वे कांग्रेस के अधिवेशन में भाग लिया। तब से अनवरत कांग्रेस के कार्यों में हाथ बँटाते रहे।

जवाहरलाल जी अपने पिता के साथ ही प्रयाग में वकालत करना आरम्भ कर दिया। सन् १९१६ई० में कमला नेहरू के साथ उनका विवाह संस्कार सम्पन्न हुआ। सन् १९१७ में उनकी एकमात्र संतान इन्दिरा गांधी पैंदा हुई। दक्षिण अफ्रीका के भारतीयों के अधिकार की रक्षा के लिए महात्मा गांधी द्वारा चलाये गये सत्याग्रह आंदोलन को सफल बनाने के लिए सन् १९१४ ई० में

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पाँच हजार रुपये की राशि भेजे थे। क्योंकि गांधी जी के प्रति इनकी अगाध निष्ठा थी। वे जानते थे कि गांधी जी का सत्याग्रह आंदोलन ही अंग्रेजों को भारत से हटा सकता है, इसी कारण शुरूआत में ही उन्होंने उस आंदोलन को सहारा दिया।

इनकी जीवन गाथा कांग्रेस के जीवन गाथा के साथ जुड़ी हुई है। शुरू से ही ये कांग्रेस के सक्रिय सदस्य रहे, तथा देश की आजादी के लिए कार्य करते हुए अनेकों यातनाओं को सहन किया। जिस वक्त महायुद्ध शुरू हुआ उस समय कांग्रेस दो दलों में था, एक गरम दल, दूसरा नरम दल था। गरम दल के अगुआ लोकमान्य तिलक जी थे और नरम दल के महात्मा गांधी। अंग्रेजी हुकूमत ने यह घोषणा कर दिया था कि जब युद्ध समाप्त हो जायगा तब भारत को औपचारिक स्वतन्त्रता दे दी जायगी। परन्तु अंग्रेजों ने ऐसा नहीं किया, जिससे सम्पूर्ण भारत में असन्तोष की ज्वाला भड़क उठी। 'होम-रूल' के आंदोलन ने सम्पूर्ण देश में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया। जवाहर लाल जी इस आंदोलन के मन्त्री थे।

महात्मा गांधी ने जब भारत में सत्याग्रह आन्दोलन सन् १९१९ में शुरू किया है तो जवाहरलाल जी उससे प्रभावित हुए। इस आंदोलन में मोतीलाल की यह इच्छा नहीं थी की वे भाग ले, परन्तु इन्होंने भाग लिया। उसी समय पंजाब में 'जलियावाला बाग' का हत्याकाण्ड हुआ, जिसमें हजारों भारतीय मौत के घाट उतार दिये गये। इसका तगड़ा विरोध किया गया जिससे प्रभावित होकर सरकार ने इसके जाँच के लिये कमीशन गठित कर दिया। उस कमीशन में जवाहर लाल भी थे। जब उसकी रिपोर्ट सामने आयी तो सभी ने एक स्वर से उसकी प्रसंशा की। जिससे समाज में इनकी लोकप्रियता और अधिक हो गई।

कांग्रेस का सक्रिय सदस्य बनकर तथा गांधी जी के प्रभाव में आकर जवाहर लाल ने जिस त्याग का परिचय दिया वह सर्वविदित है। वे अपने CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection सभी राजसी वस्त्रों का त्यागकर खादी के मोटे कपड़े पहनने लगे, अपनी

वकालत छोड़कर देश के लिये दर-दर की ठोकरे खाने लगे तथा कई बार जेल की यातना भी सहन करना पड़ा। राष्ट्रीय कांग्रेस से इनका घनिष्ट सम्बन्ध था। मद्रास में जब कांग्रेस का सन् १९०३ में अधिवेशन हो रहा था तो एक दर्शक के रूप में उपस्थित हुये थे। इसके बाद से वे प्रायः सभी अधिवेशनों में सक्रिय भाग लेने लगे। जिस समय जेल में रहते थे उस समय इसमें सम्मिलित नहीं हो पाते थे। इसके परिणाम स्वरूप वे कांग्रेस के महामंत्री चुन लिये गये। लाहौर तथा लखनऊ कांग्रेस के आप अध्यक्ष भी थे।

जवाहर लाल जी अपनी पत्नी कमला नेहरू को बहुत मानते थे। वे भी उनको उसी तरह से प्यार करती थीं। परन्तु अकाल में ही कमला जी काल के गाल में चली गयीं। उनके बीमार होने पर नेहरू जी स्वीट्जरलैंण्ड जाकर उनका इलाज कराया परन्तु रोग भयंकर था शांत न हुआ। अन्त में वे चल बसी। उनके निधन से नेहरू जी के ऊपर गहरा आघात पहुँचा, परन्तु वे कर ही क्या सकते थे ?

जब दूसरा युद्ध १९३९ में शुरू हुआ तो, अंग्रेजों ने पुनः भारत से सहायता माँगी। इसके लिये इग्लैंण्ड से सर क्रीप्स आये थे, परन्तु महात्मा गांधी और जवाहर लाल आदि देश के गणमान्य नेता सहायता देने से साफ इनकार गये, अन्त में क्रीप्स निराश होकर वापस लौट गये। उसके जाने के बाद सरकार तथा कांग्रेस के बीच गहरी खाई पड़ गई। बम्बई में 'अगस्त सन् १९४२ ई० में भारतीय कांग्रेस कमेटी की बैंठक हुई, और उसमें 'भारत छोड़ो' नामक महत्वपूर्ण प्रस्ताव पारित किया गया। परिणाम-स्वरूप देश में क्रांति की आग सुलगने लगी और नेतागण गिरफ्तार कर लिये गये। नेहरू जी ढाई वर्ष तक आगा खाँ पैलेस में नजरबन्द रहे। इसके बाद १९४५ ई० में आप नैंनी सेन्ट्रल जेल में लाये गये। फिर यहाँ से बरेली भेज दिये गये। सन् १९४५ में फिर सबके साथ जेल से छोड़ दिये गये। आप जब जेल से छूटकर प्रयाग आये तो एक राजा की भाँति आपका स्वागत किया गया।

इसके बाद फिर जवाहरलाल जी देश के कार्य में जुट गये। इसके परिणाम स्वरूप १५ अगस्त सन् १९४७ ई० में भारत स्वतन्त्र कर दिया गया।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पं० जवाहरलाल नेहरू जी भारत के प्रधान मन्त्री बनाये गये। देश के कोने-कोने में प्रसन्नता की लहर उमड़ पड़ी। तब से नेहरू जी के नेतृत्व में भारत-वर्ष का सर्वाङ्गीण विकास होना प्रारम्भ हो गया। आज विश्व में भारत की जो प्रतिष्ठा कायम है वह उन्हीं की देन है।

पण्डित जवाहरलाल नेहरू एक कुशल वक्ता, उत्कृष्ट लेखक अच्छे उद्भावक तथा देश के प्रिय नेता थे। उनकी कार्य प्रणाली अत्यन्त विचित्र थी। किसी भी कार्य को वे बड़ी शीघ्रता से पूर्ण करना चाहते थे। वृद्धावस्था में भी उनके भीतर जो एक अपूर्व उत्साह एवं कार्य करने की लगन थी। वह अन्यत्र दुर्लभ थी। विश्व बन्धुत्व के माध्यम से वे समग्र संसार में शांति स्थापित करना चाहते थे। वे युद्ध के विरोधी थे। इसका यह तात्पर्य था कि वे स्वयं किसी देश पर आक्रमण नहीं करना चाहते थे। चीन ने जब भारत पर आक्रमण किया था, तो जवाहरलाल जी ने डटकर उसका मुकाबला किया, जिससे उसे पराजित होना पड़ा।

हर प्रकार से देश की उन्नति चाहने वाले, हिमालय पर्वत की तरह अडिग तथा सागर के समान गम्भीर जवाहरलालजी का निधन दिल्ली में २७ मई सन् १९६४ ई० को अचानक हृदय की गति रुक जाने से हो गया। उनके निधन से भारत देश की अपूरणीय क्षति हुई। इस दुःखद समाचार से सभी भारतवासी की आँखों के सामने अन्धकार छा गया।

—※—

१८. प्रियदर्शिनी इन्दिरा गांधी

कुछ व्यक्ति जन्म से ही महान होते हैं, कुछ परिश्रम से महान बन जाते हैं। कुछ ऐसे भी होते हैं जिन पर महानता थोप दी जाती हैं।

हमारी भूतपूर्व यशस्वी इन्दिरा गांधी एक ऐसे परिवार में पैंदा हुई, जहां त्याग, तपस्या, देश-सेवा, और साहस के गुण उनके रक्त कण में विद्यमान थे। परिश्रम के सहारे जीवित रहने वाले, आराम हराम का नारा बुलंद करने वाले पं० जवाहर लाल नेहरू के इंदिरा जी में महान बनने के गुण विकसित

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हुये। उनके सम्बन्ध में आचार्य जय गोपाल शर्मा के शब्दों में—"स्वनाम धन्या महती यशस्विनी, प्रधान मन्त्री प्रथितेयमिन्दिरा।"

आपका जन्म १९१७ ई० पुलिस से घिरे हुये प्रयाग के आनन्द भवन में हुआ। आपके पितामह पं० मोतीलाल नेहरू देश के प्रसिद्ध बैंरिस्टर थे। आपके पिता को संसार में आज कौन नहीं जानता? पं० जवाहरलाल नेहरू ने सुख-समृद्धि और ऐश्वर्य युक्त इनका पालन करके पिता के कर्त्तव्य का निर्वाह किया। इनकी माता कमला नेहरू भारतीय संस्कृति की प्रतीक एक आदर्श महिला थी।

इन्होंने बाल्यावस्था में भारत तथा इंग्लैण्ड में इतिहास तथा राजनीति की व्यावहारिक शिक्षा प्राप्त की। इसलिये शिक्षाकाल में इन्हें भारतीय और पाश्चात्य सभ्यता में जीवन यापन का अवसर मिला था। अध्ययन के साथ-साथ इनमें दूरदर्शिनी प्रवृत्ति विकसित हो गई थी। इनके अन्दर नेतृत्व की भावना का उदय हो रहा था। आपने १२ वर्ष की अवस्था में ही असहयोग आंदोलन के समय कांग्रेस की सहायता के लिये इलाहाबाद में वानर सेना के नाम से बालकों के दल का संगठन किया। ये बालक बड़े-बड़े नेताओं के सन्देश को जनसाधारण में पहुँचाते थे। इनके प्रमुख शिक्षा स्थल पूना, शांति-निकेतन, स्विट्जरलैंड और अन्त में आक्सफोर्ड रहे।

पच्चीस वर्ष की अवस्था में इनका विवाह फिरोज गांधी के साथ सन् १९४२ में हुआ था। आपके दो पुत्र राजीव तथा संजय थे। आपका वैंवाहिक जीवन अधिक दिन तक कायम नहीं रह पाया। १९६० ई० में आप पति-विहीन हो गयीं।

बाल्यावस्था से ही इनमें देश-सेवा की भावना विकसित हो गई थी। स्वतन्त्रता संग्राम की धारा देश के अन्तस्थल में अविरल गति से प्रवाहमान थी। तत्कालीन वातावरण के द्वारा प्राप्त अनुभूति से इनका मन क्षुब्ध होकर देश के प्रति प्रेम और उत्सर्ग की भावना से आन्दोलित हो उठा। आप अमेरिका, इंग्लैंड और योरप के विभिन्न देशों में भ्रमण करने के बाद समाज-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वादी विचार-धारा में विश्वास रखने लगीं। अपने अदम्य उत्साह एवं साहस के कारण देशभक्ति से प्रेरित होकर सन् १९४२ में आप जेल भी गयीं। भारत के विभाजन पर, महात्मा गांधी के आह्वाहन पर आप अपने प्राणों की चिंता न कर दिल्ली के दंगाग्रस्त क्षेत्रों का दौरा किया। अपनी इसी कार्यशीलता से आप १९५५ में कांग्रेस की सदस्या तथा १९५९ में कांग्रेस की अध्यक्ष चुनी गई। निरंतर देश सेवा में रत् रहने के कारण १९६५ ई० में पाकिस्तानी आक्रमण के समय जनता और देश के प्रहरी को प्रोत्साहित किया। इस प्रकार राजनैतिक रंगमंच पर ये प्रत्येक दृश्य में अपने को उपस्थित करने में समक्ष रहीं।

इन्दिरा जी का व्यक्तित्व दैवी शक्ति की भाँति ओजपूर्ण था। इनके मुख पर सदैव मुस्कान, शरीर में चुस्ती, चेहरे पर गम्भीरता लक्षित होती थी। आप दृढ़ सिद्धांतवादिनी थीं। उचित का पोषण और अनुचित का दमन करने की निष्ठा सदैव से ही उनके हृदय में जागृत रही है। आप अनुशासन प्रिय थीं।

लालबहादुर शास्त्री के निधन के बाद आप १९६६ ई० में भारत की प्रधान मन्त्री बनीं। उस समय देश के सामने घोर संकट की घड़ी थी। आपने देश से गरीबी दूर करने का प्रयास किया। सन् १९७१ ई० में पाकिस्तान को हरा कर अद्वितीय विजय प्राप्त किया। इसी के साथ बंगलादेश का नव-निर्माण हुआ यह संसार में मानव रक्षा तथा समाज रक्षा का प्रथम उदाहरण हुआ। जब पाकिस्तान लाहौर में शेख मुजीबुर्रहमान को फाँसी देना चाहा तो इन्दिरा जी ने उसके दोस्त अमेरिका को यह बता दिया कि अगर शेख का बाल भी बाँका हुआ तो दुनिया की कोई भी ताकत भारतीय सेना को पाकिस्तान को रौंद डालने से नहीं रोक सकती। इसका बड़ा भारी असर हुआ।

जब अपने ही देश में अन्तर्द्वन्द्व की ज्वाला भड़कने लगी तो आपने २० सूत्री कार्यक्रम की घोषणा १ जुलाई १९७५ ई० को की थीं। २६ जून १९७५ ई० को आपातकालीन स्थिति की घोषणा की गई। इसके बाद जनता पार्टी के साथ चुनाव में हारने पर आपने साहस एवं देश भक्ति का उदाहरण प्रस्तुत

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कर आपको १९७९ के चुनाव में प्रचण्ड बहुमत प्राप्त हुआ। ३१ अक्टूबर १९८४ ई० में आप देश के लिये बलिवेदी पर चढ़ी।

श्रीमती इन्दिरागांधी अत्यन्त गौरवशालिनी महिला के रूप में उपस्थित हुई। आप में दायित्वपूर्ण कार्यों के निर्वाह की क्षमता थी। आपने देशहित में अपने प्राणों का बलिदान देकर वास्तविक देश भक्ति का प्रदर्शन किया। क्योंकि आपके रक्त की आखिरी बूँद भी देश के काम आयी। संसार के इतिहास में आप नारी समाज के लिये प्रेरणा स्रोत के समान विद्यमान रहेंगी।

—*—

१९. युवानेता राजीव गांधी

कभी-कभी अनायास ही देश के ऊपर विपत्ति के बादल आ गहराते हैं। इतिहास साक्षी है ऐसे समय पर भारतवर्ष में महापुरुषों का आभिर्भाव होता रहता है। जब-जब इस पवित्र भूमि पर आपदा आई है, तब-तब कोई न कोई विशाल आत्मा पैंदा होकर विपत्ति को दूर भगाया है। यशस्वी प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी के देहावसान के समय देश कठिन परिस्थिति से व्यथित था। उसी समय श्रीराजीव गांधी जी ने प्रधान मन्त्री का पद ग्रहण करके देश में शांति को प्रवाहित किया।

युवा पीढ़ी के एकमात्र कर्मठ नेता, देश-सेवक, दूरदर्शी, संगठन और महान् प्रतिभा के धनी श्री राजीव गांधी का जन्म २० अगस्त सन् १९४४ ई० में इलाहाबाद जनपद में देश सेवा में समर्पित श्रीमती इन्दिरा गांधी के कोख से हुआ। आपके पिता श्री फिरोज गांधी थे। आपका जन्म ऐसी विषम परिस्थिति में हुआ था जब कि द्वितीय विश्व युद्ध अपनी पराकाष्ठा पर पहुँच चुका था। आपकी प्रारम्भिक शिक्षा लखनऊ में हुई। बाद में आपने देहरादून के एक पब्लिक स्कूल में शिक्षा ग्रहण की। इसके बाद आपको लन्दन के कैम्ब्रिज कालेज में दाखिल किया गया, वहाँ पढ़कर आप एक सफल पायलट के रूप में प्रसिद्ध हुये। साथ ही साथ आपने इंटर नेशनल फायर आफ इण्डिया एयर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कारपोरेशन' में भाग लिया। अपने पिता के देहावसान पर उनके अन्तिम संस्कार में सम्मिलित होने के लिए सन् १९७० में आप भारत आये। सन् १९६३ ई० में इटली की श्रीमती सोनियाँ के साथ आपका विवाह हुआ। सोनिया के पिता की सहायता से इटली में आप के द्वारा एक बड़े होटल का संचालन किया गया।

श्री संजयगांधी के मृत्यु के बाद सन् १९८० ई० में राजीव गांधी राजनीति में उतरे और अपनी लोकप्रियता के कारण शीघ्र ही आप 'अखिल भारतीय इन्दिरा कांग्रेस' के जनरल सेक्रेटरी चुन लिये गये। ३१ अक्टूबर १९८४ में श्रीमती इन्दिरा गांधी के देहावसान के बाद आपने प्रधान मन्त्री के पद की शपथ ग्रहण की। उस समय देश की स्थिति बड़ी ही नाजुक हो गई थी। परन्तु आपने अपनी दूरदर्शिता के कारण देश की स्थिति को सँभालने में सफलता प्राप्त कर ली। इसके बाद लोकसभा के चुनाव में भारी बहुमत हासिल कर प्रधान मन्त्री के रूप में देश की बागडोर अपने हाथ में ले लिया। आपने देशद्रोहियों के दबाने तथा देश में शांति व्यवस्था कायम रखने के लिये बड़ी सूझ-बूझ का परिचय दिया। जिससे आप की महानता का अनुमान होने लगा।

देश की अखण्डता बनाये रखने के लिये आपने अनेकों महत्वपूर्ण कदम उठाये। अपनी माता के गुणों से आप युक्त हैं। आपके अन्दर अनुशासनप्रिय दूरदर्शिता आदि गुण भरपूर हैं। आप जिन परिस्थितियों में सफलता हासिल की है शायद ही अन्य कोई सफल हो पाता। आपके समय में पूर्व से चली आ रही असम समस्या एवं पंजाब समस्या विकराल रूप धारण कर लिया था। इन समस्याओं को सुलझाने में आपने जिस साहस और सूझ का परिचय दिया है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि आपके ही नेतृत्व में देश का कल्याण सम्भव है।

देश की समस्याओं को दूर करने के लिये आपने अनेकों विदेश यात्रायें की। १२ जून १९८५ ई० में आप अमेरिका गये और वहाँ के राष्ट्रपति रीगन से

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अखण्डता कायम रखने के लिए समझौता किया। इसके लिये राष्ट्रपति रीगन ने आपका सम्मान किया। इस समझौते के परिणाम स्वरूप भारत अमेरिका एक दूसरे को अपना अभिन्न अंग समझने लगे। इसी प्रकार अनेकों प्रयास करके आपने देश की अखण्डता कायम रखने का सफल प्रयास किया।

बीच में आपके मन्त्रि-मण्डल में खींचातानी हुई, जिसको आपने साहसपूर्ण धैर्य से दूर करने में सफल हुए। बोफोर्स और फेयर फैक्स के मामले का हल आपने बुद्धिमत्ता पूर्ण ढङ्ग से किया और अपने को कलंकरहित प्रमाणित कर दिया। इसप्रकार से श्री राजीवगांधी जी अनेकों कठिनाइयों को दूर करके भारत में सुख और शांति की व्यवस्था लाने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहे। इसके बाद जनतादल वी० पी० सिंह से चुनाव में हारने पर आपने साहस एवं देशभक्ति का उदाहरण प्रस्तुत किया। १९९१ के चुनाव के दौरान ही सन् १९९१ ई० में आप देश के वलिवेदी पर चढ़े।

श्री राजीव गांधी अत्यन्त गौरवशाली युवा नेता के रूप में उपस्थित हुए। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि आप अपनी माता के समान ही सच्ची लगन से देश को शांति तथा सुखी, समृद्धिशाली बनाना ही आपका मूल उद्देश्य था। आप में दायित्वपूर्ण कार्यों को करने की क्षमता थी आप में साहस दृढ़ता उदारता आदि अनेक गुणों का भरपूर समावेश था आपने देशहित में अपने प्राणों का वलिदान देकर वास्तविक देशभक्ति का परिचय अपने रक्त की आखिरी बूंद देकर किया। जिससे आपका नाम भी अपने पूर्वजों की तरह से भारत के ही नहीं अपितु विश्व के इतिहास में स्वर्णिम अक्षरों से लिखा जा सके।

२०. महाकवि कालिदास

कविकुल गुरु कालिदास की गणना विश्व के महान कवियों में की जाती हैं। इस महाविभूति को पाकर भारत भूमि गौरवान्वित हो उठी। इनकी वाणी इतनी समर्थ थी कि इनके वर्णन सजीव से प्रतीत होते हैं। इनकी भाव भूमि उदार एवं उदात्त है कि उनको महाकवि के साथ-साथ महामानव कहा जाय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी । कालिदास की रचनाओं में जहाँ एक ओर सरसता का साम्राज्य है तो वहीं दूसरी ओर लोकप्रियता का भाव है। जहाँ एक ओर अलंकारों का स्वाभाविक सौन्दर्य है तो दूसरी ओर यथार्थता कूट-कूट कर भरा गया है । जहाँ एक ओर प्रकृति का स्वाभाविक चित्रण हैं तो दूसरी ओर लोक के साथ उसका पूर्ण सामञ्जस्य भी है । यही कारण है कि उनकी कविता सर्वप्रिय है । आदिकवि वाल्मीकि तथा व्यास के बाद कालिदास ही ऐसे महाकवि हैं, जिनकी रचनाओं में संस्कृति के तत्व सर्वाधिक निहित हैं ।

कवि देश और काल की सीमाओं से परे होता है । इसी कारण से कालिदास ने अपने जन्म स्थान तथा जन्मकाल के विषय में कहीं कुछ भी नहीं लिखा है । ऐसी परिस्थिति में आज जब ऐतिहासिक साक्ष्यों के आधार पर कालिदास का जन्म स्थान तथा जन्म काल पर विवेचन किया जाता है तो मतभेद होना स्वाभाविक है । इनके जन्म स्थान के विषय में दो मत हैं। कुछ लोग काश्मीर को उनका जन्म स्थान बताते हैं और कुछ लोग उज्जयनी को स्वीकार करते हैं । हमको ऐसा प्रतीत होता है कि वे काश्मीर में पैदा हुए होंगे और मालव गणाधिपति वीर विक्रमादित्य के दरवार में रहते थे । क्योंकि विक्रमादित्य के नवरत्नों में उनका प्रमुख स्थान था । अतः यह सिद्ध होता है कि दोनों स्थानों से उनका साक्षात् सम्बन्ध था । इसी कारण से दोनों स्थानों के सरस वर्णन उनकी रचनाओं में मिलते हैं ।

महाकवि कालिदास के जन्म के विषय में अनेक मत प्रचलित हैं। कोई मालविकाग्निमित्र के आधार पर शुङ्गवंशीय राजा अग्निमित्र के बाद अर्थात् ई० पू० द्वितीय शताब्दी को उनका समय निर्धारित करता है । कोई विक्रम संवत के स्थापक मालवगण के प्रमुख वीर विक्रमादित्य के नवरत्नों में उनकी प्रसिद्धि के आधार पर विक्रम संवत के प्रारम्भ में इनकी स्थिति वतलाता है। कोई उनकी रचनाओं में गुप्तकालीन बतलाता है । अधिकांश लोग अन्तिम म- में है, अर्थात् वे गुप्तकाल में पैदा हुये थे ।

एक किंवदन्ती के अनुसार कालिदास बचपन में महामूर्ख थे । ये पढ़ना लिखना नहीं जानते थे । एक राजा के घर विद्योत्तमा या विद्यावती नाम की एक राजकुमारी थी । जो अत्यन्त ही विदुषी थी कि जो उसे शास्त्रार्थ में हरा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

देगा, उसी के साथ उसका विवाह होगा। अनेक पण्डित आये परन्तु वह किसी से परास्त नहीं हुई। अन्त में सभी पंडितों ने यह निश्चय किया कि इसका विवाह किसी मूर्ख से करा दिया जाय, जिससे यह आजीवन रोती रहे। पता लगाने पर एक व्यक्ति जंगल में ऐसा मिला कि जो जिस डाल पर बैठा था उसी को काट रहा था। उसको महामूर्ख जानकर पंडितों ने उसका विवाह विद्योत्तमा के साथ करा दिया। उसकी चालाकी से विद्यावती को यह मालूम नहीं हुआ कि यह महामूर्ख है। जब वे रात को उसके साथ राजमहल में सोई थीं तो उन्हें यह मालूम हो गया कि यह तो महामूर्ख है। पंडितों को भला-बुरा कहते हुए राजकुमारी ने उसे घर से बाहर निकाल दिया। वह मूर्ख पहले तो लज्जित हुआ, परन्तु बाद में उसने महाकाली की उपासना करने का निश्चय किया। देवी की कृपा से कालिदास अपने कार्य में सफल हो गये। उन्होंने तुरन्त अपनी पत्नी विद्योत्तमा के पास आकर किवाड़ खोलने को कहा—"अनावृतं कपाटं द्वारं देहि", अर्थात् किवाड़ खोलो। स्त्री बोली—'अस्ति कश्चिद्वाग्विशेषः ? अर्थात् क्या कुछ विशेष बात है ? बस क्या था कि काली के दास उस महाकवि ने स्त्री के एक-एक पद पर एक-एक काव्य की रचना कर डाली। 'अस्ति' को लेकर कुमारसम्भव, 'कश्चित्' को लेकर मेघदूत तथा 'वाग्' को लेकर रघुवंश की रचना कर डाली। ये तीनों ग्रंथ इसके पुष्ट प्रमाण के रूप में हैं। इसके बाद पत्नी प्रसन्न हुई, तथा दोनों सुखमय जीवन यापन करने लगे।

महाकवि कालिदास द्वारा उक्त तीनों काव्यों के अतिरिक्त तीन नाटक, एक खंडकाव्य, तथा एक-एक मुक्तक काव्य भी लिखा गया है। नाटकों के नाम हैं—१. अभिज्ञानशाकुन्तलम् २. विक्रमोर्वशीय तथा ३. मालविकाग्निमित्र। खंडकाव्य का नाम है—मेघदूत तथा मुक्तक काव्य का नाम है—ऋतुसंहार। यो तो महाकवि की सभी रचनायें अद्भुत हैं। परन्तु अभिज्ञानशाकुन्तलम् विशेष उल्लेखनीय है। कहा भी जाता है कि—

"काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला"। मेघदूत भी अपने ढंग का निराला काव्य है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

महाकवि कालिदास की कविता की विशेषता यह है कि पद-पद माधुर्य प्रसाद तथा रस-पेशलता, अर्थ सौष्ठव तथा अलंकार के झंकार मिलते हैं। इनकी कविता में हृदय पक्ष की प्रधानता है। मानव-हृदय की परिवर्तनशील वृत्तियों को समझकर उन्हें अभिव्यक्त करने में आपको पूर्ण सफलता प्राप्त हुई है। उपमा के लिए तो आप विदित ही हैं क्योंकि कहा भी जाता है कि—'उपमा कालिदासस्य'। प्रकृति के वर्णन में भी आपने अद्वितीय सफलता हासिल की है। स्थान-स्थान पर आपने पर्वत, वन तथा नदियों का सजीव चित्रण किया है। आपके नाटकों की विशेषता यह है कि उसमें प्रयुक्त सभी पात्र सजीव से हैं। भाषा का प्रयोग भी आपने पात्रों के अनुकूल ही किया है। जो बात कहना है वे पात्रों के मुख से ध्वनित होती है। उसको कहा नहीं जाता है। इन्हीं सब गुणों के कारण आप की कृतियाँ विश्व साहित्य में अनुपम स्थान रखती हैं।

कालिदास के काव्य एवं नाटक भारतीय संस्कृति के आधार पर अनुप्राणित है। आपने श्रुति स्मृति को आधार मानकर जिस मानवतामयी संस्कृति क प्रदर्शन किया है, वह हमारे इतिहास की अमर निधि है। आपके साहित्यरूप दर्पण में तत्कालीन समाज की मनोरम झाँकी झलकती है। जिसके आधार प कहा जा सकता है कि उस समय का समाज, सत्य, त्याग, तपस्या, औदा तथा स्नेह आदि गुणों से विभूषित था। अतः हम कह सकते हैं कि कालिदा का काल वास्तव में ही भारत का 'स्वर्णकाल' था।

—:*:—

२१. प्रिय कवि गोस्वामी तुलसीदास

सत्रहवीं शताब्दी में हिन्दुओं की दशा बड़ी ही दयनीय हो गई थी मुसलमान शासकों से प्रताड़ित हिन्दू जनता अपने भविष्य के प्रति पूर्णत निराशा हो चुकी थी। उनके आँसुओं को पोछनें वाला कोई नहीं था। ऐ भीषण समय में हिन्दी साहित्य के प्राङ्गण में बहुत से आदर्श प्रतिभा सम् एवं लोक मंगल की कामना करने वाले कवि हो चुके थे, जिनकी कीर्ति कौमु आज भी देदीप्यमान हो रही है। उन्हीं में से महाकवि तुलसीदास जी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

एक हैं। ये सगुणोपासना के राम-भक्ति शाखा के कवि थे। इन्होंने मर्यादा पुरुषोत्तम राम के सगुण तथा लोक कल्याणकारी चरित्र को उस समय की जनता के सामने रखकर देश का बड़ा भारी उपकार किया। जिससे निराशा के अथाह गर्त में पड़े हुए समाज को एक आशा की किरण मिली। सोई हुई मानवता को उद्‌बोधन मिला।

विभिन्न अन्तः साक्ष्यों के आधार पर विद्वानों ने यह निर्माण किया है कि गोस्वामी तुलसीदासजी का जन्म श्रावण शुक्ल सप्तमी को संवत् १५५४ में बाँदा जिले के राजापुर नामक ग्राम में हुआ था। ये कुलीन सरयू पारीण परिवार में पैदा हुए थे। इनके जन्म के सम्बन्ध में निम्नलिखित दोहा प्रसिद्ध है—

"पन्द्रह सौ चौवन विषै कालिन्दी के तीर।
श्रावण शुक्ला सप्तमी तुलसी धर्‍यो शरीर॥"

इनके पिता का नाम आत्माराम दुबे तथा माता का नाम हुलसी देवी था। जन्म के समय ये रोये नहीं, बल्कि इनके मुख से 'राम' शब्द निकला था। इसी कारण इनके बचपन का नाम 'रामबोला' पड़ा। पैदा होने पर पाँच वर्ष की अवस्था के लगते थे। इनके दाँत भी निकले हुए थे। ये अभुक्त मूल नक्षत्र में पैदा हुए थे। पिता ने इनको राक्षस समझकर उपेक्षा की, परन्तु माता हुलसी ने वात्सल्यवश इनकी सुरक्षा का भार मुनिया नामक दासी को सौंप दिया। कुछ दिन ही बाद इनकी माता का स्वर्गवास हो गया। जब तुलसीदास पाँच वर्ष की अवस्था के हुए तो मुनिया भी मर गई। पिता से उपेक्षित बालक 'रामबोला' इधर-उधर भटकने लगा। दो वर्ष बाद बाबा नरहरि दास ने इन्हें अपने यहाँ शरण दिया। उन्होंने इनका संस्कार करके शिक्षा-दीक्षा का प्रबंध किया। बाबा जी प्रतिदिन इन्हें रामकथा सुनाया करते थे। इन्हीं के साथ ये काशी आये, और उनके गुरुस्वामी रामानन्द जी के निवास स्थान पंचगंगा घाट पर रहने लगे। वहाँ पर महात्मा शेष सनातन जी ने इन्हें वेद, पुराण तथा दर्शन आदि अनेक विद्याओं का अध्ययन कराया। पन्द्रह वर्षों तक अध्ययन करने के बाद गोस्वामी जी अपनी जन्मभूमि राजापुर आये। गाँव के लोगों

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

के आग्रह करने पर वे वहीं रहकर लोगों को रामकथा सुनाया करते थे । कुछ
दिनों बाद उनका विवाह दीनबन्धु की परम सुन्दरी कन्या रत्नावली के साथ
हुआ । विवाह के बाद तुलसी जी पत्नी सहित सुखमय जीवन बिताने लगे ।

तुलसीदास जी पत्नी में इतने आसक्त हो गये कि एक दिन जब वह अपने
नैंहर चली गई, तो उसके पीछे-पीछे आधी रात को उसके पास पहुँचे । वहाँ
पर उनको देखकर रत्नावली को क्रोध आ गया, उन्हें फटकारने लगी । उसने
कहा कि—

"अस्थि-चर्ममय देह मम, तामे ऐसी प्रीति ।
तैसी जो श्री राममँह, होति न तौ भवभीति ॥"

इस बात को सुनकर तुलसीदास जी के मन में वैराग्य उत्पन्न हो गया
वे तुरन्त काशी आकर वैराग्य जीवन बिताने लगे । इसके बाद वे ती
यात्रा के लिए निकल पड़े । वे अयोध्या, जगन्नाथपुरी, रामेश्वर, बदरिकाश्र
द्वारिका आदि तीर्थों का उन्नीस वर्षो तक भ्रमण करते हुये अन्त में चित्र
आये । यहाँ उन्होंने, गीतावली तथा कृष्ण गीतावली की रचना करके अयो
चले गये । वहीं पर उन्होंने सं० १६३१ में श्री रामचरित मानस की र
आरम्भ की और उसे दो वर्ष सात महीने में पूरा किया । इसका कुछ भा
काशी में भी लिखे थे । इन तीनों के अलावा उन्होंने नौ ग्रंथ और
उनका नाम इस प्रकार है । दोहावली, कवितावली, विनयपत्रिका, राम
नहछू, रामाज्ञा-प्रश्नावली, जानकी-मंगल, बरवै रामायण तथा वैराग्य
पनी । काशी में अस्सी घाट पर संवत् १६८० में श्रावण कृष्णा तीज
शनिवार को इनका स्वर्गवास हो गया । इस विषय में निम्न दोहा प्रचलि

"संवत सोलह सौ असी असी गंग के तीर ।
श्रावण कृष्णा तीज शनि तुलसी तज्यो शरीर ॥"

तुलसीदास जी की महत्ता का प्रतिपादक उनका साहित्य रामचरित
है जो आज झोपड़ी से लेकर महलों तक श्रद्धा और आदर के साथ पढ़ा
सुना जाता है । उसमें भगवान राम का चरित्र जितना उज्ज्वल एवं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कारक है, ठीक उसके अनुरूप ही कवि ने उसे चित्रित करने का प्रयास किया है। उसकी सफलता का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि आज भी इसकी चौपाइयाँ विद्वानों से लेकर साधारण जनता की जिह्वा पर विराजमान हैं। इसे समझने में कोई कठिनाई नहीं होती है। हाँ, भले ही कहीं-कहीं विषय की गम्भीरता के कारण वह साधारण लोगों की समझ से बाहर हो। इसमें हृदय के सभी भावों का चित्रण किया गया है। तुलसी की भावुकता की जितनी भी प्रसंशा की जाय, वह कम है।

गोस्वामी तुलसीदास जी की सबसे महान् विशेषता यह थी, कि वे तत्कालीन समाज की गतिविधि को पहचाना और उसके अनुरूप श्री रामचरितमानस महाकाव्य का प्रणयन किया। मानस आदर्श चरित्रों का आकर है। इसमें पिता-पुत्र, भाई-भाई, पति-पत्नी, राजा-प्रजा, स्वामी-सेवक, शत्रु-मित्र, सन्तवचन आदि से गर्भित होने के साथ अत्यन्त शिक्षाप्रद परमपावनी अमृतमयी परमपवित्र गंगा की धारा की भाँति सकल लोक मंगलकारिणी तापत्रयनाशिनी शक्ति सम्पन्न है। इसी से आजतक सर्वमान्य होकर महाकवि को अमरत्व प्रदान किया है।

२२. हमारे पर्व

हमारा देश भारत धर्म प्रधान देश है। यहाँ पर धार्मिक उत्सवों तथा पर्वों को मनानें की परम्परा है। इसमें रक्षाबन्धन, विजयादशमी, दीपावली तथा होली आदि मुख्य हैं। जब भारतवर्ष स्वतन्त्र हो गया तब से यहाँ कुछ राष्ट्रीय पर्व मनाये जाने लगे। राष्ट्रीय उत्सवों में १५ अगस्त को स्वतंत्रता दिवस, २६ जनवरी को गणतन्त्र दिवस, २ अक्टूबर को गांधी जयन्ती आदि मुख्य हैं। धार्मिक पर्वों का महत्व अपनी जगह पर हैं। राष्ट्र, धर्म से बढ़कर होता है। इसके आधार पर राष्ट्रीय पर्व धार्मिक पर्वों से अधिक महत्वशाली सिद्ध होते हैं। इन पावन पर्वों से राष्ट्रनीति को एक नया मोड़ मिलता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानव जीवन धारा को नई दिशा मिलती है । इनको मनाना हम भारतीयों का परम पवित्र कर्त्तव्य है ।

भारतवर्ष के इतिहास में १५ अगस्त सन् १९४७ ई० का दिन स्वर्णाक्षरों में लिखा जायगा । क्योंकि इसी दिन हमारा देश पराधीनता के पाश से मुक्त हुआ था । इसी दिन हम लोग अपनी अमूल्य निधि, जन्मसिद्ध स्वतन्त्रता को पाये थे । इस पुनीत पर्व का उत्सव दर्शनीय था । इसमें जनता तथा सर-कार दोनों का सहयोग था । सभी के हृदय उल्लसित थे तथा शरीर में नई चेतना तथा स्फूर्ति दिखाई दे रही थी ।

रात को १२ बजे जब १५ तारीख आरम्भ हुई, उस समय शंख-ध्वनि से गगन मंडल गूँज उठा । भारतीय विधान से स्वतन्त्रता का आह्वान किया गया । जगह-जगह रामधुन होने लगी । कहीं-कहीं रामायण तथा गीता का पाठ होने लगा । सम्पूर्ण भारत स्वतन्त्रता देवी के स्वागत के लिये अपने पलक पाँवड़े बिछाये हुये 'भारतमाता की जय' की ध्वनि करता हुआ हाथ जोड़े खड़ा था । उनके स्वागत के लिए नाना प्रकार के गीत गाये जा रहे थे । यथा—

'सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा ।
हम बुलबुले हैं इसके यह गुलसिताँ हमारा ॥

× × ×

शहीदों की मजारों पर लगेगें हर बरस मेले ।
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशाँ होगा ॥

सुबह होते ही प्रभात फेरियाँ होने लगीं तिरंगे झण्डे से पूरा भारत च... उठा । "विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा ।" को ... स्वरों से गाया जाने लगा । प्रत्येक स्थानों पर तिरंगा झण्डा फहरा रहा था । सुबह साढ़े दस बजे झण्डा फहराने के बाद बालकों में मिठाइयाँ बाँटी गयीं । इस दृश्य से ऐसा प्रतीत हो रहा था कि मानों बच्चे ही राष्ट्र के कर्णधार ... स्वतन्त्रता का मीठा फल इन्हें ही चखना है । अतः इसकी सुरक्षा भी जा... इन्हें तत्परता पूर्वक करनी चाहिए ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शाम के समय सभी जगह सार्वजनिक सभाओं का आयोजन किया गया। वक्ताओं ने राष्ट्रीय आन्दोलन का इतिहास बताते हुए स्वतन्त्रता का मूल्यांकन किया। महात्मा गान्धी, सुभाषचन्द्र बोस, पं० जवाहरलाल नेहरू आदि वक्ताओं ने देश सेवकों की प्रसंशा में उनके त्याग तथा तपस्याओं की चर्चा करते हुए मार्मिक भाषण दिये।

सरकारी भवन को दीप से जलाकर सजाये गये। कहीं-कहीं भारत माता का मन्दिर बनाया गया। कहीं स्वतन्त्रता देवी के मन्दिर में गांधी जी तथा नेहरू जी आराधनारत दिखाये गए थे। इसके अतिरिक्त रेडियों द्वारा बन्दे-मातरम्''''तथा जनगणमन''''''''आदि राष्ट्रीय गीतों का प्रसारण किया गया। जिसको सुनकर महान शान्ति का अनुभव हो रहा था। जिस प्रकार स्वतन्त्रता दिवस था उसी प्रकार उसका उत्सव मनाया गया। हम लोग हर वर्ष उस पावन पर्व को धूमधाम से मनाते हैं। तथा स्वतन्त्रता प्राप्ति में अपने प्राणों की बाजी लगाने वाले शहीदों के प्रति श्रद्धासुमन की अञ्जलि समर्पित कर अपने को धन्य मानते हैं।

दूसरे राष्ट्रीय पर्व को गणतन्त्रता दिवस के नाम से जाना जाता है। जो २६ जनवरी सन् १९५० को सम्पन्न हुआ था। १५ अगस्त सन् १९४७ को हम लोग स्वतन्त्र तो हो गये थे परन्तु आधे रूप से, पूर्ण रूप से नहीं। वास्तविक स्वतन्त्रता २६ जनवरी सन् १९५० को ही मिली थी। इसी दिन हम लोग अपने द्वारा बनाये गये संविधान के अनुसार अपने देश का शासन भार अपने कन्धे पर रखा। इसी दिन हम लोग भीतरी तथा बाहरी मामलों में पूर्ण स्वतन्त्र हुये थे। पूरा उत्तरदायित्व अपने हाथ में आ गया था किसी प्रकार की कोई परतन्त्रता नहीं रह गयी थी। गणतन्त्र दिवस का भी ऐति-हासिक तथा राजनैतिक महत्व है। प्रभुसत्ता सम्पन्न गणतन्त्र की घोषणा का यह दिन भी भारतीय इतिहास में स्वर्णाक्षरों से लिखा जायगा। यह राष्ट्रीय पर्व भी अद्वितीय है। प्रतिवर्ष हम २६ जनवरी को गणतन्त्र की प्रतिज्ञायें दुहराते हैं तथा उत्सव धूम-धाम से मनाते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तीसरा राष्ट्रीय पर्व गांधी जयन्ती का है, जो प्रतिवर्ष दो अक्टूबर को मनाया जाता है। भारत को स्वतन्त्र कराकर गणतंत्र के रूप में लाने वाले पूज्य गांधी जी ही थे। वे व्यक्ति नहीं राष्ट्र थे। जिसके निधन पर सारा राष्ट्र विलख उठा राष्ट्र में खलबली मच जाय तथा आबालवृद्ध सभी दुखानुभूति में विमग्न हो, इस प्रकार का व्यक्तित्व साधारण नहीं हो सकता वह राष्ट्र का सच्चा प्रतिनिधि नेता ही हो सकता है। जिसने स्वतन्त्रता संग्राम में अपना पूरा जीवन अर्पित किया और अहिंसा तथा सत्य के बल पर प्रबल शत्रु को पराजित करके देश को आजादी दिलवायी वह गांधी क्या मानव था? नहीं, वे तो साक्षात् ईश्वर के अवतार थे। उनकी जयन्ती राम, कृष्ण तथा बुद्ध की तरह से मनायी जानी चाहिए। अतः इस तिथि का भी राष्ट्रीय महत्व है। इस दिन हम लोगों को पूज्य बापू के गुणों की चर्चा कर अपना जीवन उन्हीं के समान आदर्शमय बनाने की प्रतिज्ञा करनी चाहिए। इनकी दी हुई स्वतन्त्रता, इनके बताये हुये मार्ग पर चलने से ही इनकी सुरक्षा हो सकती है। दो अक्टूबर का पावनपर्व प्रतिवर्ष हमको यही याद दिलाने के लिए आता है।

२३. स्वतन्त्रता दिवस

भारतवर्ष के राष्ट्रीय पर्वों में स्वतन्त्रता दिवस अपना महत्वपूर्ण स्था[न] रखता है। स्वतन्त्रता दिवस का अर्थ हैं, वह दिन जिसमें स्वतन्त्रता प्राप्त हुई अर्थात् हर वर्ष अगस्त माह की पन्द्रह तारीख को स्वतन्त्रता दिवस के नाम [से] मनाते हैं, क्योंकि १५ अगस्त सन् १९४७ ई० में भारत वर्ष को औपचारि[क] रूप से स्वतन्त्रता मिली थी। इसको हम भारत भाग्योदय दिवस भी कह सक[ते] हैं। १५ अगस्त सन् १९४७ ई० भारत के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में लि[खा] जायगा। यह वह दिन था, जब शताब्दियों के पराधीनता पाश से भारत मु[क्त] हुआ। यह दिन था, जब सर्वप्रथम हमने जन्म सिद्ध स्वतन्त्रता प्राप्त की। [यह] दिन था, जब देश पर मर मिटने वाले अमर शहीदों को हमने नि[...]

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

होकर श्रद्धा से स्मरण किया और उनके चरणों में पुष्प चढ़ाये। यह वह दिन था, जब हमारे राष्ट्रपिता की अहिंसा का प्रयोग सफल हुआ। यह वह दिन था, जब हमारे नेताओं की साधना पूर्ण हुई। अतः हम लोगों के लिए यह पर्व गर्व तथा गौरव का दिन है। इसलिए यह हमारे राष्ट्रीय पर्वों में सर्वश्रेष्ठ है।

इस पावन पर्व का उत्सव देखने योग्य था। इसमें जनता तथा सरकार दोनों का पूर्ण सहयोग था। सबके अन्दर नयी चेतना तथा स्फूर्ति दिखाई पड़ रही थी। सबका हृदय उल्लास से छलक रहा था। बालक से लेकर बुड्ढे तक उत्सव मनाने के लिए उत्सुक थे। एक दिन पहले से ही तैयारी हो रही थी। स्वतन्त्रता देवी के स्वागत के लिए जगह-जगह पर तिरंगी झंडियाँ सजाई गयी थी। केले के खम्भों से बनाये गये द्वारों पर आम की पत्तियाँ बाँधी गई थी। इनके नाम उन राष्ट्रीय नेताओं के नाम पर रखे गये थे, जिनका स्मरण मात्र भारतीयों का मस्तक श्रद्धा से झुका देता था। कहीं 'गान्धी द्वार' कहीं पर 'जवाहर द्वार' कहीं 'सुभास द्वार' तो कहीं पर 'भारतमाता द्वार' आदि द्वारों का निर्माण एक दिन पूर्व ही सम्पन्न हो गया था। इनकी सजावट अनोखी थी। नगर-नगर घर-घर, डगर-डगर तिरंगे झंडे ही लहरा रही थी। पूरे देश में चहल-पहल होने से रात भर किसी को नींद नहीं आई। लाखों करोड़ों की कीमत वस्तुओं से सजावट देखने योग्य थी। उस समय स्वतन्त्रता देवी के स्वागत में सभी वस्तुयें तुच्छ सी मालूम पड़ती थी।

अर्धरात्रि के समय जब १५ अगस्त की शुरूआत हुई तो उस समय शंख ध्वनि के तुमुल घोष से गगन मण्डल गूंज उठा। भारतीय परम्परा के अनुसार स्वतन्त्रता देवी का आह्वाहन किया गया। जगह-जगह राम नाम का संकीर्तन आरम्भ हो गया कहीं रामायण तो कहीं पर गीता का पाठ होने लगा। सभी भारतीय स्वतन्त्रता देवी के स्वागत में अपने पलक पाँवड़े बिछाये हुए 'भारत माता की जय' की ध्वनि करता हुआ हाथ जोड़े खड़े थे। उनके स्वागत में नाना प्रकार के गीत भी गाये जा रहे थे। जैसे-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सारे जहाँ से अच्छा हिन्दोस्ताँ हमारा।
हम बुलबुले हैं इसके यह गुलसिताँ हमारा॥

× × ×

शहीदों की मजारों पर लगेंगे हर बरस मेले।
वतन पर मिटने वालों का यही बाकी निशाँ होगा॥

सुबह होते ही प्रभात-फेरियाँ लगने लगीं। तिरंगे झण्डों से सम्पूर्ण भारत लहरा उठा। 'विजयी विश्व तिरंगा प्यारा, झण्डा ऊँचा रहे हमारा' का ऊँचे स्वर चक्रांकित तिरंगे झण्डे से सुसज्जित हो गये। घर-घर, गाँव-गाँव झण्डे फहराये गये। हमारी स्वतन्त्रता के प्रतीक ये झण्डे आकाश में लहरा कर हमें स्वर्ग के आनन्द की ओर इशारा कर रहे थे। प्रातः ध्वजोत्तोलन का कार्य सम्पन्न होने के बाद बालकों को मिठाइयाँ बाटी गयी। ये मिठाइयाँ मानों इस बात की प्रतीक थीं कि ये बालक ही भारत के भावी कर्णधार हैं। स्वतन्त्रता के मीठे फल का रसास्वादन इन्हें ही करना है। अतः इसकी रक्षा इन बालकों को जी जान से करना चाहिए।

शाम के समय सार्वजनिक सभाओं का समायोजन किया गया। ये आयोजन भी सभी जगह हुये। वक्ताओं ने राष्ट्रीय आंदोलन का इतिहास बताते हुये स्वतन्त्रता का मूल्यांकन किया। महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस, पं० जवाहरलाल नेहरू आदि वक्ताओं ने देश सेवकों की प्रशंसा में मार्मिक व्याख्यान दिए और उनके त्याग एवं तपस्याओं की चर्चा किए।

सूर्यास्त होने पर शाम का दृश्य भी देखने योग्य था। प्रत्येक घर दीपमालायें सजायी गयीं। सरकारी भवन भी दीपकों से जगमगा उठे। दुकानदारों ने अपनी दुकानों को सुसज्जित किया। दीपकों और बिजली के बल्वों की सजावट का तरीका अनोखा था। कहीं-कहीं भारत माता का मन्दिर बनाया गया था। कहीं महात्मा गांधी की दाण्डी यात्रा का दृश्य दिखाया गया था। कहीं स्वतंत्रता देवी के मंदिर में गांधी तथा नेहरू को आराधनारत दिखाया गया था। इन सब के अतिरिक्त रेडियों द्वारा वन्देमातरम्, तथा जनगणमन''''

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आदि राष्ट्रीय गीतों का प्रसारण हो रहा था। जिसको सुनकर परम तृप्तिकी अनुभूति होती थी। इतना आकर्षक था वह स्वतन्त्रता दिवस कि उसका वर्णन शब्दों के माध्यम से नहीं किया जा सकता। भारतीय इतिहास का वह एक अभूतपूर्व दिन था। उसका उत्सव भी उसी शान से मनाया गया।

प्रतिवर्ष उस पर्व का उत्सव हम धूम-धाम से मनाते हैं। भारतीय लोग अमर शहीदों के प्रति श्रद्धांजलि सुमन समर्पित कर अपने को धन्य मानते हैं। १५ अगस्त हमें देश की एकता एवं अखण्डता को अक्षुण रूप से कायम किये रहने का विशेष सन्देश प्रदान करता था।

२४. विजयादशमी

वैसे तो भारतवर्ष में हर महीनें कोई न कोई हिन्दू त्योहार मनाया जाता रहता है। परन्तु प्रचलन की दृष्टि से चार उत्सव अधिक महत्वशाली हैं— १—श्रावणी या रक्षाबन्धन, २—विजयादशमी, ३—दीपावली तथा ४—होली। इसमें श्रावणी का अधिक सम्बन्ध ब्राह्मणों से, विजयादशमी का क्षत्रियों से, दीपावली का वैश्यों से तथा होली का शूद्रों से होता है। अर्थात् वर्ण विशेष के लिये उत्सव विशेष बनाये गये हैं। अतः यह कहा जा सकता है कि विजयादशमी क्षत्रियों का त्योहार है।

विजयादशमी का पर्व क्वार महीने के शुक्ल पक्ष की दशमी तिथि को पड़ता है। इस तिथि का ऐतिहासिक महत्व है। भगवान राम ने इसी तिथि को अत्याचारी रावण पर चढ़ाई करके विजय श्री हासिल की थी। तभी से इसका महत्व बढ़ गया और विजय देने वाली होने के कारण ही इसका नामकरण विजयादशमी हुआ। इसको 'दशहरा' के नाम से भी पुकारा जाता है। दशहरा का अर्थ भी दस सिर वाले रावण के वध से लगाया जाता है।

ऐतिहासिक महत्व के साथ ही साथ इसका महत्व धार्मिक भी है। क्योंकि इस दिन अत्याचार तथा अधर्म को पराजित कर सत्य तथा धर्म विजई हुआ था। इन सब के होते हुये भी इसका वैज्ञानिक तथा सामाजिक महत्व कम

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नहीं है। वर्षा के समय चारों ओर के रास्ते घास आदि से ढक जाते हैं तथा कहीं-कहीं मार्ग जलमग्न हो जाते हैं। जिससे गमनागमन बाधित हो जाता है। सभी लोग अपनी यात्रा स्थगित रखते हैं। इसका स्पष्टीकरण तुलसी के निम्न दोहे से होता है :—

'विविध भूमि तृण संकुल समुझि परहिं नहि पन्थ।'

क्वार मास के शुक्ल पक्ष दशमी पर्यन्त वर्षा के उत्पात भी होते रहते हैं। विजयादशमी की तिथि से आसमान साफ हो जाता है। वर्षा समाप्त हो जाने से रास्ते साफ सुथरे तथा कीचड़ रहित हो जाते हैं। सभी प्राणियों में नयी चेतना की लहर उमड़ पड़ती है। अतः यह समय यात्रा के लिये अत्यन्त उपयोगी तथा कार्य सफल करने में सहायक होता है। जिससे विजय प्राप्ति स्वाभाविक हो जाती है। कहा भी गया है कि—

अश्विनस्य सिते पक्षे दशम्यां तारकोदये ।
स कालो बिजयो नाम सर्वकार्यार्थसाधकः ॥

विजय चाहने वालों को इसी समय यात्रा करनी चाहिये। क्योंकि यह समय विजय देने में सहायक होता है। यही मुख्य कारण है कि राम ने इसी समय में यात्रा करके विश्व विजयी रावण पर विजय पायी थी।

इस महत्वपूर्ण तिथि के विषय में एक कथा और भी प्रचलित है। जब शुम्भ तथा निशुम्भ नामक राक्षसों से पृथ्वी आक्रान्त थी तथा संसार में भय का वातावरण चारों ओर व्याप्त हो गया था। तब देवताओं की प्रार्थना से प्रसन्न होकर भगवती दुर्गा जी इसी दिन प्रकट होकर उन विश्व विजयी असुरों का नाश किया। इसी कारण इस समय दुर्गा जी की पूजा बड़े धूम-धाम से की जाती हैं। जिससे प्रसन्नता का वातावरण बनना स्वाभाविक हो जाता है।

विजयादशमी क्षत्रियों का उत्सव होने के कारण क्षत्रिय लोग सर्वाधिक विशेष उत्सव मनाते हैं। वे अपने हथियारों की पूजा करते हैं। घर-घर दुर्गा जी का पूजन होता है। स्थान-स्थान पर भव्य मेलों का आयोजन होता है। दूर-दूर के लोग मेलों में सम्मिलित होकर सुखानुभूति करते हैं। उस समय आमोद-प्रमोद के वातावरण में सम्पूर्ण समाज डूबा हुआ रहता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मेले से बाहर एक बनावटी लंका नगरी बनाई जाती है। वहाँ पर कागज से रावण का एक विशाल पुतला बनाया जाता है। दो बालक राम और लक्ष्मण का रूप धारण कर रथ पर चढ़ाकर उस पुतले के समीप लाये जाते हैं। वहाँ लोगों को युद्ध का दृश्य दिखाया जाता है। अन्त में सूर्यास्त के समय रावण का वध प्रदर्शित किया जाता है। अन्त में उस कागज के पुतले में आग लगाकर जलाया जाता है। 'श्री रामचन्द्र जी की जय' के नारे से वातावरण गूंज उठता है। इसी प्रकार हर वर्ष उत्सव मनाकर यह दृश्य दिखाया जाता है।

यह दृश्य केवल खिलवाड़ कर मनोरंजन के लिये ही नहीं होता है, इसके आड़ में भारतीय वीरता का उच्च आदर्श छिपा है। भारत की भूमि वीर पुत्रों की जन्मदात्री है। राम जैसे आदर्श वीर को पैदा करने का श्रेय इसी भारत भूमि को है। इससे यह भी लक्षित होता है कि प्रबल आसुरी शक्ति का नाश उच्च मानवीय शक्तिद्वारा ही सम्भव है। जब तक हम लोग अपने कलुषित विचार रूपी रावण का संहार नहीं करेंगे और अपनी मेघनाथ रूपी इन्द्रियों को संयमित नहीं करेंगे तथा कुरीति रूपी कुम्भकर्णी निद्रा में सोते रहेंगे तब-तक समाज सुखी नहीं हो सकता। इसे सुखी बनाने के लिये साहस उद्यम तथा धर्मपरायणता का सहारा ही उत्तम होगा। इस प्रकार यह विजयादशमी का त्योहार शिक्षाप्रद तथा भारतीय आदर्शों से भली प्रकार ओत-प्रोत है।

२५. दीपावली

विजयादशमी और होली के समान ही दीपावली भी भारतीयों का बड़ा प्रसिद्ध त्योहार है। प्रत्येक वर्ष कार्तिक कृष्ण अमावस्या को यह उत्सव बड़े धूम-धाम से मनाया जाता है। सभी स्थानों पर दीपकों को जलाकर रखा जाता है। दूर से देखने पर दीपकों की कतार मालूम होती है, इसी कारण इसका नाम 'दीपावली' पड़ा है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

सभी उत्सवों का किसी न किसी ऐतिहासिक घटना से सम्बन्ध होता है। इसका सम्बन्ध भगवान राम का बन से अयोध्या आगमन से है। इसी दिन श्री रामचन्द्रजी विश्वविजयी रावण को मार कर लंका से अयोध्या को पधारे थे। चौदह वर्ष के वनवास जीवन के उपरान्त राम का यह अयोध्या-आगमन विशेष आनन्द को देने वाला था। अतः सभी के लिये उस दिन समारोह मनाना स्वाभाविक था। उत्सव में जगह-जगह सफाई करना, दीपक जलाना, मिठाई खाना, आमोद-प्रमोद के साधन एकत्रित करना आदि आवश्यक हैं। उसी दिन से यह उत्सव प्रचलित होकर अनवरत आज तक मनाया जा रहा है। इसके साथ ही इसका आध्यात्मिक स्वरूप यह है कि अधर्म रूप रावण का समूल नाश कर धर्म रूप राम का समागम होता है, तभी मानव का अन्तःकरण प्रकाशित होता है। इस प्रकाश की सहायता से साधक अपने लक्ष्य तक पहुँच जाता है।

इस उत्सव के सम्बन्ध में दूसरी कथा यह प्रचलित है कि इसी दीपावली के दिन भगवान् विष्णु ने वामनावतार धारण करके राजा बलि द्वारा बन्दी की गई लक्ष्मी को उससे छुड़ाया था। वे लक्ष्मी हमारे घर में आयें अन्यत्र दूसरी जगह न जायँ इसीलिये इस दिन रातभर लक्ष्मी पूजन किया जाता है। साथ ही साथ जागरण भी किया जाता है कि—लक्ष्मी जी आधी रात में धन लेकर घर-घर घुमती हुई यह कहती हैं कि कौन जाग रहा है, उसे धन दूँ।

निशीथे वरदा लक्ष्मी को जागर्ति भाषिणी।
तस्मै धनं प्रयच्छामि……………॥

यह उत्सव कार्तिक कृष्ण तेरस से कार्तिक शुक्ल द्वितीया तक मनाया जाता है। प्रथम दिन 'धन तेरस' कहलाता है, इस दिन बर्तन खरीदना शुभ माना जाता है। बाजारों में बर्तनों की सजावट इस दिन देखते ही बनती है। दूसरा दिन 'नरक चतुर्दशी' कहलाता है। भगवान् श्री कृष्ण ने इसी दिन नरकासुर का वध किया था और इसी दिन भगवान् ने नरसिंह अवतार लेकर प्रह्लाद

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

के पिता का वध किया था। इस दिन घर की सफाई की जाती है तथा शाम को दीपक मालायें सजाई जाती हैं। तीसरा दिन 'लक्ष्मी पूजन' कहा है। यही दिन दीपावली के नाम से जाना जाता है। शाम होते ही घर-घर दीपकों की श्रेणियाँ जलाई जाती हैं। चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश दिखाई पड़ता है।

जगमग-जगमग दीप जल रहे चारों ओर ज्योति छायी है।
सन्ध्या के आँगन में मानो रानी उषा उतर आयी हैं॥

सभी स्थानों पर प्रज्वलित दीपमालायें बड़ा ही सुन्दर दृश्य उपस्थित करती हैं। शहरों की सजावट जो लाल, गुलाबी, नीला, पीला, सफेद, हरे आदि रंग के बल्बों को जलाने से तैयार की जाती है वह बड़ी ही मन मोहक होती है। चौथे दिन 'गोवर्धन' पूजा होती है। यह पूजा श्रीकृष्ण के गोवर्धन पर्वत को उठाकर ब्रज की रक्षा करने के उपलक्ष्य में की जाती है। इस दिन गाय-बैलों का भी पूजन किया जाता है। पाँचवाँ दिन ,भैयादूज' या 'यम-द्वितीया' कहलाता है। ऐसी धारणा है कि इस दिन यमुना जी में स्नान करने से मनुष्य यम यातना से मुक्त हो जाता है। इस दिन बहनें अपने भाइयों को मिठाइयाँ खिलाती हैं तथा उनके माथे पर तिलक लगाती हैं। भाई भी प्रसन्न होकर बहनों को उपहारों से सन्तुष्ट करते हैं। इस प्रकार से दीपावली का पर्व हम लोगों के लिये बड़े ही उत्साह का है। इस दिन लोग अच्छे-अच्छे कपड़े पहनते हैं तथा अच्छा सुस्वाद भोजन करते हैं।

इस उत्सव के नाम पर एक कुप्रथा प्रचलित हो गयी है, जिसका नाम है 'जुआ खेलना'। इसका कहीं भी विधान नहीं है। जुआ खेलने से बहुत बड़ी हानि होती है। जुआ खेलने से कितने लोग बर्बाद हो जाते हैं इस उत्सव के नाम पर यह कलंक है। लोगों की धारणा है कि इस दिन अच्छा या बुरा जो भी कार्य सिद्ध कर लिया जायगा वह वर्ष पर्यन्त होता रहेगा। परन्तु यह अनुचित है। कहाँ कु-वासनाओं को दूर भगाने के लिये दीपावली उत्सव का आयोजन और कहाँ यह गहरी कुप्रथा का प्रचलन ! जो हो, इसका निराकरण होना चाहिये। उसके स्थान पर रामायण की कथा एवं हरि कीर्तन का प्रचलन होना चाहिये। इसी से उत्सव का यथार्थ लाभ होना सम्भव है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

२६. होलिका

भारतीय हिन्दू समाज में पर्वों तथा उत्सवों की अनोखी परम्परा है। इन पर्वों से समाज को नई चेतना प्राप्त होती हैं। सामाजिक जीवन को उल्लास से भर देते हैं। होली या होलिका का पर्व भी कुछ ऐसा ही उल्लास-मय एवं ऐतिहासिक है। यहाँ प्रतिवर्ष हम लोग होलिका को जलाते हैं। उस जलती हुई अग्नि की ज्वाला के बीच से प्रह्लाद का प्रतिनिधित्व करने वाले एक वृक्ष को निकाल कर जलाशय में ठण्डा करते हैं। बाद में उस वृक्ष की पूजा की जाती है।

यह त्योहार फाल्गुन शुक्ल पूर्णिमा से लेकर चैत्र कृष्ण द्वितीया तक मनाया जाता है। पूर्णिमा को होलिका जलाई जाती है। प्रतिपदा को पड़ी रहती है तथा द्वितीया को उसी की राख से आरम्भ कर अबीर, गुलाल, रंग आदि को एक दूसरे पर छोड़ते हैं। कहीं-कहीं होलिका दाह के दूसरे ही दिन उत्सव मनाने की प्रथा है। होली मौज मस्ती का त्योहार है। इस दिन युवक-युवतियाँ मस्ती में परस्पर एक दूसरे से मिलते हुये परस्पर आनन्द का अनुभव करते हैं। नाना प्रकार की रस भरी उक्तियों तथा गीतों से आकाश गूँज उठता है। ढोल, मृदंग, झाँझ आदि वाद्यों के स्वर अनायास ही हृदय को झकझोर देते हैं। गली-गली, डगर-डगर, नगर-नगर सर्वत्र आनन्द का सागर उमड़ा हुआ दिखाई देता है। अलग-अलग अपनेपन को भूल कर मानों हम लोग एक हो जाते हैं। यही हमारा आदर्श है तथा यही होली का संकेत भी है।

पूर्णिमा के दिन जो होलिका जलाई जाती है उसके विषय में एक पौराणिक आख्यान प्रसिद्ध है। हिरणकश्यप की बहन का नाम होलिका था। वह अपने भाई की आज्ञा से प्रह्लाद को जलाने के लिये अपनी गोद में लेकर के बैठी थी। होलिका को ऐसा वरदान प्राप्त था कि वह आग में जल नहीं सकती थी। परन्तु ईश्वर की माया विचित्र है, वह अन्याय को सहन नहीं कर सकता है। निर्दोष भक्त प्रह्लाद को जलाने की इच्छा रखने वाली होलिका स्वयं ही जलकर राख हो गई तथा कण-कण में भगवान् का दर्शन करने वाला भक्त प्रहलाद

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

को आँच तक भी नहीं लगी। इसी पवित्र पौराणिक घटना की स्मृति में आज भी हम लोग होलिका को जलाते हैं। उस जलती होलिका के भीतर से भक्त प्रहलाद के रूप में एक वृक्ष निकाल कर, ठण्डा कर उसकी पूजा करते हैं।

भविष्य-पुराण में एक दूसरी कथा मिलती है, जिसके अनुसार माली नाम का एक राक्षस था। उसकी पुत्री का नाम ढौढा। उसने रूद्र की आराधना करके यह वरदान प्राप्त कर लिया कि वह देवता या मनुष्य किसी से न मारी जा सके। परिणाम स्वरूप वह उन्मत्त बालकों को सताने लगी। विशेष कर दो ऋतुओं की सन्धि में पीड़ा पहुँचाती थी। उसको अस्त्रों तथा मन्त्रों और दवाओं से दूर नहीं किया जा सकता था। राजा रघु के राज्य में प्रजा जब उस ढौढा राक्षसी से परेशान हो गई तो सभी प्रजा मिलकर इसको दूर करने के लिये महाराज रघु से प्रार्थना की, राजा ने गुरु वशिष्ठ से उसके निराकरण का उपाय पूछा। इसके बाद गुरु वशिष्ठने यह बताया कि फाल्गुन की पूर्णिमा के दिन जब शीत समाप्तहोकर गर्मी प्रारम्भ होती है, तब विशेष कर बालक उत्साहपूर्वक हाथों में तलवार आदि अस्त्र-शस्त्र लेकर योद्धाओं की तरह विचरण करें। सूखे काष्ठ को तपा उपलों को बहुत ढेरी लगाई जाय तथा शाम को उसमें आग लगाकर राक्षस-विनाशक मन्त्रों से हवन किया जाय। उसकी लोग तीन बार प्रदक्षिणा करें तथा 'अडाडा' आदि उच्च स्वर से उच्चारण करें। इसके साथ ही जिसको जो आवे इच्छा के अनुसार बोले। शाम को घर आँगन में गोबर से लीपना, घर के बच्चों की रक्षा करना, हास्य रस के गीत गाना, बच्चों को गुड़ पकवान मिठाई आदि खिलाना आदि कार्य उस समय होने चाहिये। उस रात बच्चों की रक्षा पर विशेष जोर दिया गया है। राजा रघु ने अपने राज्य में ऐसा कराया और उपद्रव शांत हो गया। पहली कथा की उपेक्षा इसका प्रचलन आज अधिक दिखाई देता है।

इस पर्व का व्यावहारिक पक्ष यह है कि चैत्रसे नया वर्ष प्रारम्भ हो जाता है। पूर्णिमान्त मानें से फाल्गुन की पूर्णिमा को वर्ष की समाप्ति हो जाती है। साथ ही चैत्र कृष्ण की प्रतिपदा से नया वर्ष शुरू हो जाता है। ऐशी दशा में यह होलिका दाह पुराने वर्ष के शव दाह का प्रतीक है दूसरे दिन जो प्रेमा-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लाप, परस्पर मिलन, अबीर गुलाल आदि का आदान-प्रदान होता है वह इस बात का प्रतीक है कि अब हम नये वर्ष में पुरानी बातों को भूलकर परस्पर प्रेम की भावना से जीवन यापन करें। छोटे-बड़े, ऊँच-नीच, धनी-दरिद्र, ब्राह्मण-शूद्र आदि सभी भेद-भाव भुलाकर एकता के सूत्र में बने की मानों उस दिन प्रतिज्ञा करते हैं। रंग या अबीर इस बात का प्रतीक है कि वर्ष के आरम्भ होने के समय की यह लालिमा वर्ष पर्यन्त बनी रहे। अर्थात् हमारा शरीर, मन और हृदय सभी स्वस्थ प्रसन्न एवं विकसित होते रहें। इसी दिन से वसन्त ऋतु का आरम्भ भी होता है। वसन्त कामदेव का मित्र माना गया है। यही कारण है कि उस दिन जड़-चेतन, नर-नारी सभी पर कामदेव की कृपा स्पष्ट दिखाई देती है। तभी तो उस दिन प्रेमालाप करने में ही गौरव का अनुभव करते हैं।

शास्त्र की दृष्टि से भी वसन्तोत्सव एवं काम-पूजा का विधान प्रतिपदा को ही होता है। स्वच्छ वेश-भूषा में एक साथ बैठकर परस्पर चन्दन, गुलाल, रोरी आदि लगाना तथा आम्रमंजरी का रसास्वादन करना इस विधान का मुख्य अंग है। होलिका के भस्म का वन्दन करना भी शास्त्र विहित है। मीमांसा शस्त्र के होलिकाधिकरण में इसकी विस्तृत विवेचना की गई है। अतः होलिका का त्योहार शास्त्र-पुराणों से प्रतिपादित एक पुराना त्योहार है। इसी कारण सम्पूर्ण भारत में यह मनाया जाता है। व्रज मण्डल में इसका रूप विशेष दर्शनीय होता है।

अतः हम लोगों को इस सांस्कृतिक पर्व की मर्यादा का पालन करते हुये इसकी रक्षा करनी चाहिये। साथ ही साथ जो कुरीतियाँ इससे सम्पृक्त हो गई हो उन्हें दूर करने की कोशिश करनी चाहिये।

卐

२७. ऋतुराज वसन्त

भारतीय मनीषियों ने समय की गति को सूक्ष्म विचारोपरान्त कई भागों में बाँटा है। यथा-निमिष, काष्ठा, मुहूर्त्त, अहोरात्र, पक्ष, मास, ऋतु, अयन तथा वर्ष। एक वर्ष में छः ऋतुयें होती हैं। उनके नाम हैं—वसन्त, ग्रीष्म,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वर्षा, शरद, हेमन्त, शिशिर । एक ऋतु का समय दो मास का होता है। बसन्त का समय फाल्गुन-चैत्र अथवा चैत्र-वैशाख माना गया है। बसन्त को ऋतुओं का राजा कहा जाता है। इसका कारण यह है कि यह सभी ऋतुओं के आरम्भ में पड़ता है तथा इसके समय का सौन्दर्य अन्यों से निराला होता है। ऋतुनां सुकुमारः' इस गीत में कहे गये वाक्य से भी इसका वैशिष्ट्य स्पष्टहोता है। अतः बसन्त ऋतुओं का राजा मान लिया गया।

बसन्त का आगमन शिशिर के बाद होता है। इसके पहले हेमन्त और शिशिर की भयंकर ठंढक से प्राणियों का समुदाय शिथिल एवं शुष्क हो जाता है। जड़ प्रकृति भी गति शून्य होकर दवी पड़ी रहती है। परन्तु बसन्त के आगमन से ही संसार के जड़ तथा चेतन सभी प्रसन्नता से चमक उठते हैं। कहीं स्त्री-पुरुष मस्ती के गीत गाते हैं तो कहीं पक्षीगण कलरव करने लगते हैं। कहीं भौरों का मधुर गुञ्जन होता रहता है, कहीं पर वृक्ष लताओं में नूतन किसलय निकलते दिखाई देते हैं। कहीं फूलों की कलियाँ विकसित होती हुई दिखाई देती है तो कहीं आम्र मंजरियों से अलंकृत अमराइयों में कोकिल का पंचम सुर सुनाई पड़ता है। सबमें नयी चेतना का आगमन हो जाता है। ऋतुराज की महिमा से प्रभावित होकर सभी मस्ती से ओत-प्रोत हो जाते हैं।

राजा के आगमन काल में स्वागत समारोह की धूम मची हुई है। सब ...गह वृक्ष के नूतन किसलय सुसज्जित रहते हैं। लतायें झूम-झूम कर उनके ...गागत के लिये मचल रही है। कुसुम-दल बहुरंगी कलियों की मालायें लेकर ...नों बसन्त के चरणों में अर्पित कर रहा है। शीतल मन्द सुगन्धित पवन ...नों उनकी थकान दूर कर रहा है। चारश स्वरूप पक्षिगण मानों उनके ...गोगान कर रहे हैं। लाल-लाल पलाश-पुष्प उनके विश्राम के लिये मानों ...ना सुसज्जित वितान ताने हुये हैं। स्वच्छ गगन में चन्द्रमा अपनी चाँदनी ...र कर मानों रात में उनका दर्शन सर्व सुलभ कर दिया है। तारें उनकी ...ती के लिये मानों आकाश रूपी थाल में सजे हुये दीप हैं। सजी हुई प्रकृति ...मानों उनकी सहचरी हैं। तभी तो आज वे उनके आगमन पर रंग-बिरंगी ...सज्जा से सुसज्जित होकर अठखेलियाँ कर रही हैं। पीले फूलों की बेल-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बूटियों से सुसज्जित उनकी धानी रंग की साड़ी किस सहृदय का मन मोहित नहीं कर लेती। धन्य हैं वे ऋतुराज, जिनका स्वागत करता हुआ प्रकृति का कण-कण दिखायी दे रहा है।

जड़ प्रकृति की जहाँ यह दशा है, वहाँ चेतन जगत का क्या हाल है, उसे भी देखिये। चेतनों में इन दिनों घोर परिवर्तन दिखाई दे रहा है। जिसे देखिये वही नई उमंग के साथ मस्ती की दुनियाँ में विचरण करता हुआ दिखाई देता है। इन्हीं दिनों 'बसन्त पंचमी' तथा 'होली, का त्योहार पड़ता है। इन आनन्ददायी पर्वो पर आबालवृद्ध वीनता सभी नये-नये रंग-बिरंगे वस्त्रों में सुसज्जित होकर एक दूसरे के गले मिलते हैं। यह मिलन नये वर्ष का मिलन है। यह इस बात का द्योतक है कि पुरानी बातों को भूलकर आगे परस्पर प्रेम एवं सहानुभूतिपूर्वक रहेंगे। इस अवसर पर अबीर एवं गुलाल का आदान-प्रदान मानों इस बात का प्रतीक है कि आगे आने वाले दिन इसी प्रकार उल्लासपूर्वक प्रेममय बीतेंगे। होली के अवसर पर सभी आपस में मिलते हैं। यह मिलन इस बात का प्रतीक है कि प्रकृति में कोई भेद-भाव नहीं है। इस प्रकार वसन्त के आगमन पर प्राणियों में एक अपूर्व उल्लास पूर्ण सौहार्द दिखायी देता है।

ऋतुराज बसन्त से कवि-गण भी प्रभावित होते हैं। क्योंकि कवियों को प्रकृति से अत्यन्त प्रेम होता है। वह प्रकृति बसन्त के समय में ही पूर्ण उल्लसित होतीं है। ऐसा कौन सा कवि होगा जो अपने काव्य में बासन्ती छटा का वर्णन नहीं करना चाहेगा। इसी कारण से कवियों ने भी इसका बड़ा मोहक वर्णन प्रस्तुत किये हैं। वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, माघ तथा भारवि आदि संस्कृत के महाकवियों ने भी इस विषय पर लेखनी उठाई है। हिन्दी काव्य तो बसन्त-से भरा पड़ा है। नीचे कालिदास तथा माघ जी का उदाहरण दर्शनीय है।—

द्रुमाः सुपुष्पाः सलिलं सपद्मं स्त्रियः सकामाः पवनः सुगन्धिः।
सुखाः प्रदोषाः दिवसाश्च रम्याः सर्वं प्रिये चारुतरं वसन्ते॥
(कालिदा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नवपलाशपलाशवनं पुरः स्फुटपरागपरागत पाण्डुरम् ।
मृदुलतान्तलतान्तमलोकयत् स सुरभिं सुरभिं सुमनोहरैः ॥—माघ

हिन्दी में—

गई रही देखन फुलवाई । जहँ वसन्त ऋतु रही लुभाई ॥ —तुलसी

कूलन में केलिन में कछारन में कुञ्जन में,
क्यारिन में फालित कालीन विकसत हैं ।
कहैं पद्माकर परागहूँ में, पानहूँ में,
पातन में पीकन में पलाशन पंगत है ।
द्वार में दिसान में दुनी में देस-देसन में,
देखो दीप दीपन में दीपत दिगंत हैं ।
वीथिन में व्रज में नवेलिन में वेलिन में,
बनन में बागन में वस्यो वसन्त है ।—पद्माकर

निष्कर्ष यह निकलता है कि बसन्त का सौन्दर्य अद्वितीय होता है । इसमें समता, सरलता तथा सुमनोहरता का अपूर्व सम्मेलन परिलक्षित होता है । इस समय न तो अधिक जाड़ा पड़ता है न तो अधिक गर्मी ही, प्रकृति अपना सुन्दरतम रूप प्रदर्शित करती है, साथ ही साथ प्राणियों को आनन्द-निधि में आप्लावित कर देती है । इस प्रकार के बसन्त की अनुपम छटा का आनन्द वही प्राप्त कर सकता है, जिसका हृदय सरस तथा मन प्रसन्न होता है ।

२८. आदर्श विद्यार्थी

विद्यार्थी की प्रारम्भिक अवस्था बड़ी कोमल होती है । उसको जिस प्रकार के वातावरण में रखा जायगा उसका भावी जीवन उसी प्रकार का होगा । आज का विद्यार्थी ही कल का नागरिक होता है । उसी पर देश का भविष्य निर्भर होता है । अतः अभिभावकों तथा अध्यापकों का परम कर्तव्य होता है कि विद्यार्थी को अच्छे वातावरण में रखकर आदर्श शिक्षा प्रदान करें । यदि उनका जीवन सुधरा हुआ तथा आदर्शमय नहीं होगा तो उनके द्वारा की उन्नति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तो दूर रही उल्टे वे समाज को पथभ्रष्ट बना देंगे। यदि सही अर्थ में आदर्श विद्यार्थी हो जायँ तो उससे परिवार की उन्नति के साथ ही साथ देश की उन्नति की आशा की जा सकती है।

एक आदर्श विद्यार्थी के लिये निम्नलिखित गुणों का होना परमावश्यक है। सर्वप्रथम विद्यार्थी को अध्ययनशील होना चाहिये। क्योंकि अध्ययन ही सफलता की कुन्जी है। अध्ययन का वास्तविक अर्थ पाठ्यक्रम में निर्धारित ग्रंथों एवं विषयों का अनुशीलन। परन्तु इस समय प्रायः देखने में आता है कि विद्यार्थी कुछ चुनें हुये प्रश्नों को रट कर हीं परीक्षा उत्तीर्ण कर लेते हैं। वास्तव में अध्ययन का अर्थ केवल परीक्षा उत्तीर्ण कर लेना ही नहीं है। परीक्षा में उत्तीर्ण होने के साथ ही विषय का सम्यक् ज्ञान होना चाहिये। विषय ज्ञान के लिये पाठ्य-पुस्तकों का गुरुओं से अध्ययन कर, उस पर मनन तथा चिन्तन की आवश्यकता होती हैं। मनन और चिन्तन के लिये आवश्यक है कि व्यर्थ प्रपंचों में न पड़कर पाठ्य विषयों के ही प्रपञ्च में पड़ना चाहिए। पाठ्य विषय सम्बन्धी अन्य आवश्यक ग्रन्थों तथा पत्र-पत्रिकाओं से भी सहायता लेनी चाहिये। इससे परीक्षा में अच्छे अंक प्राप्त होने के साथ ही साथ आगे का मार्ग भी प्रशस्त होगा।

अध्ययन के लिये परिश्रम और अध्यवासय की अत्यन्त आवश्यकता होती है। कहा भी गया है कि—'विद्यया परिश्रमाधीना।' पुस्तक को रट लेना भी वास्तविक परिश्रम नहीं होगा। विद्या सम्बन्धी परिश्रम में बुद्धि की परमावश्यकता होती है। भगवांन की अनुकम्पा से बुद्धि सबके पास उपलब्ध है। उसका सही-सही उपयोग करने की आवश्यकता है। परिश्रमी होने के लिये स्वास्थ्य अच्छा होना जरूरी है। बिना स्वास्थ्य के परिश्रम नहीं किया जा सकता है। उत्तम स्वास्थ्य के लिये ब्रह्मचर्य होना नितान्त आवश्यक है। ब्रह्मचर्य के साथ व्यायाम पर भी ध्यान देना चाहिये। व्यायाम और ब्रह्मचर्य अच्छे स्वास्थ्य के लिये आवश्यक उपादान हैं। इसके बाद उत्तम भोजन की आवश्यकता होती है। उत्तम भोजन वही है जो सादा तथा ताजा हो।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आदर्श विद्यार्थी के अन्दर निम्न पाँच बातों का होना परमाश्यक है।

"काकचेष्टो बकध्यानः श्वानिदोऽपि तथैव च।
अल्पाहारी गृहत्यागी विद्यार्थी पञ्चलक्षणः ॥"

अर्थात् विद्यार्थी में कौए की तरह से चेष्टा होनी चाहिये, उसकी ध्यान मग्नता बगुले के समान होनी चाहिये। उसकी निद्रा कुत्ते के समान होनी चाहिए। उसे आहार कम ही लेना चाहिये। उसे घर की सर्वथा त्याग करना चाहिये। ये पांच सूत्र आदर्श विद्यार्थी के लिये आदर्श गुण हैं।

आदर्श विद्यार्थी को सादगी पर विशेष ध्यान देना चाहिये। कहा गया है–

सादा जीवन उच्च विचार, ये दोनों उन्नति के द्वार॥

सादगी का मतलब यह नहीं है कि केवल कपड़ा सादा पहनें बल्कि सादगी से यह तात्पर्य है कि आचरण सादा होना चाहिये, अर्थात् भोजन, वस्त्र, मनोरंजन सभी में सादगी होनी चाहिये। प्रदर्शन तथा फैशन सादगी के दुश्मन हैं। सिनेमा, पान, सिगरेट, नाच-गाना, क्रीम-पाउडर सूट-बूट आदि के चक्कर में कभी नहीं पड़ना चाहिये। इससे पढ़ाई में बाधा होती है, तथा माता-पिता की गाढ़ी कमाई चौपट होती है। इसमें फँसने से विलासिता प्रवल हो जाती है। अतः इन बुरी आदतों को अपने पास न आने दिया जाय तभी विद्यार्थी आदर्श हो पायेगा।

आदर्श विद्यार्थी बनने के लिये विनय की सर्वाधिक आवश्यकता होती है। विनम्रता विद्या की परिचायिका हैं। जो जितना अधिक विद्वान होता हैं वह उतना ही विनम्र स्वभाव का होता है। क्योंकि कहा गया है कि—

'विद्या ददाति विनयम'

विद्यार्थी विद्या को चाहने वाला होता है। वह अभी विद्वान भी नहीं है। अतः उसमें कभी भी अहंभाव नहीं आना चाहिये। प्राप्त विद्या और बुद्धि पर घमण्ड नहीं करना चाहिये। अन्य विद्यार्थियों को हीन भावना से देखने का भाव घृणित है, आदर्श विद्यार्थी को ऐसा नहीं करना चाहिये।

आदर्श विद्यार्थी को गुरुओं के प्रति श्रद्धा के भाव से ओत-प्रोत होना

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

चाहिये ? क्योंकि बिना गुरु की कृपा से कोई भी विद्यार्थी उन्नति नहीं कर सकता है। गुरु की कृपा का पात्र होने के लिये उनकी सेवा सर्वोपरि है। कहा भी गया है कि—'गुरु-शुश्रुषया विद्या'

आदर्श विद्यार्थी बनने के लिये अपने सभी गुरुओं की आज्ञाओं का सदैव पालन करना चाहिये। कहा गया है कि—'गुरोराज्ञा गरीयसी।' अर्थात् गुरु आज्ञा को सबसे बढ़कर मानना चाहिये। गुरु-आज्ञा का पालन करने से विद्यार्थी का चारित्रिक विकास तो होगा ही साथ-साथ गुरु उनको विद्या देने में कोई कोर कसर बाकी नहीं लायेगें। आजकल इस दिशा में घोर परिवर्तन हो गया है। यही कारण है कि विद्यार्थी लोग पूर्णता नहीं पा रहे हैं। एक समय था जब विद्यार्थी गुरुकुल में रहकर विद्याध्ययन किया करता था। गुरुओं के भोजन वस्त्र आदि सभी की व्यवस्था करता था। गुरु की कठिन से कठिन आज्ञा का पालन करता था। गुरु कार्य को श्रद्धा तथा भक्ति के साथ शिरोधार्य करता था। आरूणि, उपमन्यु तथा कौत्स का छात्र जीवन कितना आदर्श पूर्ण था। तभी तो भारत में उस समय ज्ञान का आलोक घर-घर फैला हुआ था। आज उसे फिर से जीवित करने की आवश्यकता है। आदर्श विद्यार्थी को इन सभी बातों पर विचार करके गुरुओं का आदर सत्कार करना चाहिये।

आदर्श विद्यार्थी बनने के लिये समय का सदुपयोग परमावश्यक है। क्यों कि बीता हुआ समय पुनः नहीं प्राप्त होता है। आदर्श विद्यार्थी को अपने कार्यों की एक सारणी बनाकर उसके अनुरूप कार्य करना चाहिये। इस सारणी का उपयोग करने से समय का सदुपयोग हो सकेगा। भोजन, विश्राम, खेलकूद, अध्ययन, मनोरंजन आदि सब निश्चित समय पर करने से समय का सदुपयोग अपने आप अनायास ही हो जायेगा।

वैसे तो अनुशासन सभी के लिये आवश्यक है परन्तु आदर्श विद्यार्थी के लिये परमावश्यक है। क्योंकि इसके बिना विद्यार्थी जीवन आनंदमय नहीं हो सकता है। अनुशासन का अर्थ केवल यही नहीं है कि हम गुरुओं की आज्ञा के अनुसार चलें, इसके अतिरिक्त आपस में मिलकर प्रेममय वातावरण में रहना चाहिए। उच्छृंखलता, उद्दण्डता एवं गाली-गलौज अनुशासनहीनता के द्योतक

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है। गुरुओं की निन्दा तथा छिद्रान्वेषण प्रबल अनुशासनहीनता है। क्योंकि गुरुओं का दोष दर्शन महापातक माना गया है। आदर्श विद्यार्थी में अनुशासन विषयक तत्व निहित होने चाहिये, नहीं तो उनका सारा आदर्श मिट्टी में मिल जायगा।

उपर्युक्त बातों के अतिरिक्त आदर्श विद्यार्थी बनने के लिये परोपकार सच्चरित्रता, सदाचार, परायणता, सहृदयता, माता-पिता की भक्ति, परस्पर प्रेम आदि सद्गुणों का होना परमाश्यक है। इन गुणों से युक्त विद्यार्थी ही राष्ट्र को उन्नति के पथ पर ले जा सकते हैं। दुःख है कि आज के छात्रों में उक्त गुणों की अपेक्षा दोँष ही अधिक भर गये हैं। स्वतन्त्र राष्ट्र के लिये यह बहुत ही विकराल खतरा है। विद्यार्थियों को भी सोच विचार करके जहाँ तक सम्भव हो सके अपने जीवन को आदर्श विद्यार्थी के समान बनाना चाहिये। जिससे देश में अखण्डता कायम रह सके।

२६. छात्र और अनुशासन

अनुशासन का अर्थ है नियन्त्रण। मनुष्य पर समाज तथा संविधान का नियन्त्रण है, ऋतुओं पर समय का नियन्त्रण होता है और बहती हुई नदियों पर तटों का नियन्त्रण होता है। इस अनुशासन या नियन्त्रण से जीवन दुर्घटनाओं से सुरक्षित रहता है। अपने गन्तव्य तक पहुंचने में सहायक होता है, ऊंचे उठने का सुअवसर प्राप्त होता है। अनुशासन घोड़े के मुँह में लगी लगाम के समान इधर-उधर जाने या भटकने से रोंक लगाता है। "अनुशासन की लगाम जब घोड़े के मुँह में लगी रहती है तभी वह ठीक से अपने गन्तव्य स्थान को पहुँचता है। बिना अंकुश का हाथी और अनुशासन रहित समाज विनाश के गाल में चला जाता है।"

अनुशासित होना अच्छे छात्रों का गुण है जो उनके लिये परमाश्यक है। विद्या का उपार्जन गुरुकुल तथा विद्यालयों में ही सम्भव है। जिस प्रकार दो

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

तटों के अनुशासन में बहती नदी सुदूर समुद्र तक पहुँच जाती है और स्वच्छन्द
बहने वाली नदी मैदान में फैलकर सूख जाती है। ठीक इसी प्रकार जो अनु-
शासन में रहता है वह अपने उद्देश्य को अवश्य ही पूरा करता है परन्तु अनु-
शासन हीन के लिये उद्देश्य की प्राप्ति संदिग्ध रहती है। शहरों के चौराहों
पर लगी लाल, हरी बत्तियाँ अनुशासन का संकेत करती हैं इससे व्यक्ति
निरापद रहता है। अनुशासन गति प्रदान करता है, विघ्नों में फँसने से रक्षा
करता है और नियत तक ले जाता है। उद्यान के वृक्ष माली की कैंची रूपी
अनुशासन के वृक्ष और फैली हुई लतायें आने जाने वालों की टोपी खींच लेती
है और पैरों को जकड़ लेती हैं। अर्थात् उनसे उलझ जाती है। जिससे वे
काट कर फेंक दिये जाते हैं।

इस युग में विद्यालयों में अनुशासन रखना एक समस्या बन गयी है।
इसके मूल में अनेक कारण थे—जैसे अभिभावकों द्वारा बालकों की उपेक्षा
गलत शिक्षा नीति, परीक्षा प्रणाली का दोषपूर्ण होना, विद्यालय के प्रबन्ध में
कमी, दलगत राजनीति से युक्त होना, विद्यालयों में योग्य एवं प्रभावी गुरु-
जनों का अभाव, सिनेमा तथा फैशन का कुप्रभाव आदि अनेकों कारणों से
छात्रों में अनुशासन की कमी आती जा रही है। आज के लोग इतने अकर्मण्य
होते जा रहे हैं कि वे अपने बालकों पर पूरा-पूरा ध्यान नहीं दे पाते हैं।
अभिभावक का उन पर नियन्त्रण न हो पाने से तथा बहुत से बच्चे माता-
पिता के गलत लाड़-प्यार से बिगड़ जाते हैं। इसी प्रकार के बच्चे जब विद्या-
लयों में जाते हैं तो वहाँ भी अनुशासनहीनता दिखलाते हैं।

अनुशासनहीनता को दूर करने के लिये उपर्युक्त अनेकों कारणों का समा-
धान निकालना आवश्यक हो गया है। जिस छात्र संघ का गठन छात्रों के
चतुर्दिक् उन्नति के लिये किया गया है वे ऐसा न करके छात्रों में गुटबन्दी
बढ़ाने तथा अनुशासनहीनता को पैदा करने के साधन बन गये हैं वास्तव में
छात्रसंघ छात्रों में एकता लाने तथा उन्हें संगठित करने का एक अच्छा उपाय
है, परन्तु आजकल इसका दुरुपयोग किया जा रहा है। छात्रसंघ के पदा-
धिकारी छात्रों के हितों को न देखकर अपने निजी स्वार्थ सिद्धि में लगे रह

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हैं। अतः अनुशासन कायम करने के लिये छात्रसंघ का पदाधिकारी चरित्रवान होना चाहिये। इस समय अनुशासनहीनता को बढ़ावा मिलने का प्रमुख कारण रक्षक का भक्षक हो जाना भी है। अर्थात् जिसके उपर जिस वस्तु की सुरक्षा का भार है वही रक्षक ही उस वस्तु को नष्ट करने पर तुले हुए हैं। हमारे राष्ट्रीय नेताओं में अनुशासनहीनता बढ़ रही है वे हमेशा कुर्सी के व्यामोह में परेशान रहते हैं। उनके कार्यों का छात्रों पर सहज ही बुरा प्रभाव पड़ता है। इस विकराल अनुशासनहीनता ही समस्या का समाधान अभिभावक, अध्यापक, छात्र और राष्ट्रीय नेता मिलकर ही खोज सकते हैं। इन सभी को अपना-अपना आचरण सुधारना होगा। आतंक या भय के स्थान पर आत्म नियन्त्रण द्वारा अनुशासन पैदा करना होगा। बिना आत्म नियन्त्रण के कोई सफलता नहीं मिल सकती।

आज का छात्र कल देश का कर्णधार होगा। इसलिए इस समस्या से राष्ट्रोन्नति का प्रश्न जुड़ जाता है। इसका समाधान शीघ्रातिशीघ्र सामने आना चाहिये। सरकार को अपनी शिक्षा नीति को भारतीय परिस्थितियों के अनुरूप बनाना चाहिये। शिक्षा के पवित्र क्षेत्र से दलगत राजनीति को अलग रखना परमावश्यक है। इस समस्या के सम्बन्ध में पं० जवाहरलाल नेहरू का कथन हैं कि—"छात्रों में जो कुछ अतिरिक्त शक्ति है, यदि उसे दूसरे साधनों की ओर मोड़ दिया जाय तो अनुशासनहीनता की समस्या सुलझ सकती है।"

३०. विद्यार्थी जीवन

भारतीय मानव जीवन को चार भागों में विभक्त किया गया है। सम्पूर्ण जीवन को सौ वर्षों का मानकर प्रत्येक भाग के लिए २५ वर्षों का समय निर्धारित किया गया है। इन चारों भागों को 'आश्रम व्यवस्था' के नाम से जाना जाता है। ये क्रमशः ब्रह्मचर्याश्रम, गृहस्थाश्रम, वनप्रस्थाश्रम तथा संन्यासश्रम हैं। इसमें से ब्रह्मचर्याश्रम को ही आजकल विद्यार्थी-जीवन के नाम से पुकारा जाता है। इस समय में मानव ब्रह्मचर्य पूर्वक रहकर विद्या का

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

उपार्जन करता है। विद्यार्थी जीवन वह जीवन है जिसमें वह अपने माता-पिता एवं सगे सम्बन्धियों से दूर हटकर गुरु के समीप रहता है। वहाँ पर वह केवल पुस्तकीय ज्ञान ही नहीं अर्जित करता, अपितु, विनय, शील, सदाचार आदि मानवोचित सद्गुणों को भी अभ्यास पूर्वक सीखता है। विद्यार्थी जीवन ही आगे आने वाले जीवन को परिमार्जित एवं सुव्यवस्थित बनाने में सहायक होता है। जिसका यह जीवन काल सुन्दर तथा सुव्यवस्थित होता है, उस मनुष्य का बाकी सम्पूर्ण जीवन उत्तम सुखदायी होता है।

पुराने समय में ब्रह्मचारी गुरु के आश्रम में रहकर गुरु की सेवा सुश्रूषा करता हुआ वेद, वेदांग, पुराण, धर्मशास्त्र आदि का विधिवत अध्ययन करते थे। विद्यार्थी को पढ़ने के साथ-साथ अपने भोजन की व्यवस्था स्वयं करनी पड़ती थी। इसके लिए वे भिक्षा माँगकर, प्राप्त अन्न को सादर गुरु की आज्ञा से ही उसे ग्रहण करते थे। आश्रम के लिए अन्न, वस्त्र, लकड़ी आदि की व्यवस्था करना विद्यार्थी जीवन का मुख्य कर्त्तव्य था। विद्यार्थी का अधिकांश समय गुरु की सेवा करने में बीतता था। उपमन्यु, कौत्स आदि की गुरु भक्ति अद्वितीय थी। गुरुदेव भी विद्यार्थियों को पुत्रवत् मानते थे। अपने सम्पूर्ण ज्ञान तथा विद्या को बताने में कोई कसर नहीं रखते थे। परिणामतः समय के भीतर ही विद्यार्थी सभी विद्याओं का अभ्यास कर लेता था। विद्याध्ययन काल के पूरा होने पर जब वह अपने घर वापस जाने लगता था तो उस समय आचार्य जो उपदेश देते, उसे यह अपने भावी जीवन का आधार मानकर वह घर आता था। वह 'समावर्तन संस्कार कहलाता था। वापस आते समय यथाशक्ति गुरु-दक्षिणा देने की भी प्रथा थी। इस विषय में वरतन्तु शिष्य कौत्स की गुरु दक्षिणी प्रसिद्ध थी। आज के विश्वविद्यालयों के दीक्षान्त समारोह का मूल वही 'समावर्तन' संस्कार है।

वर्तमान समय में विद्यार्थी जीवन पहले की अपेक्षा विकृत एवं विकसित हो गया है। पहले की व्यवस्था अब समाप्त हो गई है। अध्ययन अध्यापन के विषय भी बदल गये हैं। इस समय न वे गुरु है न शिष्य ही। वेद, वेदांग के अध्ययन की बात तो दूर है इस समय संस्कृत भाषा की शिक्षा भी न के बराबर कर दी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गई है। वर्तमान शिक्षा व्यवस्था पाश्चात्य शिक्षा से अनुप्राणित हो गई है। यही कारण है कि आज का विद्यार्थी-जीवन भी पूर्णतया पाश्चात्य ढाँचे का हो गया है। गुरु की सेवा जो हमारे यहाँ की निधि थी, अब समाप्त प्रायः हो गई है। परिणाम स्वरूप विद्यार्थी-जीवन में गुरुसेवा से प्राप्त जो, बड़ों के प्रति आदर एवं श्रद्धा का उच्च भाव था, वह समाप्त हो गया है। विद्यार्थियों की शारीरिक स्थिति भी ब्रह्मचर्य के अभाव से कमजोर हो चली है। यही कारण है कि आज समाज में विद्यार्थी का वह आदर सत्कार नहीं हैं जो पहले था। प्राचीनकाल में विद्यार्थी को देखकर महाराजा भी रास्ता छोड़ देते थे।

विद्यार्जी हीं भविष्य में राष्ट्र का कर्णधार होता है। उसकी शिक्षा-दीक्षा का प्रवन्ध अच्छा हो, अच्छे गुरुओं से उन्हें शिक्षा प्राप्त हो, इसके लिए न केवल उसके माता-पिता या अभिभावक को चिन्ता रहती है, अपितु सरकार को भी चिन्ता रहती है। इसी कारण सरकार योग्य अध्यापकों की नियुक्ति करती है, समय-समय पर अध्यापकों को प्रशिक्षित करने की योजना बनाती है। शिक्षा के क्षेत्र में नये-नये प्रयोगों द्वारा सरकार विद्यार्थी जीवन को समुन्नत बनाने के लिए सतर्कता पूर्वक प्रयत्नशील है। अच्छे विद्यार्थियों को छात्रवृत्ति प्रदान की जाती है। विश्व के स्वतन्त्र देशों की स्वतन्त्रता का प्रमुख श्रेय विद्यार्थी-जीवन को प्राप्त है।

विद्यार्थी-जीवन चिन्ता विहीन होना चाहिए। इस जीवन में मन, बुद्धि तथा शरीर पूर्ण स्वस्थ रहते हैं, और धीरे-धीरे विकसित होकर शेष जीवन को विकसित एवं व्यवस्थित बनाते हैं। स्वच्छ एवं उन्मुक्त वातावरण में रहकर विद्यार्थी-जीवन में जो अलौकिक आनन्द प्राप्त होता हैं, उसका वर्णन शब्दों से नहीं किया जा सकता। क्योंकि वह तो केवल अनुभव गम्य ही होता है।

इस विद्यार्थी-जीवन काल में अच्छी या बुरी जो भी आदत पड़ जाती है वह छूटती नहीं है। इस भाव को स्पष्ट करते हुए हिन्दी के प्रसिद्ध विद्वान श्री जयशंकर प्रसाद जी ने लिखा है कि—"विद्यार्थी का जीवन सुकुमार कोमल पौधे के समान होता है। उसको चाहे सीधा किया जाय अथवा टेढ़ा किया जाय। बाद में वह उसी रूप में रहेगा।" अतः अभिभावकों तथा गुरुओं का

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परम कर्त्तव्य होता है कि विद्यार्थी को अच्छी आदतों की ओर प्रवृत्त करें । जो अच्छे वातावरण, अच्छे सँग तथा अच्छे ग्रन्थों के अध्ययन से ही सम्भव है ।

आजकल का विद्यार्थी-जीवन पाश्चात्य सभ्यता के रंग में रंगा हुआ है । अतः पाश्चात्य अनुकरण की प्रवृत्ति स्वाभाविक हो गई है । यह स्थिति अत्यन्त ही भयावह है । इससे हमारी सभ्यता एवं संस्कृति खतरे में पड़ गई है । इसका तात्पर्य यह नहीं कि हम प्राचीन युग के समान गुरुकुल में रहकर केवल वेद-वेदांगों का ही अध्ययन न करें । युग के साथ तो हमें चलना ही चाहिये । भारतीय विद्यार्थियों को अनुरूप सभी शास्त्रों का अध्ययन तो करना ही होगा, परन्तु उसे अपना हृदय भारतीय भी बनाना होगा । जो पावन गंगा की तरह निर्मल तथा फूल के समान कोमल हो । भारतीय विद्यार्थी जीवन वैसा ही आदर्शमय होना चाहिये, जो अन्य देशों के लिए अनुकरणीय हो । क्योंकि हमारा आदर्श रहा है कि—मातृ देवों भव, पितृ देवों भव, तथा आचार्य देवों भव आदि । हम विद्यार्थियों को इसे भूलना नहीं चाहिए । क्योंकि इसी में ही विद्यार्थी-जीवन का स्वारस्य है ।

३१. परोपकार

समाज में विभिन्न प्रकार के मनुष्य पाए जाते हैं । उनमें से कुछ तो ऐसे होते हैं जो अपने स्वार्थ की चिन्ता न करके सदैव दूसरों के कार्यों में लीन रहते हैं । इसी प्रकार के मनुष्य परोपकारी कहे जाते हैं और उनके द्वारा किये गये कार्य को ही परोपकार कहा जाता है ।

परोपकार दो शब्दों के योग से बना है—पर+उपकार, अर्थात् दूसरे का हित साधन । वास्तव में परोपकार मनुष्य के अन्तःकरण में निवास करने वाला एक ऐसा दैवी गुण है जो उसे मानवता की श्रेणी से उठाकर देवता की पंक्ति में बैठा देता है । बन्धुत्व, प्रेम, सहानुभूति, दया, उदारता के संयोग से इसका जन्म होता हैं । यह महानतम धर्म है । गोस्वामी जी अमर अर्धात्मी है कि—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"परहित सरिस धर्म नहिं भाई। पर पीड़ा सम नहिं अधमाई।"

इसमें तुलसी जी ने मानव धर्म और मानवता का वास्तविक स्वरूप चित्रित किया है। धृति, क्षमा आदि मानव धर्म के लक्षण हैं, स्वयं धर्म नहीं हैं। परन्तु परोपकार मनुष्य का सबसे बड़ा पुनीत धर्म है। जिनकी आँखों पर स्वार्थ का चश्मा लग गया है वे बिना चश्मा उतारे इसके वास्तविक स्वरूप का दर्शन नहीं कर सकते। जिसमें परोपकार की भावना नहीं होती वे निरा पशु होते हैं इसी भाव को स्पष्ट करते हुये राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त जी ने कहा है कि—

"वही मनुष्य है कि जो मनुष्य के लिये मरे।"

अपने पेट का भरण पोषण तो पशु-पक्षी भी कर लेते हैं परन्तु जो दूसरों का हित करता है वही मनुष्य कहलाने का अधिकारी है। परोपकार ही एक मात्र ऐसा गुण है जो मनुष्य को पशु से अलग करता है। अर्थात् उसे पशु-प्रवृत्ति से मुक्त करता है।

वैदिक ऋषि महर्षियों की "सर्वे भवन्तु सुखिनः" महती अभिलाषा तथा भगवान् बुद्ध की 'वहुजन सुखाय' करुण कामना का मूल आधार परोपकार ही है। मानव 'पर' के लिए 'स्व' का वलिदान करे यही परोपकार की मुख्य तथा पवित्र भावना है।

परोपकार की भावना के पूर्ण विकास का उदाहरण हमें प्रकृति के साहचर्य में प्राप्त होता है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे प्रकृति का प्रकृत उद्देश्य ही परोपकार करना है। वह बिना किसी प्राप्ति की कामना किये ही अपना अक्षय खजाना दूसरों के कल्याण के लिए लुटाती रहती है। वृक्ष स्वयं जल का संचय नहीं करती आदि उदाहरणों को देखकर ही तो कबीर दास जी ने कहा है कि—

"वृक्ष कबहुँ नहिं फल भखै, नदी न सँचै नीर।
परमारथ के कारने साधु न धरा शरीर॥"

यहाँ तक कि वृक्ष, काटने वाले मनुष्य के ऊपर भी अपनी शीतल छाया बनाये रखता है। इस प्रकार यह स्पष्ट प्रतीत होता है कि परोपकार ही प्रकृति का आत्मा है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परोंपकार के विभिन्न साधन होने से इसका क्षेत्र अत्यन्त ही व्यापक है। विद्वान व्यक्ति अपनी विद्या द्वारा, बलवान अपने बल द्वारा, गुणी अपने गुण द्वारा देश, समाज तथा जाति का परोपकार कर सकते हैं। यह सोंचना कि केवल धनी व्यक्ति ही परोपकार कर सकता है, यह ठीक नहीं। क्योंकि परोपकार करने में धन नहीं, त्याग की भावना प्रमुख है। आग की लपट में घिरे व्यक्ति कों देखकर जो अपने प्राणों की परवाह किये विना उस अग्नि की ज्वाला में कूद पड़ता है, उससे बड़ा परोपकारी कौन हो सकता है।

यद्यपि परोपकारी अपने निजी लाभ की कामना से परोपकार नहीं करता है, फिर भी उसे अनेक लाभ प्राप्त होते हैं। जीवन में आत्मिक शान्ति ही सर्वोत्तम लाभ है, जो परोपकार से प्राप्त होती हैं। परोपकारी का अन्तःकरण पवित्र तथा निर्मल हो जाता है। उसकी आत्मा दीप्त हो जाने से वह तेज युक्त हो जाता है। अपने कर्त्तव्य को पूर्ण करने से उसमें संतोष की भावना उत्पन्न होती है जो कि करोड़ों रुपये खर्च करने पर भी प्राप्त नहीं हो सकती। परोपकारी कों प्राप्त होने वाला सन्तोष सभी धनों से श्रेष्ठ है क्योंकि कहा गया है–

"जब आवे सन्तोष धन; सब धन धूर समान।"

दीनों तथा दुःखियों का उपकार करने से उन्हें आनन्द एवं सुख की प्राप्ति होती है। जिसके कारण वे प्रसन्न होकर परोपकारी को आशीर्वाद देते हैं। सच्ची आत्मा से निकला हुआ आशीर्वाद कभी निष्फल नहीं होता है। इससे परोपकारी का जीवन सुखी एवं समृद्ध हो जाता है। परोंपकारी को यश तथा सम्मान की प्राप्ति अनायास हो जाती है। जिसके कारण उसका सभी स्थानों पर हमेशा के लिए नाम अमर हों जाता है।

परोपकार के मार्ग को अवरुद्ध करने वाले प्रमुख तत्त्व हैं अहंकार तथा स्वार्थ की भावना। अहंकार पतन का मूल कारण है। इससे मनुष्य दम्भी एवं पाखण्डी वन जाता है। अतः अहंकारी व्यक्ति परोपकारी नहीं हो सकता है। परोपकारी व्यक्ति को हमेशा यह ध्यान रखना चाहिये कि वह जनता का सेवक है नेता या स्वामी नहीं। परोपकारी का जीवन आदर्शमय होना चाहिए। अतः अपने स्वार्थ की उतनी ही कामना करनी चाहिये कि किसी के

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कोई बाधा उत्पन्न न हो। परोपकार के अभाव से ही समाज आन्दोलित हो उठता है संक्षेप में यह समझना चाहिये कि परोपकार से पुण्य होता है तथा दूसरों को पीड़ा पहुँचाने से पाप होता है। यही बात पुराणों में भी कही गई है। यथा—

"अष्टादश पुराणेषु व्यासस्य वचनद्वयम्।
परोपकारः पुण्याय पापाय परिपीडनम्॥"

आज सम्पूर्ण विश्व अशान्त एवं दुःखी है। मानव की अवनति होती जा रही है। इस समय एक देश दूसरे देश को, एक समाज दूसरे समाज को, एक चाति दूसरी जाति को, एक व्यक्ति दूसरे व्यक्ति को नष्ट करने पर उतारू हो गया है। इसका सबसे प्रमुख कारण, परोपकार की भावना का अभाव है। परोपकार ही मानव का सर्वोत्तम धर्म है। इसके अभाव के कारण आज विश्व दीनता, शोषण, अभाव, रोग, शोक, हिंसा आदि का अखाड़ा बना हुआ है। यह संसार वास्तविक अर्थो में मनुष्य-लोक उसी दिन बनेगा जिस दिन इसका प्रत्येक व्यक्ति 'परहित सरिस धर्म नहि भाई' के सत्य को हृदयंगम करेगा।

३२. ब्रह्मचर्य

भारतीय मनीषियों ने मानव की उन्नति के लिये अनेक संयम, व्रत, नियम एवं तपस्याओं का विधान विहित किया है। ब्रह्मचर्य उन सभी साधनाओं का मूलाधार है। यह एक ऐसा साधन है, जो आत्मा को तो शक्ति प्रदान करता ही है, आत्मा के आधार शरीर को भी स्वस्थ तथा संयत बनाने का विशिष्ट कार्य करता है। इसी प्रकार से इसका हमारे ग्रंथों में अधिक महत्व के साथ उल्लेख किया गया है। वर्णाश्रम धर्म में इसको प्रथम स्थान दिया गया है। विद्यार्थियों को ब्रह्मचर्य के महत्व को भली प्रकार समझ कर इसके नियमों का सम्यक् पालन करना चाहिए। ब्रह्मचर्य विद्या पाने के लिये सफल कुन्जी है। यह वह साधन है जिसकी सहायता से मानव की सर्वविधि उन्नति संभव है। जब से हम लोगों ने इस पावन नियम की उपेक्षा करना शुरू किया तभी से हमारा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पतन होने लगा है । आज अगर हम अपने प्राचीन गौरव को पुनः वापस पाना चाहते हैं तो इस नियम का विधान से पालन करना होगा ।

ब्रह्मचर्य का अर्थ है ब्रह्म की प्राप्ति के लिए सम्यक् आचरण । ब्रह्म का अर्थ हैं वेद, और वेद का अर्थ है—ज्ञान । ज्ञान का सम्बन्ध विद्या से होता है। आचरण का अर्थ नियम और संयम होता है । इस प्रकार विद्या तथा ज्ञान की प्राप्ति में जो नियम और संयम अपेक्षित हैं, वही ब्रह्मचर्य का वास्तविक अभिप्राय है । वीर्य की रक्षा इसका प्रमुख अंग है । इसी कारण आज साधारणतया ब्रह्मचर्य का अर्थ वीर्य-रक्षा माना जाता है ।

मानव जीवन में वीर्य का कितना महत्व है, इसको सही अर्थ में एक ब्रह्मचारी ही समझ सकता है । वीर्य-रक्षा के ही प्रभाव से प्राचीनकाल में लोग दीर्घ जीवी, निरोग, बुद्धिमान्, तेजस्वी तथा सत्संकल्प होते थे । वेद शास्त्र में ब्रह्मचर्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की गई हैं । यथा—

'ब्रह्मचर्येण तपसा देवा मृत्युमपाघ्नत' अर्थात् ब्रह्मचर्य व तप से देवता लोग मृत्यु पर भी विजय प्राप्त कर लेते हैं । स्मृतियों तथा पुराणों में ब्रह्मचर्य की महिमा के प्रदिपादक अनेक प्रमाण मिलते हैं । जिसका एक उदाहरण प्रस्तुत है—

न तपस्तप इत्याहुः ब्रह्मचर्यं महत्तपः ।
ऊर्द्धरेता भवेद्यस्तु स देवो न तु मानुषः ॥

अर्थात् ब्रह्मचर्य से बढ़कर दूसरा कोई तप नहीं है । ब्रह्मचारी मनुष्य नहीं देवता है ।

पुराणों में भी ब्रह्मचर्य का पालन करने वाले ऋषियों, मुनियों, भक्तों तथा वीरों की अनेक गाथायें मिलती हैं । सनक, सनन्दन, सनातन और सनत्कुमार ये चारों ब्रह्मचर्य के ही बल पर आजीवन कुमार की संज्ञा से अभिहित थे । देवर्षि नारद की महिमा सर्वविदित है । व्यास-पुत्र शुकदेव जी का नाम कौन नहीं जानता, जिन्होंने राजा परीक्षित को श्रीमद्भागवत की कथा सुनाई थी, वे बाल ब्रह्मचारी थे । श्री हनुमान जी ने समुद्रलंघन जैसा अद्भुत कार्य ब्रह्मचर्य के ही बल पर पूरा किया था । भीष्मपितामह की वीरता तथा विद्या

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दोनों ब्रह्मचर्य की ही तो ऊपज थीं। इसी के बल पर ही वे इच्छा मृत्यु को पा सके थे।

ऐतिहासिक महापुरुषों में श्री शंकराचार्य जी को कौन नहीं जानता जिन्होंने ब्रह्मसूत्र, गीता, उपनिषद् आदि महत्वपूर्ण भाष्य लिखे हैं। उनके द्वारा कम आयु में ही जो इतने अद्भुत कार्य किये गये थे, वह ब्रह्मचर्य का ही तो प्रभाव था। आर्य समाज के प्रवर्तक स्वामी दयानन्द जी भी तो ब्रह्मचर्य के ही वल पर अपना नाम अमर कर लिया था। स्वामी रामतीर्थ और स्वामी विवेकानंद ने भी ब्रह्मचर्य के महत्व को समझा था। हमारे राष्ट्रपिता महात्मा गांधी बाल ब्रह्मचारी तो नहीं थे, परन्तु लगभग ३५-३६ वर्ष की अवस्था में उन्होंने ब्रह्मचर्य व्रत का आरम्भ कर आजीवन उसका निर्वाह किया था। तभी तो उन्होंने जो चाहा करके दिखा दिया। अर्थात् अंग्रेजों के चंगुल से मातृभूमि को मुक्त कर लिया। इन महापुरुषों ने ब्रह्मचर्य के बल पर न केवल अपना गौरव बढ़ाया, अपितु भारतीय संस्कृति के इतिहास में चार चाँद लगा दिये। ब्रह्मचर्य के विना गम्भीर चिन्तन नहीं हो सकता। भारतीय तत्व चिन्तकों ने जिस गम्भीरता से तत्व चिन्तन किया है, वह ब्रह्मचर्य की ही महिमा है।

ब्रह्मचर्य स्वास्थ्य की कुन्जी है। यदि कोई पूर्ण स्वस्थ रहना चाहता है तो उसे सर्वप्रथम ब्रह्मचर्य का पालन करना होगा। सभी औषधियाँ एक ओर तथा ब्रह्मचर्य रूपी महौषद्यि एक ओर। आयुर्वेद के प्रवर्तक भगवान धनवन्तरि ने कहा हैं—'जरा मरण और सब प्रकार की व्याधियों को नाश करने वाला अमृत रूप उपचार ब्रह्मचर्य का पालन करना चाहिए। आत्मा ब्रह्मचर्यमय है, और वह मानव शरीर में ब्रह्मचर्य के बल पर ही रहता हैं।

ब्रह्मचारी वीर्य-रक्षा पर जोर देता है। अतः वीर्य क्या पदार्थ है, इसे भी मालूम कर लेना चाहिये। हम जो भोजन करते हैं, उससे पहले रस, फिर रक्त, मांस, मज्जा, अस्थि आदि के निर्माण के वाद वीर्य का निर्माण होता है। यह अन्य धातुओं की अपेक्षा अल्प परिणाम में बनता है। भोजन के चालीस दिन बाद ८० बुंद रक्त से १ बूंद वीर्य बनता है। अब जरा विचार कीजिए कि ऐसी महत्वपूर्ण वस्तु की रक्षा से हमारा कितना बड़ा उपकार हो सकता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है । इन्हीं सब बातों को ध्यान में रखकर हमारे यहाँ ब्रह्मचर्य पूर्वक जीवन-यापन का उपदेश दिया गया है ।

दुःख है कि आज इस अत्यन्त आवश्यक नियम की गहरी उपेक्षा की जा रही है । यदि हमें अपना प्राचीन गौरव पुनः वापस पाना है तो ब्रह्मचर्य का कठोरता से पालन करना होगा । विद्यार्थियों को इसे भली-भाँति स्मरण रखना चाहिये कि जीवन रूपी उपवन को हरा-भरा एवं सुसज्जित बनाने के लिए ब्रह्मचर्यरूपी जलधारा की नितान्त आवश्यकता है, अन्यथा जीवन शुष्क एवं निरानन्द ही रहेगा ।

३२. व्यायाम

शरीर को स्वस्थ रखने के साधनों में व्यायाम एक मुख्य साधन है । विशेष नियम तथा संयम पूर्वक शरीर को स्वस्थ रखने की प्रक्रिया को ही व्यायाम कहते हैं । यह प्रक्रिया बचपन से लेकर बुढ़ापे तक अलग-अलग प्रकार की होती है । प्रत्येक प्राणी का शरीर व्यायाम की अपेक्षा रखता है । व्यायाम के बिना शरीर का स्वस्थ रहना असम्भव है और स्वास्थ्य के बिना शरीर का अधिक दिन तक चलना असम्भव है । अतः दीर्घ जीवन की कामना करने वाले व्यक्ति को व्यायाम नियमित करना चाहिये ।

स्वास्थ्य ही शरीर का सौन्दर्य है । जिस व्यक्ति का स्वास्थ्य ठीक नहीं रहता, वह लाख कृत्रिम प्रसाधनों से अपना सौन्दर्य बढ़ाना चाहे, बढ़ नहीं सकता । यहाँ तक कि प्रकृति से सुन्दर व्यक्ति स्वास्थ्य के अभाव में असुन्दर सा प्रतीत होता है । इसके विपरीत असुन्दर व्यक्ति यदि स्वस्थ है तो वह सुन्दर लगने लगता है । अतः सुन्दर होने के लिये भी स्वास्थ्य अनिवार्य है । उस स्वास्थ्य की कुन्जी व्यायाम ही है । अतः हमें व्यायाम की सहायता से स्वास्थ्य बनाना चाहिये ।

अवस्था के अनुसार व्यायाम की प्रक्रिया होती रहती है, जैसे—बच्चों का व्यायाम उनका इधर-उधर दौड़ना, चलना, [illegible] गिरना तथा हँसना

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आदि है । जो बच्चे इन क्रियाओं से वंचित रहते हैं, वे अधिकतर अस्वस्थ ही दिखाई देते हैं । इन क्रियाओं से उनके अंगों में स्फुरण होता है । जिससे रक्त संचार अपनी गति से होता रहता है । इससे बच्चों का शारीरिक गठन ठीक रहता है । वे जों कुछ खाते पीते हैं उनका शरीर उसे आसानी से पचा लेता है और वे पूर्ण स्वस्थ रहते हैं ।

आगे चलकर जब वे बच्चे विद्यालयों में पढ़ने जाते हैं, तो उनके व्यायाम की प्रक्रिया थोडा बदल जाती है । स्कूलों में खेल-कूद का प्रबन्ध उनके व्यायाम के लिए ही किया जाता है । जो लड़के उसमें भाग नहीं लेते हैं, वे अच्छा नहीं करते हैं । यह व्यायाम विशेष परिश्रम की अपेक्षा रखता है । विद्यालय तों हर प्रकार की विद्या को सिखाने वाला होता है । जहाँ एक तरफ वह मानसिक विकास के लिये ज्ञान-विज्ञान की शिक्षा देता है, वहीं दूसरी ओंर शारीरिक विकास के लिये व्यायाम की शिक्षा देना भी उसी का कर्त्तव्य होता है । किसी-किसी विद्यालयों में सामान्य खेल-कूद के अतिरिक्त विशेष प्राणायाम आसन आदि को भी सिखाया जाता है ।

आगे जब पढ़ लिखकर मनुष्य कार्य क्षेत्र में पदार्पण करता है, तो उसका व्यायाम क्षेत्र भिन्न हों जाता है । यदि वह खेती करता है तो उसे अन्य व्यायाम की आवश्यकता नहीं पड़ती । अपना खेती-बारी का कार्य सम्पन्न करना ही उसका उचित व्यायाम है । यदि वह व्यापारी है तो उसे व्यायाम पर अलग से ध्यान देना होगा । अन्यथा शरीर से हाथ धोना पड़ेगा । पैसा भले ही यह अधिक पैदा कर ले, परन्तु व्यायाम के अभाव में उसके जीवन का आनन्द स्वप्न हों जायगा, यदि वह अध्यापक है तो उसे भी अलग से व्यायाम करना होगा । पठन-पाठन से तो उसका मानसिक व्यायाम हो जाता है, परंतु शारीरिक व्यायाम के लिए कुछ खेल-कूद, टहलना, प्राणायाम, आसन आदि का नियमित अभ्यास परमावश्यक है । युवावस्था में कठिन व्यायाम भी किये जा सकते हैं । यथा—कुश्ती, तैरना, दण्ड बैठक, दौड़ना आदि । बुढ़ापे में व्यायाम की प्रक्रिया बदल जाती है । वृद्ध व्यक्तियों को स्वस्थ रहने के लिए केवल

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सुबह-शाम टहलना ही उत्तम व्यायाम है। इस प्रकार अवस्था और व्यवस्था के भेद से व्यायाम भी भिन्न-भिन्न हो जाते हैं।

व्यायाम के लिए उपयुक्त समय प्रातःकाल अथवा सायंकाल ही है। इसके लिए खुली हवा का होना अत्यन्त आवश्यक है। भोजन के बाद व्यायाम नहीं करना चाहिए। सामर्थ्य से अधिक व्यायाम भी हानिकर होता है। व्यायाम के बाद मुंह से साँस लेना फेफड़ों के लिए घातक है। व्यायाम के तुरन्त बाद स्नान तथा भोजन करना वर्जित है। अतः व्यायाम करने वालों को इन सूत्रों को ध्यान में रखना चाहिए।

मानव जीवन में व्यायाम का विशेष स्थान है। जिस प्रकार से रेलगाड़ी के इञ्जन को चलाने के लिए कोयले-पानी की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार मानव शरीर को चलाने के लिए व्यायाम रूपी कोयले की नितान्त आवश्यकता होती है। व्यायाम से सारा शरीर सुडौल सुसंगठित एवं पुष्ट बन जाता है। रक्त-संचार ठीक ढंग से तथा तीव्र गति से होता रहता है। हृदय की गति में वेग पैदा हो जाता है। पाचन शक्ति ठीक रहती है। पुट्ठे मजबूत तथा सीना चौड़ा हो जाता है। गर्दन मोटी हो जाती है तथा सभी इन्द्रियाँ अपना कार्य ठीक से करती रहती है। मन सदा प्रसन्न रहता है, जिसके कारण रोग व्यक्ति के पास नहीं आ पाता है।

व्यायाम का प्रभाव शरीर के साथ ही साथ मन तथा मस्तिष्क पर भी पड़ता है। जिससे मन और मस्तिष्क का विकास होता है। व्यायामशील मनुष्य संयमी होता है। संयम से उसका चरित्र निखरता है तथा समाज में वह आदरणीय बन जाता है। वह कभी क्रोध नहीं करता। क्षमा, परोपकार तथा दया आदि गुण अनायास ही उसमें आ जाते हैं और वह सबके आदर का पात्र बन जाता है। वह अपने जीवन को सार्थक सिद्ध कर लेता है।

बड़े दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि आज कल हमारे देश में लोग व्यायाम पर पूर्णतया ध्यान नहीं दे रहे हैं। सभी आर्थिक भाग दौड़ में ही व्यस्त रहते हैं। व्यायाम के अभाव में वे न तो जीवन का वास्तविक आनन्द

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्राप्त कर पाते हैं न तो देश का सिर ही ऊँचा कर पाते हैं । आये दिन नाना रोगों का शिकार होंकर अकाल में काल कलवति हों जाते हैं एक समय वह था, जब हमारे यहाँ परशुराम, हनुमान, भीष्म, अर्जुन, कर्ण तथा अभिमन्यु आदि वीरों ने पराक्रम से देश के मस्तक को ऊँचा किया था । यह उनके व्यायाम और ब्रह्मचर्य का ही प्रभाव था । राणा प्रताप, शिवाजी आदि वीर राजाओं तथा स्वामी रामतीर्थ, स्वामी विवेकानन्द, स्वामी दयानन्द, महात्मा गांधी आदि महापुरुषों की व्यायाम परायणता से हमें प्रेरणा लेनी चाहिए । गामा तथा दारा सिंह ने भारत में ही नहीं, अपितु सम्पूर्ण विश्व में मल्ल युद्ध द्वारा जो ख्याति प्राप्त की है, वह व्यायाम की ही महिमा है । प्रो० राममूर्ति जैसा वीर भारत ने ही पैदा किया, जिसने अपनी वीरता से विश्व को चकित कर दिया । यह भी व्यायाम की ही साधना का फल है । व्यायाम के बल पर ही साधना का फल है । व्यायाम के बल पर ही खिलाड़ी एक से एक अनोखे खेलों का प्रदर्शन करते हैं ।

किसी समय स्वामी विवेकानन्द जी ने कहा था कि—"व्यायाम करने और गीता पढ़ने इन दो बातों में से तुम्हें एक को चुनना हो तो मैं तो कहूँगा कि व्यायाम चुन लो ।" व्यायाम के विषय में संस्कृत के कवि ने कहा है कि—

"व्यायामपुष्टगात्रस्य बुद्धिस्तेजो यशो बलम् ।
प्रवर्धन्ते मनुष्यस्य तस्माद्व्यायाममाचरेत् ॥

अर्थात् व्यायाम से शरीर पुष्ट होता है तथा बुद्धि, तेज और यश का विकास होता है । अतः व्यायाम का आचरण करना चाहिए ।

व्यायाम मानव के लिये अति आवश्यक कर्त्तव्य है । अवस्थानुसार ध्यान रखकर इस परम कर्त्तव्य का पालन प्रत्येक मनुष्य को करना चाहिये । वास्तविक आनन्दमय जीवन बिताने का इससे बढ़कर अन्य कोई साधन नहीं है । अतः इसकी उपेक्षा कभी भी नहीं करना चाहिये ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३४ सैनिक शिक्षा

किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र के लिए सेना की अत्यन्त आवश्यकता होती है। सेना राष्ट्र को खतरों से रक्षा करने वाली एक सुसंगठित शक्ति है। प्राचीन-काल में भी राजा लोंग सेना रखते थे। राज्य के सात अंगों में सेना का प्रमुख स्थान हैं। सेना को प्रशिक्षित होना आवश्यक है। सेना के लिए पुस्तकीय शिक्षा उतनी आवश्यक नहीं है, सेना की शिक्षा दूसरे प्रकार की होती है। इसकी शिक्षा में अनुशासन, शारीरिक संगठन, शत्रु से प्रतिकार की भावना, देश की रक्षा के लिए आवश्यकता पड़ने पर मर मिटने की भावना आदि आवश्यक है। इस विषय की शिक्षा को ही सैनिक शिक्षा कहते हैं। देश के लिए इसकी उत्तमोत्तम व्यवस्था का होना आवश्यक हैं।

पहले हमारा देश इस कार्य में अन्य देशों से पीछे था। हमारी संस्कृति अध्यात्म प्रधान है। अहिंसा हम भारतीयों के लिए महामन्त्र रहा है। यहाँ भौतिकता को हेय दृष्टि से देखा जा रहा है। अतः हिंसा वृत्ति को प्रोत्साहित करने वाली सैनिक शिक्षा की उपेक्षा स्वाभाविक है। परन्तु आज अणुबम के युग में केवल शान्ति का सहारा ही किसी भी स्वतन्त्र देश के लिए हितकर नहीं है। आज का भारतीय मनुष्य अधिक क्रूर एवं दानव बन गया है। उसमें दूसरे की सम्पत्ति हड़प लेने की प्रबल भावना क्रियाशील हो गई है। आये दिन एक राष्ट्र, दूसरे राष्ट्र को आत्मसात् करने में ही अपना गौरव समझते हैं। भारत पर चीन का आक्रमण इसका प्रत्यक्ष प्रमाण है। ऐसी भयंकर परिस्थिति में भला भारत कैसे इस आवश्यक अंग को तिलाञ्जलि दे सकता है।

"जननी जन्मभूमिश्च स्वर्गादपि गरीयसी" अर्थात् माता और मातृभूमि, स्वर्ग से भी बढ़कर है। अतः इसकी सुरक्षा हर सम्भव आवश्यक उपायों से करना चाहिए। यद्यपि हमारा उद्देश्य किसी राष्ट्र पर आक्रमण करना नहीं है। परन्तु आक्रमणकारी से देश की सुरक्षा करना हमारा परम कर्त्तव्य है। इसी रक्षा के लिए सैनिक शक्ति का संगठन करना हमने भी आरम्भ कर दिया है। यह सैनिक शिक्षा हमारे यहाँ पहले भी थी, परन्तु आजकल इसमें विशेष प्रगति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है। आज प्रत्येक नागरिक को सैनिक बनने की आवश्यकता है। ताकि वह समय पर आवश्यकता पड़ने पर रणक्षेत्र में जाकर, शत्रुओं का सामना कर सके। इन्हीं कारणों से विद्यालयों में भी सैनिक शिक्षा अनिवार्य कर दी गई है।

विद्यार्थी का जीवन एक कच्चे घड़े के समान होता है। उसे जिस वातावरण रखकर जैसी शिक्षा दी जायगी, वह उसी के अनुरूप ही बन जायगा। इसलिए भविष्य को ध्यान में रखकर हमारे राष्ट्र नायकों ने विद्यालयों में सैनिक शिक्षा अनिवार्य कर दी है। पुस्तकीय शिक्षा केवल आत्मिक या बौद्धिक उन्नति में ही सहायक हो सकती है। सैनिक शिक्षा शारीरिक उन्नति का भी मुख्य साधन है। आज बढ़ती हुई अनुशासनहीनता को देखकर भी इस शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। सैनिक शिक्षा केवल युद्ध स्थल के लिए ही उपादेय नहीं है, परन्तु जीवन के प्रत्येक क्षण में उसकी उपादेयता है। संघर्ष ही जीवन है। उस जीवन रूपी संघर्ष से जूझने के लिए भी सैनिक शिक्षा की महती आवश्यकता है।

सैनिक शिक्षा में परेड का प्रमुख स्थान है। एक साथ हाथ पैर मिलाकर चलने, घूमने, दौड़ने आदि से सहयोगिता की भावना दृढ़ होती है। आपस में सुसंगठित होकर कार्य करने की प्रवृत्ति का विकास होता है। इस प्रकार सैनिक शिक्षा से एकता का अमूल्य लाभ अनायास ही प्राप्त हो जाता है।

इस शिक्षा में आज्ञा पालन का सबसे अधिक महत्व है। सेना में नायक की आज्ञा ही सर्वोपरि होती है। मृत्यु के सम्मुख भी नायक की आज्ञा के बिना सैनिक पीछे नहीं हट सकता है। एक बार नेपोलियन बोनापार्ट के एक सैनिक ने बिना उसकी आज्ञा के शत्रु पर आक्रमण कर दिया। यद्यपि उसका आक्रमण उचित था, परन्तु नायक की आज्ञा नहीं थी, इसलिए उसे दण्डित किया गया साथ ही उसके इस उत्साह पूर्ण कार्य की प्रशंसा भी की गई।

आज हमारे विद्यार्थियों में आडम्बर विलासिता आदि दुर्गुणों के आ जाने से स्वास्थ्य की कमी दिखाई दे रही है। सैनिक शिक्षा से शारीरिक स्वास्थ्य में वृद्धि होती है। स्वास्थ्य सौन्दर्य की कसौटी है। आत्मा का बल भी शरीर के

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बल पर ही निर्भर है। जिसका शरीर स्वस्थ एवं पुष्ट है, उसी के पास आत्म-बल भी होता है। आत्मबल की मानव जीवन में अत्यन्त आवश्यकता है। अतः सैनिक शिक्षा सबके लिए अत्यन्त आवश्यक है।

सैनिकों का एक स्वतन्त्र पहनावा भी होता है। उसे वर्दी कहते हैं। यह वर्दी शरीर को सुसंगठित एवं चुस्त बनाने में अधिक सहायता पहुँचाती है। इसके अतिरिक्त सैनिक शिक्षा से हमारा नैतिक स्तर भी ऊँचा उठता है। नैतिक पतन की इस परिस्थिति में सैनिक शिक्षा का अत्यधिक महत्व है। विशेष कर विद्यार्थियों में इसकी विशेष आवश्यकता है। क्योंकि वे ही भारत के भावी कर्णधार हैं।

निष्कर्ष रूप में यह कहा जा सकता है कि सैनिक शिक्षा मानव जीवन में अत्यन्तावश्यक है। उसकी आवश्यकता युद्ध के लिए ही नहीं है, अपितु जीवन के प्रतिक्षण के लिये है। बल एवं बुद्धि को विकसित करने के लिये भी सैनिक शिक्षा की महती उपयोगिता है। इसकी सर्वाङ्गीण उपयोगिता को देखते हुए, अन्त में यही कहा जा सकता है कि सैनिक शिक्षा किसी भी स्वतन्त्र राष्ट्र के लिए वरदान है।

३५. पुस्तकालय

पुस्तकालय का अर्थ है पुस्तक-घर, अर्थात् जहाँ विविध विषयों की पुस्तकें एक जगह ही संगृहीत की गई हों उस स्थान विशेष को पुस्तकालय कहते हैं। पुस्तकालय अनेक प्रकार के होते हैं, जैसे—शहर का पुस्तकालय, विद्यालय का पुस्तकालय, गाँव का पुस्तकालय तथा निजी पुस्तकालय आदि। इसकी उपयोगिता केवल पढ़े लिखे समाज के लिए हीं है। ज्यों-ज्यों देश से शिक्षा का प्रचार एवं प्रसार होता जा रहा है, त्यों-त्यों पुस्तकालय की संख्या भी बढ़ती जा रही है। धीरे-धीरे पुस्तकों की संख्या में भी वृद्धि हो रही है।

पढ़ना लिखना प्रत्येक मानव के लिये आवश्यक कर्त्तव्य है। यह अध्ययन मुख्यतः दो प्रकार का होता है—१—सामान्य, २—विशेष। सामान्य अध्ययन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विद्यालयों में पाठ्य पुस्तकों का होता है । परन्तु विशेष अध्ययन का मुख्य साधन पुस्तकालय ही है । विद्यार्थी किसी पाठ्य विषय का अध्ययन करके सामान्य ज्ञान ही पा सकता है विस्तृत ज्ञान के लिये उसे गुरुओं की शरण में जाना होगा या तो पुस्तकालय की शरण लेनी होयी । गुरु भी उसे पुस्तकालयों की सहायता से ही विस्तृत ज्ञान कराने में सफल हो सकता है । यही मुख्य कारण है कि प्रत्येक विद्यालय में एक पुस्तकालय की व्यवस्था की जाती है । पुस्तकालय में ही एक स्थान ऐसा होता है जहाँ बैठकर लोग पुस्तकें तथा नाना प्रकार के पत्र-पत्रिकाओं को पढ़तें हैं । उसे 'वाचनालय' के नाम से जाना जाता है । वाचनालय पुस्तकालय का मुख्य अंग हुआ करता है ।

पुस्तकालय, अवकाश के समय का सदुपयोग करने का मुख्य साधन भी होता है । अवकाश के समय गन्दे वातावरण में पड़कर अपना अमूल्य समय नष्ट न करें, इसके लिए भी पुस्तकालय बहुत बड़ा आधार है । वहाँ बैठकर हम अपने ज्ञान को विकसित करने के लिए अच्छे-अच्छे लेखकों की पुस्तकें पढ़कर लाभान्वित हो सकते हैं । वाल्मीकि, व्यास, कालिदास, श्रीहर्ष, भवभूति, सूर, तुलसी, कबीर, बिहारी, प्रसाद, महादेवी, पंत आदि कवियों की कवितायें तथा उन पर लिखित समालोचनायें पढ़कर हम अपने ज्ञान भण्डार की वृद्धि कर सकते हैं । एक ही साथ एक विषय की कई पुस्तकें पुस्तकालय में ही मिल सकती हैं । इन साहित्यिक एवं समालोचनात्मक पुस्तकों के अतिरिक्त बड़े-बड़े समाज सुधारकों महात्माओं एवं विद्वानों तथा ऐतिहासिक महापुरुषों के चरित्रों को पढ़कर हमने जीवन का मार्ग भी प्रशस्त कर सकते हैं । विविध पत्र-पत्रिकाओं में छपी हुई सामायिक समस्याओं से अवगत हो सकते हैं । वाचनालय में बैठकर पुस्तकालय की पुस्तकें तथा पत्र-पत्रिकाओं से आवश्यक बातों को हम अपनी कापी पर लिख भी सकते हैं । ये सब पुस्तकालय के ही महत्वपूर्ण चमत्कार हैं ।

आजकल विद्यालयों में प्रतियोगितायें भी हुआ करती हैं । यथा भाषण-प्रतियोगिता, अन्त्याक्षरी प्रतियोगिता, कविता पाठ, लेख प्रतियोगिता आदि । इन सभी में उत्तम स्थान पाने के लिए हमें केवल पाठ्य पुस्तकों पर ही आधारित

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नहीं रहना होगा। उसके लिए गुरुओं तथा पुस्तकालयों की शरण में जाना होगा। वाचनालय में बैठकर प्रतियोगिता से सम्बन्धित पुस्तकों को पढ़ना होगा। उनमें निहित आवश्यक तत्वों को एक जगह जुटाना होगा। नाना प्रकार के उदाहरणों से सुसज्जित भाषण या लेख अच्छा स्थान पाने में सहायक होते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि उत्तम छात्र बनने के लिए पुस्तकालय का लाभ उठाना होगा। इसी कारण से प्रत्येक अच्छे विद्यालय में एक समृद्ध पुस्तकालय हुआ करता है। विद्यार्थियों के अतिरिक्त अध्यापकों के लिए विद्यालय पुस्तकालय सहायक सिद्ध हुए हैं।

बहुत से लोग अपने घरों में भी अच्छी-अच्छी पुस्तकों का संग्रह करते हैं। इसको ही 'निजी पुस्तकालय' के नाम से जाना जाता है। निजी पुस्तकालय अधिकतर अध्यापक तथा वकील लोग ही रखते हैं। पढ़ने के शौकीन कुछ धनी मानी व्यक्ति भी निजी पुस्तकालय रखते हैं। यह संग्रह सबके अपने निजी कार्य से सम्बन्धित हुआ करता है। इससे सामान्य लोग लाभ नहीं पा सकते हैं। ऐसे पुस्तकालयों का प्रचलन विदेशों में विशेष रूप से हैं।

इस समय गाँवों में भी पुस्तकालय तथा वाचनालय की व्यवस्था हो रही है, इसे ही 'ग्राम पुस्तकालय' कहते हैं। ग्रामीण पुस्तकालय सामान्य स्तर के हुआ करते हैं। जिस प्रकार गाँवों में शिक्षा का प्रचार बढ़ता जा रहा है, उसी प्रकार ग्रामीण पुस्तकालयों में भी विकास हो रहा है। वास्तव में इन पुस्तकालयों की हमारे देश में कमी है। सरकार ने इस क्षेत्र में अब ध्यान देना शुरू कर दिया है। जिससे गाँव की भोली-भाली जनता को भी पुस्तकालय के माध्यम से सामयिक पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ने का सुअवसर मिल रहा है। अपने कार्य से खाली होने पर मनोरंजन के लिए भी इन्हें कुछ कहानी आदि पढ़ने को आसानी से मिल जाते हैं। इसका मानसिक स्तर विकसित हो रहा है। ये पुस्तकालय शिक्षा के प्रचार में भी सहायक सिद्ध हुए हैं।

शहरों में तो लगभग हर मुहल्ले में पुस्तकालय तथा वाचनालय हैं। इसके अतिरिक्त विशिष्ट पुस्तकालय भी शहरों में ही होते हैं। इन पुस्तकालयों के खुलने तथा बन्द होने का समय निर्धारित होता है। इसके खुलने के समय में

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अधिकांश लोग इससे लाभ उठाते हैं। यहाँ पर पुस्तकों के आदान-प्रदान की अच्छी व्यवस्था होती है। कुछ निश्चित शुल्क जमा करने पर घर ले जाने के लिए भी पुस्तकें मिलती हैं। इनका सामाजिक तथा शैक्षणिक दृष्टि से महत्व-पूर्ण स्थान है।

उपर्युक्त सभी प्रकार के पुस्तकालयों में पुस्तकों को रखने के लिए एक वैज्ञानिक प्रक्रिया बनाई गई है। इसको 'ग्रन्थालय विज्ञान' कहते हैं। इस प्रणाली का ज्ञान पुस्तकालय के कर्मचारी को आवश्यक है। इसके प्रशिक्षण की व्यवस्मा इस समय कई विश्वविद्यालयों में है। इस विषय पर हिन्दी तथा अंग्रेजी में अनेकों पुस्तकें भी लिखी जा चुकी है। इस पर आज नये-नये अन्वे-षण भी हो रहे हैं।

मुख्यतया पुस्तकालयों की व्यवस्था समाज के हित के लिए की गई है। अतः अहितकार पुस्तकों का संग्रह पुस्तकालय में नहीं होनी चाहिये। दुःख है कि इस समय पुस्तकालयों में इस विषय पर ध्यान नहीं दिया जा रहा है। आजकल बाजारों में कुछ निकृष्ट स्तर की पुस्तकें देखने को मिलती है, जो सामाजिक दृष्टि से हानिकारक हैं। ऐसे मनचले साहित्यों को पुस्तकालय में स्थान नहीं देना चाहिए। क्योंकि पुस्तकालय हमारे ज्ञानवर्धन का महत्वपूर्ण साधन है, इसमें अज्ञान मूलक पुस्तकों का संग्रह कथमपि नहीं होनी चाहिए।

कुछ भी हो अभी हमारे देश में पुस्तकालयों की अत्यन्त कमी है। जो है भी उनमें पर्याप्त पुस्तकों का संग्रह नहीं है। विशेषकर ग्रामीण क्षेत्र इस दिशा में अभी बहुत ही पीछे है। सरकार का यह पावन कर्त्तव्य होता है कि इस कमी को विशेष ध्यान देकर दूर करने का प्रयास करें। साथ ही साथ जनता जनार्दन को भी इस तथ्य पर ध्यान देनें की आवश्यकता है। क्योंकि पुस्त-कालय जितने ही विकसित होंगे, देश की उन्नति उतनी ही सम्भव है। इस-लिए कि पुस्तकालय ही ज्ञान के साधन हैं और ज्ञान के बिना किसी भी देश का सांस्कृतिक विकास नहीं हो सकता। यहाँ तक कि ज्ञान के बिना मनुष्य अपने परम लक्ष्य 'मोक्ष' तक नहीं पहुँच सकता। कहा गया है कि—

"ऋते ज्ञानान्नमुक्तिः' अर्थात् ज्ञान के अभाव में मोक्ष सम्भव नहीं हो सकता। अतः ज्ञान के साधन पुस्तकालय की उत्तम व्यवस्था होनी चाहिए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३६. समाचार पत्र

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है । इसलिए वह समाज की गतिविधियों से अवगत होने के लिए उत्सुक रहा करता है । वह प्रत्यक्ष घटनाओं के अलावा देश-विदेश में घटित होने वाली घटनाओं के विषय में भी वास्तविक जानकारी प्राप्त करने की प्रबल इच्छा रखता है । मानव की इन्हीं इच्छाओं से समाचार पत्रों का जन्म हुआ । इस प्रकार समाचार पत्र का अर्थ है कि—"देश-विदेश की सामाजिक गतिविधियों को प्रकाशित करने वाला" । अर्थात् जिन समाचारों का ज्ञान हमें पत्र के माध्यम से प्राप्त होता है, उसे समाचार-पत्र कहते हैं । यह दैनिक, साप्ताहिक, पाक्षिक, मासिक आदि प्रकार का होता है । जो समाचार पत्र प्रतिदिन प्रकाशित होता है उसे दैनिक समाचार पत्र कहते हैं। इसी प्रकार एक सप्ताह में प्रकाशित होने वाले को साप्ताहिक, एक पक्ष में प्रकाशित होने वाले को पाक्षिक तथा एक मास में एक बार प्रकाशित होने को मासिक समाचार पत्र के नाम से जानते हैं ।

समाचार पत्रों का इतिहास अधिक पुराना नहीं है । सोलहवीं शताब्दी में इटली के 'वेनिस' नगर में इसका जन्म हुआ । अन्य देशों ने भी इसका अनुकरण किया । एक वर्ष बाद इङ्गलैण्ड देश में भी समाचार पत्र का दर्शन होना शुरू हो गया । भारतवर्ष में अंग्रेजों के आने पर समाचार-पत्र प्रकाशित होने लगा । ये समाचार पत्र अंग्रेजी भाषा में होता था । सर्वप्रथम १७४० ई. में 'इण्डिया गजट' नामक पत्र प्रकाशित हुआ । इसके बाद इसमें विकास हुआ । ईसाइयों ने सर्वप्रथम 'समाचार दर्पण' नामक हिन्दी समाचार पत्र निकाला । हिन्दी के प्राचीन समाचार पत्रों में राजा शिवप्रसाद का 'बनारस अखबार' तथा भारतेन्दु की 'कवि प्रवचन मुधा' आदि उल्लेखनीय हैं। सन् १८३५ ई० में मुद्रण यन्त्र की स्वतन्त्रता के परिणाम स्वरूप कई पत्र तथा पत्रिकाओं का प्रकाशन हीने लगा ।

जो वस्तु समाज के लिए अधिक प्रिय होती हैं, उसका विकास शीघ्रातिशीघ्र होता है । समाचार पत्रों की लोकप्रियता इतनी बढ़ती गयी कि थोड़े

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

समय में ही इसकी संख्या में अधिक वृद्धि हो गई। इसी कारण आज देश-विदेश सभी जगह बहुत से समाचार पत्र प्रकाशित हो रहे हैं। कोई ऐसी भाषा नहीं है जिसमें दो एक समाचार पत्र न निकलते हों। इस समय चारों ओर समाचार पत्रों की धूम मची हुई है। कुछ दिन पूर्व भारत में समाचार पत्र पढ़ने वालों की संख्या कम थी, इसीलिए कम ही समाचार पत्र प्रकाशित होते थे। परन्तु अब ऐसी बात नहीं है। शिक्षा के प्रसार के साथ-साथ समाचार पत्र के पाठकों में भी वृद्धि हुई है। इसी कारण भारत भी अब इस क्षेत्र में पीछे नहीं है।

इन समाचार पत्रों से समाज को बहुत बड़ा लाभ है। इसके माध्यम से हमें घर बैठे ही देश-विदेश की राजनीतिक, धार्मिक, साहित्यिक सामाजिक एवं व्यावसायिक समाचार एक जगह ही मिल जाते हैं। इनसे हमें ताजे से ताजे समाचारों का ज्ञान मिलता है। नौकरियों के विज्ञापन, विवाह सम्बन्धी विज्ञापन आदि अनेक प्रकार के विज्ञापनों का ज्ञान भी हम समाचार पत्रों के द्वारा करते हैं। जिससे हमारे विकास का मार्ग प्रशस्त होता है। विद्यार्थीगण अपना परीक्षाफल कम से कम समय तथा पैसे में घर बैठे जान लेते हैं। इसी प्रकार और भी अनेकों सामाजिक लाभ भी समाचार पत्रों के माध्यम से मिलते हैं। इनसे व्यक्तिगत लाभ भी कम नहीं होता। इस समय इसका प्रकाशन एक अच्छा व्यवसाय बन गया है। इसका एक सम्पादक मण्डल होता है। समाचार के व्यवसाय से बहुत से व्यक्ति लाभान्वित होते हैं। इसके बहुत से एजेण्ट होते हैं, जो समाचार पत्रों को घर-घर पहुँचाते हैं। इससे बड़ा लाभ संचालक को होता है। आज टाटा, बिरला, डालमिया आदि जितने धनी लोग हैं वे सभी समाचार पत्रों का प्रकाशन करते हैं। जिससे वे अधिकाधिक सम्पत्ति पैदा कर रहे हैं।

सभी समाचार पत्रों में कुछ नियत स्तम्भ हुआ करते हैं। यथा-सम्पादकीय टिप्पणी, स्थानीय समाचार, जनपदीय समाचार, व्यापारिक समाचार, अग्रलेख एवं विज्ञापन आदि। मुखपृष्ठ पर विशिष्ट एवं सामयिक समस्या का विवेचन सहित स्पष्टीकरण होता है। सम्पादक अपनी ओर से उचित सलाह भी देता है। यह स्तम्भ समाचार पत्र का महत्वपूर्ण भाग है। सम्पादकीय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

टिप्पणी वाला भाग भी सम्पादक के लिये ही होता है। इसमें छोटी-छोटी महत्वपूर्ण समस्याओं का समाधान रहता है। स्थानीय समाचार वाले कालम में स्थानीय समाचार विस्तृत रूप से दिये जाते हैं। व्यावसायिक समाचार के लिये व्यावसायिक स्तम्भ होता है। इसमें बाजार के भाव भी रहते हैं। जैसे सोना, चाँदी, गल्ले आदि के विज्ञापन का स्तम्भ भी महत्वपूर्ण स्थान रखता है। इससे पर्याप्त धन की प्राप्ति होती है। क्योंकि विज्ञापनों के माध्यम से समाचार पत्रों की आमदनी बढ़ जाती है। जिस पात्र में जितना ही अधिक विज्ञापन प्रकाशित होता है उसकी आमदनी उतनी ही अधिक होती है।

समाचार पत्र सन्देश वाहक का भी कार्य करते हैं। इनके माध्यम से हमारी दैनिक समस्यायें सरकार तक पहुँचाती हैं तथा उसका उचित समाधान होता है। सरकार भी इनके द्वारा अपनी बातें जन सामान्य तक पहुँचाकर उनका पथ प्रदर्शन करती है। देश की समस्याओं पर यदि सरकार समुचित ध्यान नहीं देती है तो समाचार पत्रों में टीका टिप्पणी निकलने लगती है जिससे सरकार का ध्यान उस समस्या की ओर आकृष्ट होता है।

राष्ट्रीय जागरण के लिये भी समाचार पत्रों का विशेष महत्व है। जनता में राष्ट्रीय चेतना उद्बुद्ध करने का कार्य भी इन्हीं के माध्यम से होता है। स्वदेश प्रेम तथा स्वाधीनता के प्रति भावों को जगाने में इनका बहुत महत्वपूर्ण योगदान होता है। इस प्रकार देश की सभ्यता एवं संस्कृति के प्रचार एवं प्रसार में इनका बहुत बड़ा हाथ होता है।

समाचार पत्रों का जो अर्थ है उसी की सीमा में रहकर यथार्थ बातों का ही प्रकाशन उन्हें करना चाहिये। इसी में वे मर्यादित होते हैं। कष्ट है कि, इस समय कुछ ऐसे भी समाचार पत्र निकलने लगे हैं, जो असत्य एवं मनमाने समाचारों को प्रकाशित करने में ही अपनी मर्यादा समझ रहे हैं। उसी समाचार पत्र का महत्व होता है जो 'वादो' के विवाद से दूर रहकर निष्पक्ष होते हैं। समाचार पत्र ही समाज के लिए दर्पण होता है, अतः इसे स्वच्छ रहना चाहिए। स्वच्छ रहने पर ही समाज का वास्तविक स्वरूप चित्रित हो सकता है। जिस कारण वह प्रतिष्ठित होकर सच्चा पथ प्रदर्शक बन सकेगा। अतः इसे अपनी मर्यादानुसार ही कार्य करना चाहिए।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

३७. विज्ञान के चमत्कार

पुराने समय में सभी कार्य तपस्या तथा मन्त्रों के द्वारा सम्पन्न किए जाते थे। उस समय देश की स्थिति उसी पर आधारित थी। परन्तु आज का युग वैज्ञानिक युग है। विज्ञान का अर्थ होता है 'विशेष ज्ञान'। परन्तु आजकल यह एक विद्या का वाचक है। विज्ञान वह भौतिक विद्या है, जिसके सहारे किसी भी वस्तु का प्राप्त किया जाता है। अंग्रेजी भाषा में इसे 'साइन्स' कहते हैं। यह विद्या भारत में पहले थी परन्तु अध्यात्म विद्या का विकास होने से इसका लोप गया। आज हम देखते हैं कि विश्व वैज्ञानिक साधनों के प्रयोग से काफी विकसित हो गया है। यह प्रातःकाल जागने से लेकर सायं-काल सोने तक विज्ञान का ही साम्राज्य अपने जीवन में देखते हैं।

आज विज्ञान के सहारे बड़े आश्चर्यजनक कार्य हो रहे हैं। हम साइकिल से लेकर विमान द्वारा छोटी से लेकर लम्बी-लम्बी यात्रायें पूरी कर रहे हैं। विज्ञान की देन है कि हम लोग कम इंधन में, वहुत कम समय में भोजन तैयार करते है। प्रचण्ड गर्मी में हम वैज्ञानिक साधनों से ठण्डक का अनुभव करते हैं। इसी प्रकार हीटर का उपयोग करते हैं। दूर देशों में आज क्या-क्या हो रहा है इसको हम वैज्ञानिक साधनों द्वारा घर बैठे देख लेते हैं। समाचार पत्रों का प्रकाशन तथा देश-विदेश का समाचार मालुम करना, विज्ञान का ही चमत्कार है। विज्ञान के द्वारा ऊसर भूमि को कृषि योग्य बनाया जाता है। इससे सहायता से ही हमें नवीन बीज तथा उर्वरक प्राप्त होते हैं। विज्ञान की सहायता से ही आज हम उन्नतिशील खेती करके आत्म निर्भर हो गये हैं।

विज्ञान ने मनोरंजन के क्षेत्र में जो आविष्कार किये हैं, उसकी कहानी तो और भी मनोरंजक है। सिनेमा से आज कौन अपरिचित है ? सभी शहरों में आज सिनेमागृह बन गये हैं, सभी लोग उसका आनन्द ले रहे हैं। मनोरंजन के क्षेत्र में दूसरा स्थान वीडिओ और टी० वी० का है, जिससे द्वारा हम लोग घर बैठे मनोरंजन करते हैं। तीसरा स्थान रेडियो का है, इससे हम संगीत

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नाटक तथा समाचार सुनते हैं । इतना ही नहीं इन मनोरंजन के साधनों से जीवनोपयोगी शिक्षायें मिलती रहती है ।

चिकित्सा के क्षेत्र में भी विज्ञान की देन अविस्मरणीय है । आज कठिन से कठिन रोगों को आसानी से दूर करने के लिए अनेक प्रकार की दवायें बनाई गई है । एक्सरे मशीन कीं सहायता से शरीर के भीतर सभी अंगों की देखभाल करके उचित चिकित्सा की जा रही है । चीर-फाड़ सम्बन्धी यन्त्रों के बन जाने से, किसी भी अनावश्यक तत्त्व को दूर कियां जा सकता है । इन सभी के अलावाँ इन्जक्शन की महिमा तो सर्वविदित है शरीर में इसके प्रवेश से महान से महान पीड़ा तुरन्त दूर किया जा सकता है विज्ञान ने इस क्षेत्र में उन्नति प्राप्त करके, लोगों का जीवन सुखमय बना दिया है ।

बिजली, विज्ञान की सबसे महत्त्वपूर्ण देन है । इसका प्रचार-प्रसार आज-कल चरमोत्कर्ष पर है । बिजली द्वारा चलने वाले पंखे का आनन्द हम लोग नित्य लेते हैं । बिजली मात्र प्रकाश का साधन ही नहीं अपितु अन्य उपयोगी वस्तुओं के निर्माण में इसका उपयोग किया जाता है । इससे आज अनेकों मशीनें चल रही है । कृषि के विकास में बिजली का महत्वपूर्ण योगदान है । इसी कारण आज प्रत्येक गावों में बिजली का प्रसार किया जा रहा है ।

विज्ञान के द्वारा ही प्रलयंकर अस्त्र-शस्त्रों का आविष्कार इस वैज्ञानिक युग की महत्वपूर्ण विशेषता है । इसके द्वारा क्षणमात्र में सृष्टि का विनाश किया जा सकता है । इसके अलावाँ मशीनगन, तोप तथा जेट विमान का निर्माण युद्ध के लिए अत्यन्त उपयोगी है । आज के साधन के आगे पुराने समय के साधन फीके पड़ जाते हैं । वैज्ञानिक साधनों के हो जाने से सुरक्षा का सन्देह दूर हो जाता है ।

मनुष्य एक भौतिक प्राणी है । भौतिक सुख सुविधाओं को पाना उसका स्वभाव है । उसको पाने के लिये जो-जो आविष्कार हुआ हैं, वे सभी वैज्ञानिक आविष्कार हैं । तभीं तो आज मनुष्य मंगल और चन्द्रग्रह पहुँच रहा है । आज

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का मानव जितना सुखी, सम्पन्न, समुन्नत बना हुआ है, वह सब विज्ञान का ही प्रभाव है। इसके उपकरणों की सहायता से मनुष्य जो चाहता है, उसे सहज ही कर डालता है। इतना हीं नहीं 'स्पुटनिक' विमान से आज का मानव चन्द्रमा पर पहुँच गया है।

अनेक सुख संसाधनों के अतिरिक्त विज्ञान हमें बहुत से भोग्य पदार्थों को प्रदान करता है। परन्तु इन सभी उपलब्धियों के साथ ही साथ अनेक विध्वंसक पदार्थों को भी तैयार कर दिया है। जिसके परिणामस्वरूप दानवीय प्रवृत्ति का होकर विश्व का विध्वंस करना चाहता है। विश्व शान्ति के स्थान वर विध्वंस तथा विश्व युद्ध की संभावना से प्रत्येक देश एक दूसरे से सशंकित है। अतः हमें चाहिये कि विज्ञान का उपयोग विध्वंस में नहीं अपितु विकास में सफलता प्राप्त करने में करें।

इस प्रकार विज्ञान के अनेक चमत्कार पूर्ण आविष्कार आज हमारे लिए वरदान बने हुए हैं। उसकी उपयोगिता का वर्णन शब्दों में नहीं किया जा सकता। रूस और अमेरिका आज वैज्ञानिक प्रगति में अग्रणी हैं। भारतवर्ष ने भी जब से स्वतन्त्रता हासिल की है, तब से इस क्षेत्र में कार्य कर रहा है। वह दिन दूर नहीं जब भारत भी रूस और अमेरिका की पंक्ति में पहुँच सकेगा। अतः विज्ञान का भविष्य उज्ज्वल है।

३८. दहेज प्रथा

दहेज वह सम्पत्ति है जो वस्तु अथवा नगद धनराशि के रूप में वर-पक्ष को विवाह के समय कन्या पक्ष की ओर से दी जाती हैं। इस प्रकार के शुभ अवसरों पर उपहार देने की परम्परा तो प्रायः सभी देशों में और जातियों में प्रचलित है। परन्तु वह स्वेच्छा से होने के कारण कष्टकर नहीं है। भारतवर्ष में यह प्रथा अनिवार्य होने के कारण समाज के सम्मुख विकराल समस्या का रूप धारण कर लिया है। एक ही पिता की सन्तान होने पर भी पुत्र जहाँ सम्पत्ति माना जाता है वहीं कन्या भार स्वरूप हो जाती है। कन्या के पैदा होते ही माता-पिता चिन्तित हो जाते हैं। उनकी चिन्ता का प्रमुख कारण

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लड़की की शिक्षा-दीक्षा तथा पराये घर में जाकर सुखी एवं शान्तिमय जीवन बिताने के विषय में होती है । लड़की का विवाह कहाँ किससे और किस प्रकार से किया जाय कि सामाजिक मर्यादा की रक्षा के साथ-साथ वरपक्ष को प्रसन्न रखा जा सके । इन सभी परेशानियों में दहेज रूपी अवरोधक के कारण माता-पिता चाहते हुए भी अपनी गुणवती कन्या के लिये उसके योग्य एवं अनुरूप वर को प्राप्त नहीं कर पाते हैं ।

हमारे देश में इस प्रथा का प्रचलन पौराणिक कथाओं में भी मिलता है । मनुस्मृति में भी इसका उल्लेख किया गया है । सीता के विवाह में भी कन्या पक्ष की तरफ से अनेक वस्तुयें दहेज स्वरूप प्रदान किए जाने से का वर्णन प्राप्त होता है ।—यथा

‘दाइज अमित न सकिय कहि दीन्हँ विदेह बहोरि ।
जो अवलोकत लोकपति लीक संपदा थोरि ॥’

मुगल काल में सामान्य हिन्दू धन–सम्पन्न नहीं थे । परन्तु धनी लोग अपनी कन्या के विवाह में दहेज देकर अपने वैभव का प्रदर्शन किया करते थे। अंग्रेजों के समय में धन की महत्ता तथा भोग की प्रवृत्ति चरम सीमा पर थी । अतः स्वेच्छा से दहेज दिया जाने लगा । परन्तु अब दहेज दान न होकर कन्या के पिता के लिए अर्थ दण्ड बन गया हैं । इससे समाज में अनेक बुराइयों का उदय होना स्वाभाविक हो गया । अतः वर्तमान समय में ‘दहेज प्रथा’ भारतीय समाज का कोढ़ हो गया है । इस समय दहेज कटुता पैदा करने में सहायक बन गया है । आज दहेज का दानव, न जाने कितनी ललनाओं के स्वप्न महलों को ध्वस्त करता हुआ, कितनों का जीवन लीलाओं को समाप्त करता हुआ, कितने माता-पिता को ऋण-भार से पीसता हुआ उग्रतम रूप धारण कर लिया है । पर्याप्त दहेज न दे सकने के कारण कितने ही लोगों को अपमान का विष घूंट पीना पड़ता है । कितनी ही कुमारी कलियों को असमय में ही मुरझाना पड़ता हैं । जो अत्यन्त ही उपहास कारक है ।

प्राचीन युग में दहेज प्रथा भले ही सद्भावना की द्योतक रही हो, प

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आज वह घातक एवं विघटनकारी सिद्ध हो रही है। इसके कारण भी धन की लोलुपता को बढ़ावा मिल रहा है। मानवीय सद्भाव के स्थान पर धन की प्रतिष्ठा हो रही है। समाज का आर्थिक पतन हों रहा है। समाज ऋण के भार से बोझिल हो रहा है। इससे आर्थिक भ्रष्टाचार, अनैतिक आचरण तथा बेमेल विवाह की वृद्धि हो रही है। अतः दहेज प्रथा समाज को सामाजिक, आर्थिक, चारित्रिक तथा मानसिक पतन के गर्त में झोंक रही है।

दहेज रूपी राहु नारी समाज रूपी चन्द्र को हमेशा से ग्रसता चला आ रहा है, परन्तु आज यह अत्यन्त भयंकर रूप धारण कर लिया है। इस समय इसका राष्ट्रीय स्तर पर समूल नाश करने का संकल्प हो चुका है। हमारी केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारें कानून बनाकर दहेज प्रथा के उन्मूलन में प्रयासरत हैं। अव दहेज लेना तथा देना दोंनों को गैर कानूनी अपराध घोंषित कर दिया गया है। सरकार ने इसके लिए एक सीमा निर्धारित कर दी है, जिसमें लड़की के लिए कुछ वस्त्र तथा दैनिक उपयोंग की वस्तुयें दी जा सकती है। युवा कांग्रेस के पाँच सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत इस प्रथा कों रोंकने के लिये राज्यों में अध्यादेश जारी कर दिये गये हैं। परन्तु जब तक उसे समाज का सहयोग नहीं प्राप्त होगा, उसकी सफलता सन्देहास्पद है। दहेज प्रथा को रोकने में हमारे समाज की खोखली परम्पराएँ भी बाधक हैं।

इस कुप्रथा के उन्मूलन के लिए युवा पीढ़ी कों अग्रसर होना होंगा। युवक तथा युवती यह दृढ़ निश्चय कर लें कि उनके विवाह में दहेज की कोंई आवश्यकता नहीं होगी। जो पिता अपने पुत्र की शादी के लिए दहेज मागें उससे कोई भी कन्या अपना विवाह न करें। यदि युवक और युवतियों में इतनी दृढ़ता और साहस आ जाय तो वह दिन दूर नहीं जब दहेज प्रथा का नामोंनिशान भी मिट जायगा।

विवाहों में व्यय कम करने के लिए सामूहिक विवाहों का आयोजन किया जाना चाहिये। यह प्रसन्नता की बात है कि युवा पीढ़ी ने इस दिशा में ध्यान दिया है। कई स्थानों पर सामूहिक विवाह के आयोजन भी हुए हैं। महिला

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संगठनों ने दहेज प्रथा के उन्मूलन के लिए निर्भीकता पूर्वक दृढ़ कदम बढ़ायें हैं। कुवाँरी कन्याओं ने दहेज रूपी मूल्य पर बिकने वाले वरों को अस्वीकार कर दिया है। इन सभी लक्षणों से भविष्य उज्ज्वल प्रतीत हो रहा है। हजारों पढ़े लिखे युवक युवतियों ने दहेज रहित विवाह का संकल्प तथा शपथ ग्रहण किया है। यह प्रसन्नता की बात है कि युवा पीढ़ी ने जन जागृति और कानून की सहायता से जो युद्ध स्तर पर राष्ट्रीय कार्यक्रम चलाया जा रहा है, उससे निश्चय ही समाज की रूढ़िबद्ध मनोवृत्ति परिवर्तित होगी और सामाजिक वातावरण स्वस्थ हो सकेगा।

दहेज प्रथा के दुष्परिणामों को ध्यान में रखकर समाज के प्रत्येक व्यक्ति कों, चाहे वह वरपक्ष से सम्बन्ध रखता हो या कन्था पक्ष से, वास्तविक ईमानदारीं से इसके उन्मूलन के लिए जी जान से प्रयास करना चाहिए। यदि इस विषय में थोड़ी सी भी लापरवाही बरती गई तो, यह ऐसा घुन है कि भीतर ही भीतर समाज कों खोखला बना देगा। इस भयंकर रोग से मुक्ति पाने के लिए समाज के एक-एक व्यक्ति को सैनिक के समान जूझना होगा। परिवार नियोजन की ही भाँति व्यापक पैमाने पर दहेज विरोधी अभियान चलाना होगा अन्यथा दहेज का अजगर हमारे समाज को पूरीं तरह से निगल जायगा।

परमपिता परमेश्वर से हमारी यही प्रार्थना है कि हमारे समाज कों ऐसी सत्साहस बुद्धि से प्रेरित करें, कि इस दहेज दानव से सम्पूर्ण देश मुक्त होकर सर्वत्र सुख तथा शांति का वातावरण व्याप्त हो सके।

३९. आरक्षण समस्या और समाधान

भारतवर्ष विभिन्न जातियों, उपजातियों, धर्मों तथा भाषाओं का अगाध महासागर है। समाज को सुव्यवस्थित करने के लिए ही प्राचीनकाल में वर्ण व्यवस्था का जन्म हुआ था। जातियों का विभाजन उनकी कार्य व्यवस्था से समाज को सुचारु रूप से चलाने के लिए किया गया था। वही आज के युग में अभिशाप बन गया है। इन विषमताओं को दूर करने के लिए ही आरक्षण है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आरक्षण का अर्थ है—"दलित, पिछड़े, उपेक्षित एवं निम्न स्तर के लोगों के लिए विभिन्न सेवाओं तथा कार्यक्रमों में इनके लिए कुछ प्रतिशत स्थान सुरक्षित रखना।" इस आरक्षण कार्यक्रम का उद्देश्य, ऊँच-नीच, छोटे-बड़े, अमीर-गरीब, हजूर-मजूर की दूषित भावनाओं को दूर कर सभी को समता की समतल भूमि पर खड़ा कर देना है। 'समता, जनता का जन्मसिद्ध अधिकार है' का नारा ही आरक्षण-योजना का उद्देश्य है। इस समता को लाने के लिए ही आरक्षण की व्यवस्था की गई है।

निश्चय ही यह हमारी केन्द्रीय एवं प्रांतीय सरकार के द्वारा किया जा रहा है। इसके द्वारा समस्या का समाधान न होकर और अधिक जटिलता गई है। क्योंकि यह योजना जाति को आधार बनाकर लागू की गई है। यद्यपि सरकार का यह विचार है कि जिन जातियों के लिए आरक्षण है उनमें ९० प्रतिशत लोग दलित एवं पिछड़े हैं। परन्तु सरकार को यह मालूम नहीं है कि अन्य जातियों में जो कमजोर लोग हैं उनके साथ सौतेला व्यवहार क्यों किया जा रहा हैं। ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि वर्णों में भी कुछ लोग ऐसे हैं जिनको न तो भोजन का ठिकाना है न रहने का। क्या ऐसे लोगों को समानता का अधिकार नहीं इसके अतिरिक्त जिन जातियों के लिये आरक्षण की सुविधा १० प्रतिशत लोग जो सम्पन्न हैं उन्हीं को इसका लाभ मिल रहा है। पिछड़े और कमजोर लोग आज भी अपनी पूर्व स्थिति में बने हुए हैं। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि आरक्षण-योजना का जो उद्देश्य था वह पूरा नहीं हो रहा है। अत्यन्त ही दुःख की बात है। क्योंकि मूल अधिकारियों के अन्तर्गत इसका स्पष्ट उल्लेख किया गया है कि—"राज्य के अन्तर्गत पद और नियुक्ति से सम्बन्धित सभी नागरिकों के लिए सामानता अवसर प्रदान करेंगे। अनुच्छेद १६ (२) के अन्तर्गत भी यह समझाया गया है कि जातीयता के आधार पर नियुक्त किए गये सभी प्रकार के पद अवैध माने जायेंगे।"

आरक्षण प्रणाली के अन्तर्गत, २० से २५ प्रतिशत की जनता जो अनुसूचित जाति, जनजाति के हैं, वही आते हैं। इनको ही पिछड़ी जाति के रूप

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में माना गया है। इनको ही यह विशेष सुविधा आरक्षित कोटा से पदोन्नति या नवनियुक्ति के लिए भी यह सुविधा दी गई है।

आरक्षण प्रणाली जिन ठोस आधारों पर प्रदान की गई है वे इस प्रकार हैं—

१—सामाजिक रूप से निम्न स्तर के सभी लोगों के लिए आरक्षण।

२—आर्थिक रूप में पिछड़े सभी व्यक्तियों के लिए आरक्षण।

३—शिक्षा पिछड़े हुये लोगों के लिये आरक्षण।

इस लोगों को समान स्तर तक लाने के लिए आरक्षण था। जो लोग सुख सुविधा से जीवन यापन कर रहे हैं उनके समान सभी पिछड़े लोगों को उनके समान करना परमावश्यक था। विकलांगों की दशा देखी जाय तो भी उनके लिये आरक्षण आवश्यक ही है। इन समस्याओं से संविधान निर्माता पूर्ण रूप से परिचित थे। इसी कारण वे सरकारों को निर्देश दिये थे कि आर्थिक और शैक्षिक क्षेत्र में पिछड़े लोगों के साथ रुचि लें, और उन्हें समाज में होने वाले शोषण से बचाने के लिये सुविधा प्रदान करें।

ये पहलू पहले तो सरल प्रतीत होते थे परन्तु ये बड़े ही समस्या मूलक है जो इस समय अत्यन्त ही विरोधात्मक हो गया है। यह इसलिए नहीं है कि वह पिछड़ा हुआ व्यक्ति है। वह कहाँ और किसी स्थिति में रहता है। अतः आर्थिक न्याय प्रदान करने के लिए उसके बारे में विशेष रूप से विचार किया जाना चाहिए। परन्तु अत्यन्त ही दुःख के साथ कहना पड़ रहा है कि आज तक कोई ऐसी मापक रेखा निर्धारित नही हो सकी कि इसके अन्तर्गत वाले लोग पिछड़े वर्ग के है और उसके ऊपर के व्यक्ति उच्च वर्ग के हैं। इसमें सन्देह नहीं कि भारत सरकार को इस विषय में असंगत एवं गलत सूचनायें ही प्राप्त हुई हैं। राजनैतिक दल अपने अपवित्र उद्देश्यों की पूर्ति करते हैं और वे कुछ वर्ग के व्यक्तियों को सन्तुष्ट रखना चाहते हैं। इसी कारण मापन का कोई सही अभी तक तैयार नहीं हो पाया है। वास्तविक वर्गीकरण कर सकें।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

राजनीतिज्ञ लोग कुछ वर्गों के शोषण और उनको भड़काने में लगे रहते हैं। इसी कारण वे संविधान में निर्दिष्ट आरक्षण अनुच्छेदों का अनुचित प्रयोग अपने निजी स्वार्थों से निहित होकर करते हैं। इसके साथ ही इनके विजय का आधार हरिजनों के वोट बन चुके हैं। अतः उनको प्रसन्न रखकर प्रत्येक दल राजनैतिक लाभ उठाना चाहता है। लेकिन सन् १९८० के लोकसभा के चुनावों से यह स्पष्ट हो गया कि इनके वोट निर्णायक नहीं हैं। क्योंकि भारतीय जनता पार्टी हरिजनों को प्रसन्न करने लिए हरिजन प्रत्याक्षी तथा नेताओं को आगे किया था, परन्तु किसी भी प्रकार की सफलता न प्राप्त हो सकी।

इस विषय में कुछ न्यायालयों के निर्णय भी आरक्षण के अनुच्छेद १६ (४) के अनुसार हुए हैं। भारतीय उच्चतम न्यायालय ने सन् १९७५ में 'राज्य उत्तर प्रदेश बनाम प्रदीप टण्डन के केस में "विशेष सुविधा 'एक वर्ग' के लिए दी जानी है 'एक जाति' के लिये नहीं ऐसा स्वीकार किया है।" २१ अगस्त १९७९ को इलाहाबाद उच्च न्यायालय ने भी यह स्वीकार किया है कि आरक्षण के आधार पर प्रोन्नत पदों के लिये सीनियरटी को नहीं हटाया जा सकता।

आज सरकार को आर्थिक आधार पर आरक्षण के लिए विचार करना होगा। इसके लिये निष्पक्ष रूप से सर्वेक्षण करना आवश्यक है। आर्थिक अपराधियों को कठोर दण्ड दिये जानें चाहिये। खाना, कपड़ा तथा मकानयुक्त व्यक्ति को आरक्षण मुक्त रखा जाय। जो इस समय आरक्षण पा रहे हैं यदि वे आर्थिक सीमा रेखा से ऊपर हैं तो उनका आरक्षण समाप्त कर दिया जाय। अन्य आधारों पर दिया गया आरक्षण किसी वर्ग विशेष से हटाया जा सकता है। आधार पर रखा गया आरक्षण मजदूर तथा मालिकों के बीच आपसी सम्बन्ध सुधारने में सक्षम होगा। एक विशेष जाति के लिये किया गया आरक्षण भेद उत्पन्न करता है। यही कारण है कि हमारे देश में कानून और व्यवस्था, ठीक से व्यवस्थित नहीं हो पाती हैं। कुछ जातियों के लिए अलग कानून तथा व्यवस्था, भेद-भाव तथा सम्प्रदायिकता को बढ़ावा देती हैं। शिक्षा की दृष्टि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

से यदि योग्य व्यक्ति पिछे रह जाते हैं तथा अयोग्यों को नियुक्त किया जाता है जो देश का विकास बाधित होना स्वाभाविक है। अतः यह विचार करने के लिये सरकार को बाध्य होना पड़ेगा कि आर्थिक सीमा रेखा के आधार पर आरक्षण प्रदान किया जाय।

हमें पूर्ण आशा है कि, अगर निजी स्वार्थो को छोड़कर आरक्षण सही लोगों को ही प्रदान किया जाय, तभी इसके वास्तविक उद्देश्य की सिद्धि हो सकती हैं। इसके लिए निष्पक्ष मापक आधार बनाना ही सरकार की कर्मठता तथा सफलता का परिचायक होगा।

४०. जनसंख्या : समस्या तथा समाधान

आज विश्व की विशाल जनसंख्या और उसकी तीव्र प्रगति देखकर विश्व के भाग्य विधाताओं के मन में बेचैनी हो उठती है। विशेषज्ञों का कहना है कि अगर इनके नियन्त्रण के लिए ठोस कदम नहीं उठाया गया तो इस शताब्दी के अन्त तक वह पाँच अरब तक हो जायगी। भारत जनसंख्या वृद्धि से बुरी तरफ से आक्रान्त हो गया है। इसी बेतहासा वृद्धि को देखकर उसका मष्तिक सजग हो उठा है तथा परिवार नियोजन इसी का परिणाम है।

डॉ० जूलियन हक्सले का कहना है कि—जनसंख्या के विषय में भारत की स्थिति अत्यन्त ही संकट ग्रस्त हैं। यदि भारत इस समस्या के समाधान में असफल रहा तो अराजकता की स्थिति उत्पन्न हो जायगी, और यदि सफल होता है तो न केवल उसे एशिया का नेतृत्व प्राप्त होगा; अपितु वह संसार की आशा का केन्द्र बन जायगा।" वास्तव में तेज रफ्तार से बढ़ती हुई जनसंख्या आर्थिक समस्याओं की जननी बन गई है। जनसंख्या की वृद्धि रात के उस चोर के समान है जो हमारी आर्थिक विकास से प्राप्त सफलता को हमसे चुरा ले जाता हैं। जिसके कारण विकास, आवास, खाद्यापूर्ति, रोजगार आदि की योजनायें सफल न हो पाने से देश की प्रगति वाधित हो जाती हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हमारी जनसंख्या की वृद्धि का मूल कारण निर्धनता, निरक्षता, बालवृद्धि, विधवा विवाह, धार्मिक दृष्टिकोण, मृत्यु दर में कमी तथा यहाँ की जलवायु और वातावरण हैं। इसको कृषि के विकास, यातायात, जलशक्ति का विकास, तथा उद्योग-धन्धों का विकास करके रोका जा सकता है। इस समय जनसंख्या वृद्धि को रोकने का कारगर एवं सफल तरीका परिवार नियोजन अभियान हैं।

परिवार-नियोजन, दम्पति द्वारा उनके रति क्रीड़ा के परिणाम स्वरूप हों सकने वाले गर्भाधान को, ऐसे कारगर उपाय को अपनाकर योजना पूर्वक नियमित करना है, जिसका मूल उद्देश्य अनियोजित गर्भाधानों को रोकना है। इसको अपनाने वाले सम्पत्ति एवं उनकी सन्तानों को 'नियोजित परिवार' कहते है। भारत की अपेक्षा अन्य देशों में नियोजित-परिवार अधिक हैं। यदि किसी अनियोजित परिवार में नियोजित परिवार से दुगुनी या तिगुनी संतानें हैं, तो यह स्पष्ट है कि नियोजित परिवार वाला व्यक्ति हर स्थान पर जितना खर्च कर सकता है, परम्परागत परिवार वाला व्यक्ति उसका आधा या तिहाई ही खर्च कर पायेगा। इस प्रकार दोनों परिवारों की आमदनी बराबर होते हुए भी परम्परागत परिवार की सन्तानों को निम्नस्तर का भोजन, आवास, शिक्षा तथा मनोरंजन आदि की व्यवस्था हो सकेगी तथा इसके साथ अन्य आवश्यक वस्तुयें भी सीमित मात्रा से ही उपलब्ध हों पायेगी।

भारतयासियों का यह मानना हैं कि 'बच्चा पैदा होना' ईश्वरी देन है। इस कारण करोड़ से भी अधिक बच्चे प्रतिवर्ष पैदा हो रहे हैं। यदि परिवार नियोजन को अपना जाय तो यह संख्या काफी कम हो सकती है। परन्तु इसके मार्ग में अशिक्षा के कारण अधिकांश लोंग निरोध आदि साधनों का प्रयोग नहीं करसे हैं। सरकार धीरे-धीरे इनके प्रचार-प्रसार के लिये प्रयत्नशील है। प्रथम पंचवर्षीय-योजना में परिवार नियोंजन का सूत्रपात हुआ, द्वितीय पंचवर्षीय योजना में इसे गतिशील बनाया गया तथा तृतीय योजना में इसका बिस्तार किया गया। परन्तु अब नसबन्दी का कार्यक्रम सम्पूर्ण भारत

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में लोकप्रिय हो गया है । गाँवों तथा शहरों में अधिकाधिक परिवारों नियोजन केन्द्रों की स्थापना की जा चुकी है । जिनके माध्यम से लोगों को परिवार नियोजन के महत्व का ज्ञान तथा लाभ हो रहा है, और तीव्र गति से बढ़ती हुई जनसंख्या में रोक लगायी जा रही है ।

स्वास्थ्य केन्द्रों तथा शिशु कल्याण केन्द्रों में, जो कि सभी जगह स्थापित हैं, डाक्टर, नर्स, सामाजिक कार्यकर्त्ता तथा समाज सेविकायें गर्भ निरोध के विषय में महत्वपूर्ण जानकारी दे रही हैं । वे गर्भनिरोधक साधनों का सही प्रयोग करना बताते हैं तथा वैज्ञानिक सम्मतियाँ देते हैं । शिक्षितों को छपा हुआ साहित्य पढ़ने के लिये दिया जाता है । निरोधक साधनों की दिन प्रति-दिन बिक्री से उसकी लोकप्रियता का अन्दाजा मिलता है । इस दिशा में सर-कार अत्यधिक व्यय कर जनसंख्या पर कावू पाना चाहती है । योजनाओं के माध्यम से सरकार महत्वपूर्ण कार्य कर रही है । वर्तमान समय में भी सर-कार का इसमें बहुत बड़ा प्राविधान है और अत्यन्त ही कारगर कदम उठाये जा रहे है । इस समय परिवार नियोजन को अत्यन्त ही आवश्यक तथा कानूनी बना दिया गया है ।

परिवार नियोजन को सफल बनाने के लिये निम्नलिखित कार्य किये गये हैं—

१—परिवार नियोजन आन्दोलन को अधिक लोकप्रिय बनाया गया ।

२—गर्भपात कानून में उदारता लाई गयी, क्यों कि अब अस्पतालों तथा नर्सिगहोमों में बिना किसी प्रतिबन्ध के गर्भपात कराया जा रहा है ।

३—विवाह की आयु सीमा में वृद्धि करके इसके पालन को कानून बनाया जा रहा है । इस कारण भी जनसंख्या पर काफी असर पड़ेगा ।

४—अविवाहितों को आयकर आदि करों में छुट दिये जाने से ।

५–जिन परिवारों ने परिवार नियोजन को नहीं अपनाया है उन्हें फीस, इलाज तथा आवास सुविधा मिलने वाली सुविधायें बन्द कर देने से ।

६—परिवार कल्याण के प्रचार-प्रसार के माध्यम से जनता का दृष्टिकोण परिवर्तित करने से ।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

७—परिवार नियोजन के साधनों में नवीनतम सुधार किये जाने से तथा नवीन तरीके और औषधियों की खोज से।

समाचार पत्रों, चलचित्रों, दूरदर्शन, बसों पर, नाट्य गीतों आदि अनेकों साधनों से जनता में परिवार नियोजन का प्रचार-प्रसार किया जा रहा है। नवयुवकों तथा प्रभावशाली समाज सेविकाओं को परिवार नियोजन के विषय में शिक्षण देने का कार्य सौंपा गया है। रेडियों तथा दूरदर्शन से नित्यप्रति परिवार नियोजन कार्यक्रम प्रसारित किये जा रहे हैं। बम्बई, कलकत्ता, दिल्ली, मद्रास, पटना, लखनऊ आदि के अनुसन्धान केन्द्रों पर भारतीय तथा विदेशी छात्र जनाङ्किकी के विषय में कार्यशील हैं। परिवार नियोजन से सम्बन्धित सभी समस्याओं पर गम्भीरता पूर्वक विचार विमर्श तथा अध्ययन किया जा रहा है। इस योजना को सफल बनाने के लिए सरकारी तथा गैर सरकारी सभी सम्भव उपाय अपनाये जा रहे है।

आशा ही नहीं पूर्ण विश्वास है कि निकट भविष्य में परिवार-कल्याण अभियान सफल होगा। क्योंकि इस समय परिवार-नियोजन की गति अत्यन्त तीव्र हो चुकी है। इसकी लोकप्रियता वढ़ती जा रही है। अतः यह कहा जा सकता है कि नसबन्दी आदि के द्वारा जनसंख्या की समस्या का काफी समाधान हो चुका हैं। हम लोगों को सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिये।

४१. पर्यावरण की समस्या

आवृतं ज्ञानमेतेन ज्ञानिनो नित्यवैरिणा।
कामरूपेण कौन्तेय दुष्पूरेणानलेन च॥ (गीता–३।३९)

अर्थ–हे अर्जुन ! यह अग्नि के समान कभी न पूर्ण होने वाले कामरूपी नित्य वैरी ज्ञानी मनुष्यों के ज्ञान को ढके रहता है।

भगवान कृष्ण द्वारा वर्णित कामना का जितना नग्न और भीषण रूप इस समय दिखाई दे रहा है, उतना कभी नहीं। पुराण की कथा है कि पृथु ने पृथ्वी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का दोहन करके मानव-जीवनोपयोगी पदार्थ निकाले थे। परन्तु आज केवल पृथ्वी का ही नहीं, जल, तेज, वायु तथा आकाश का भी दोहन हो रहा है। लेकिन मानव की कामाग्नि शान्त नहीं हो रही है। मनुष्य की कामना उसके अस्तित्व को ही समाप्त किये जा रही है और उसकी यह दुष्प्रवृत्ति ही पर्यावरण की समस्या की जननी है। लगातार सुख और वैभव की अतिशयता को पाने के लिए मनुष्य ने प्रकृति के आधार भण्डार को खोखला बना दिया है। जिसके परिणाम-स्वरूप अनेकों समस्यायें पैदा हो गई हैं। इन्हीं में से पर्यावरण की समस्या एक प्रमुख समस्या हो गई हैं।

पर्यावरण शब्द परि + आवरण से बना है। इसका अर्थ है–'चारों ओर का ढक्कन' अर्थात् हमारे भू-मण्डल के चारों ओर का आच्छादन ही पर्यावरण है। भू-मण्डल के चारों ओर फैलने वाले वायुमण्डल का निर्माण कई प्रकार के गैसों से बना है, जिसमें आक्सीजन और नाइट्रोजन प्रमुख हैं। जीवनोपयोगी इन दोनों का निर्माण प्रकृति समुचित रूप से करती है। पृथ्वी पर चल और अचल प्रणी अपनी श्वाँस की प्रक्रिया से दोनों गैसों को जीवनदान देते हैं। इसके लिए पृथ्वी के एक तिहाई भाग में पेड़ पौधों का होना आवश्यक है। परन्तु मानव अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के इस सन्तुलन को नष्ट कर दिया हैं, जिसके कारण वायुमण्डल में नाइट्रोजन का अनुपात बढ़ता जा रहा है।

मानव के अस्तित्व को नष्ट करने वाली इस समस्या के कारण हैं। जैसे–जनसंख्या में वृद्धि के कारण, आवास आदि की सुविधा के लिए वनों को काटने से, आक्सीजन की कमी होती जा रही है। सड़कों तथा रेल मार्ग निर्माण के लिए भी वृक्षों को काटकर हम लोग आक्सीजन में कमी ला रहे हैं। सिंचाई का साधन उपलब्ध कराने के लिए बाँध तथा नहरों को बनाने में भी वृक्षों को काटा जा रहा है। उद्योग-धन्धों के विकास के लिये फैक्टरियों का निर्माण हो रहा है। यह निर्माण, वृक्ष-युक्तभूमि में होने के कारण भी वृक्ष तो काटे ही जा रहे हैं तथा साथ-साथ इसमें जलाये जाने वाले कोयले से नाइट्रोजन की मात्रा बढ़कर वायु-मण्डल दूषित हो रहा है। ऊर्जा के साधनों का विकास इस समस्या का सबसे बड़ा कारण है, क्योंकि इससे निर्जीव भवनों को भी हानि पहुँचने की

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सम्भावना होती है। निर्जीव भवनों को भी खतरा पहुँचाने वाले इन ऊर्जा साधनों के विकास से दूषित वायुमण्डल में श्वाँस प्रश्वाँस की क्रिया करने वाले मनुष्य के अस्तित्व के विनाश की कल्पना से हृदय काँप उठता है। इसके अलावाँ जलाने तथा फर्नीचर आदि के लिए पर्याप्त लकड़ी की आवश्यता होती है। इसके लिए पर्वतों पर स्थित विशालकाय वृक्ष भी काट डाले गये हैं। इस कारण हरे-भरे लहलहाते वन उजाड़ दिये गये और आक्सीजन के उत्पादन में अत्यधिक कमी आ गई है।

यह समस्या अत्यन्त विकराल है, परन्तु हमें इसकी विकरालता से भय-भीत होकर चुपचाप नहीं बैठना चाहिए। हमें जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के लिए सचेष्ट होना है। ऊर्जा की अत्यधिक खपत को नियन्त्रण में रखना चाहिए। जहाँ कहीं भी खाली जगह हो वहाँ वृक्ष लगवाने का प्रयत्न करना चाहिए। हरे-भरे वृक्षों को काटने पर प्रतिबन्ध लगाकर इसे एक अक्षम्य अपराध घोषित करना चाहिए। प्रत्येक व्यक्ति को कहीं भी कम से कम पंद्रह-बीस वृक्ष तैयार करना अनिवार्य होना चाहिए।

सन्तोषप्रद बात यह है कि हमारी जन प्रिय सरकार की प्रधान मन्त्री श्रीमती इन्दिरा गांधी ने समस्या की विकरालता को समक्ष कर इसके उपाय के लिए प्रयत्नशील थी। उस समय हरे वृक्षों के काटने पर रोंक लग चुकी थी। जनता को विना किसी मूल्य के पौधे दिये जा रहे हैं। सड़कों फैक्टरियों आदि के अगल-बगल वृक्ष लगाये जा रहे है। परन्तु जनता का सहयोग अपेक्षानुसार नहीं हो पा रहा है। आज भी थोड़े से स्वार्थ के लिये वृक्ष काटे जा रहे। हमें आशा है कि जनता निकट भविष्य में इस समस्या की विकरा-लता को समझेगीं और इसके निराकरण के लिए भगीरथ प्रयत्न करेगी। जिसके परिणाम स्वरूप आक्सीजन रूपी गंगा से सभी समान रूप से लाभ लेकर अपने जीवन के उद्देश्य को पूर्ण करेंगे।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

४२. वृक्षारोपण या वनमहोत्सव

परम प्रभु भगवान श्रीराम तथा श्रीकृष्ण की लालास्थली, अनेक अवतारों की धनी, ज्ञान की प्राचीन स्थल इस भारतवर्ष में वृक्षों का बहुत महत्व है। वन इस देश की सम्पदा रही है। सभी प्रकार के वृक्ष मानव जीवन के अंग रहे हैं। गोस्वामी जी बरगद के वृक्ष को विश्वास के रूप में स्वीकार किया है। 'वट विश्वास अचल निज धरमा'। पीपल के पेड़ में लक्ष्मी का निवास होता है। पेड़ों की पूरा हमारी संस्कृति का मुख्य अंग है। शनि की दशा में पीपल के वृक्ष की पूजा की जाती है। वृहस्पति की दशा होने पर तथा सुन्दर वर की प्राप्ति के लिए कुँवारी कन्याओं द्वारा केले की पूजा का विधान है और अधिक कहाँ तक कहे, ये वृक्ष देवताओं के निवास स्थान हैं। तभी तो बेल, आम, नीम, पीपल, वट, केला, आँवला तथा तुलसी अत्यन्त पूज्य माने जाते हैं।

ये वृक्ष परोपकार के लिए होते हैं। कहा भी गया है कि—"स्वयं न खादन्ति फलानि वृक्षाः" क्योंकि 'परोपकाराय सतां विभूतयः'। कदम्ब के बगीचे में भगवान श्रीकृष्ण विहार करते हैं तथा प्रलय के समय भगवान स्वयं वर के पत्ते पर अगूंठा चूंसते हुए, जल के ऊपर तैरते हुए दर्शन देते हैं। तभी तो भक्तों ने कहा है—

'वटस्य पत्रस्य पुटे शयानं वालं मुकुन्दं शिरसा नमामि।'

प्राचीन काल में सम्राट अशोक, विक्रमादित्य आदि राजाओं ने सड़कों के दोनों ओर वृक्ष लगवाये थे इसका प्रमाण हमें इतिहास से मिलता है। प्रकृति की सुन्दरता से विभूषित इस भारत देश में वृक्षों की अपार महिमा रही है।

साहित्य के क्षेत्र में भी प्रकृति का वर्णन करने वाले कवि महान् माने जाते हैं। प्रकृति की क्रीड़ा स्थली, तथा वैभव ये वृक्ष लतायें ही है। हिन्दी में प्रायः सभी महाकवियों ने अपने महाकाव्य में प्रकृति का चित्रण किया है। जिसमें तुलसी, केशव, बिहारी, मतिराम देव आदि के अलावा एक आधुनिक कवि सुमित्रानन्दर्न पन्त का नाम विशेषरूप से सराहनीय है। एक उदाहरण प्रस्तुत है जिसमें विशेष रूप से वृक्षों के नाम गिनाये गये है। इसके द्वारा नये अर्थ की अभिव्यंजना होती है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

'कीकर, पाकर, तार, जामन, फासला, आमला।
सेव, कदम, कचनार पीपल रत्तीतून तज ॥"

इसका अर्थ है—हे कचनार ! हे भोली नारी ! करतार ने तुझ पर कृपा की जिसमें तेरा मन था वह आ मिला। अब तू उसके कदमों की सेवा कर, उसका रस पान कर, एक क्षण भी तू उन्हें मत छोड़।

हम कह सकते हैं कि सभी प्रकार के वृक्ष मानव जीवन के अंग हैं। इनसे हमें आर्थिक लाभ होता है। आयुर्वेद की दृष्टि से अनेकों वृक्ष रोग दूर करने के लिये उपयोगी हैं। कुछ वृक्ष तन्त्र की दृष्टि से भी उपयोगी हैं। जिस प्रकार से गाय जीते जी तथा मरने पर भी लाभ देती है उसी प्रकार ये वृक्ष भी जीवों को जीवन देते हैं। धन और शक्ति प्रदान करते हैं। ये सूख जाने पर भी नाना प्रकार से हमारे उपयोग में आते हैं। इनके हरे-भरे रहने पर वातावरण शुद्ध होता है, जो स्वास्थ्य के लिए अत्यन्त ही आवश्यक है। बहुत से जीव इन वृक्षों के माध्यम से अपना जीवन यापन करते हैं। यहाँ तक की इनकी जड़, तने, पत्तियाँ तथा फल आदि सभी उपयोगी होती है। सृष्टि को निर्बाध रूप से चलाने के लिये वृक्षों की बड़ी आवश्यकता है।

इधर हम लोग इन वनों को काटकर स्वयं अपने लिए अनेक समस्या को पैदा कर दिये हैं। आवश्यकतानुसार समय से वर्षा न होने का मूल कारण जंगलों का अभाव है। आवश्यकतानुसार वृक्षों के न होने से आज मानव अनेक रोगों का शिकार हो रहा है। अतः इन समस्याओं से बचने के लिये आवश्यक हो गया है कि सभी लोगों द्वारा वृक्षों को लगाया जाय, और प्रकृति के साथ हमारा समन्वय बना रहना चाहिए।

स्वार्थ के कारण तथा बढ़ती हुई जनसंख्या के कारण आज वृक्ष काट दिये गये हैं। वन के वन उजाड़ दिये गये। इसके दुष्प्रभाव से देश में अनावृष्टि होने लगी, धूल भरी आँधियाँ आने लगी, रेगिस्तान का विस्तार होने लगा है। वातावरण दूषित हो गया, पर्यावरण विषाक्त हो चला है। चिमनियों के, धुयें, ऊर्जा साधनों के गैस से, दौड़ती हुई मोटरगाड़ियों के धुयें से वातावरण दिन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रतिदिन दूषित होता चला जा रहा है। इन प्रदूषणों को दूर भगाने का सामर्थ्य मात्र वृक्षों में ही हैं। जब हरे-भरे लहलहाते वृक्षों के जंगल अधिक मात्रा में तैयार किये जायेगें तभी वातावरण शुद्ध होगा, मेघ समय से जल वर्षा करेंगे रेगिस्तान के बढ़ते कदम रूक सकेंगे साथ ही साथ धूल मिश्रित आँधियों का आना भी बन्द हो जायगा।

४३. राष्ट्रभाषा हिन्दी

भाषा ईश्वर द्वारा प्रदत्त मनुष्य के लिए महान वरदान के रूप में है। इसी के कारण मानव का मानव तत्व अक्षुण रूप से बना हुआ है। नहीं तो वह सींग पूंछ रहित जानवर ही होता। अपने विचारों को दूसरे तक पहुंचाने तथा दूसरों के विचारोंको समझने की प्रक्रिया ही भाषा है। राष्ट्रमें अधिकाधिक लोगों द्वारा समझ में आने वाली भाषा को राष्ट्र-भाषा कहते हैं। भाषा विकास के कई स्तर हैं—बोली, भाषा विभाषा, प्रान्तीय भाषा, साहित्यिक भाषा, राष्ट्र-भाषा आदि। राष्ट्र भाषा विकास का चरम सोपान है।

किसी देश में सबसे अधिक बोली और समझी जाने वाली भाषा ही उस देश की राष्ट्रभाषा होती है बिना राष्ट्रभाषा के राष्ट्र गूंगा होता है और वह स्वतन्त्र होने का दावा नहीं कर सकता है। राष्ट्रभाषा ही राष्ट्र की आत्मा को शक्तिशाली बनाती हैं। राष्ट्र भाषा के साहित्य में देश के जन-जीवन की झाँकी उतरती रहती है। बिना इसके न तो कई राष्ट्र जीवित रह सकता है और न उन्नति ही कर सकता है। इसी कारण संसार के सभी स्वतन्त्र देशों की अपनी-अपनी राष्ट्र-भाषा होती है। रूस की रूसी, ब्रिटेन की अंग्रेजी, जापान की जापानी, भारत की हिन्दी आदि भाषायें उनके गौरव की प्रतीक हैं।

जब पन्द्रह अगस्त १९४७ ई० को भारत स्वतंत्र हुआ, तो संविधान बनाने के समय यह समस्या पैदा हुई कि राष्ट्रभाषा किसे स्वीकार किया जाय। अंत में हिन्दी को राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार किया गया। हिन्दी को यह गौरव मिलने में कोई पक्षपात नहीं है क्योंकि प्रारम्भिक काल से अब तक हिन्दी भाषा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है। परन्तु इन कठिनाइयों को झेलते हुए, यह भाषा अनवरत उन्नति करती रही है। अपने विकास काल के साथ-साथ इस भाषा ने अपनी प्राचीन परम्पराओं का पालन और संरक्षण बड़ी दृढ़ता के साथ किया है।

हिन्दी को राष्ट्र-भाषा का गौरव मिलने का मुख्य कारण निम्न है—

१. **व्यापकता**—भारतीय संविधान में स्वीकृत १४ भाषाओं में हिन्दी सबसे अधिक व्यापक है। देश की ४५ प्रतिशत जनता इसे बोलने और समझने की क्षमता रखती है। प्राचीनता की दृष्टि से भी संस्कृत के बाद इसका गौरव पूर्ण स्थान है।

२. **सरलता**—अन्य भाषाओं की अपेक्षा हिन्दी सरल है। अपनी सरलता और सुगमता के लिए यह प्रसिद्ध है। हिन्दी जानने की कोशिश की जाय तो यह थोड़े ही दिनों में आसानी से आ जाती है। हिन्दी जन साधारण के बोल-चाल की भाषा है। अतः इसे कठिन शब्दों से दूर रखना ही जनसाधारण के लिए अच्छा है।

३. आधुनिक विषयों और आवश्यकताओं से यह परिपूर्ण है। आधुनिक विज्ञान की विभिन्न शाखाओं के विषयों पर उसमें अनेकों पुस्तकें प्रकाशित हो चुकी है। अतः ठीक ही कहा गया है कि—

"है भव्य भारत ही हमारी मातृभूमि हरी भरी।
हिन्दी हमारी राष्ट्रभाषा और लिपि नागरी॥"

हिन्दी हमारी राष्ट्र-भाषा है, अतः उसकी उन्नति ही हम लोगों की वास्तविक उन्नति है। कहा भी गया है कि—

'निज भाषा उन्नति अहै, सब उन्नति को मूल।"

हिन्दी को समृद्धशाली एवं सम्पन्न बनाने के लिए हम लोगों का यह कर्त्तव्य होता हैं कि हम लोग उदार दृष्टिकोण अपनायें तथा विभिन्न प्रान्तीय भाषाओं को सीखकर उसकी शब्दावली को राष्ट्र भाषा हिन्दी के अनुकूल बनायें। हमको इस बात के लिए प्रयत्नशील होना है कि हम दक्षिण के

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानवीय नेता बी० गोपाल रेड्डी, बंगाल के राष्ट्रलिपि आन्दोलन के संचालक स्व० जस्टिट शारदाचरण मुखर्जी तथा महात्मा गांधी ने जो सभी भारतीय भाषाओं को राष्ट्रलिपि नागरी में लिखने का सुझाव दिया है, उसे कार्य रूप में परिणत करें।

भाषा का प्रसार नारों से न करके निरन्तर परिश्रम और धैर्य के साथ करें। हमको अपते उत्तरदायित्व को समझकर हिन्दी व्याकरण के नियमों को सुगम बनाना है। सरकार की ओर से, जिस पारिभाषिक शब्दावली का निर्माण हो, उसको प्रमाणित करना आवश्यक है। इस विषय में हिन्दी के सुप्रसिद्ध विद्वान् बाबू गुलाबराय जी का कथन है कि—"पारिभाषिक शब्दावली का सारे देश के लिए प्रमाणीकरण आवश्यक है, क्योंकि जब तक हमारी शब्दावली पूरे देश में न समझी जायेगी तब तक न तो वैज्ञानिक क्षेत्रों में सहकारिता ही सम्भव हो सकेगी और न विद्यार्थी ही लाभ उठा सकेंगे।

निष्कर्ष स्वरूप कहा जा सकता है कि राष्ट्र-भाषा हिन्दी का स्वरूप उज्ज्वल है। उसके मार्ग में आज जो संघर्ष, स्वार्थ तथा भ्रमिक धारणाये फैली हुई हैं, वे शीघ्र ही दूर हो जायेंगी। वह दिन दूर नहीं जब राष्ट्र भाषा हिन्दी सम्पूर्ण देश को भावात्मक एकता के सूत्र में बाँधकर नवराष्ट्र के निर्मा में अपना पूरा सहयोग दे सकेगी।

४४. अमरवाणी वैभव

अमर वाणी का ही दूसरा नाम ही संस्कृत भाषा है। इस समय संस्कृत के शब्दों का ही व्यवहार अधिकांशतया किया जाता है। यह अम अर्थात् देवताओं की वाणी है। इसलिए उनके समान ही पूजनीय तथा वंदन है। यह कभी भी न मरने वाली अमर भाषा है। इसकी साधना एवं आ धना से ही मनुष्य भी अमर बन जाते हैं। यह विश्व की प्राचीनतम भाषा है भारतीय संस्कृति की आधार शिला है। इसी भाषा से अनेक भाषायें, जो हिन्दी, मराठी, गुजराती, सिन्धी, नेपाली तथा बंगला आदि देशी तथा वि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पैदा हुई हैं। अर्थात् यह सभी आर्य भाषाओं की जननी है। इसका ही प्रभाव है कि आज सम्पूर्ण भारत देश एकता के सूत्र में बँधा हुआ है। सच्चे अर्थों में भारत की राष्ट्र भाषा संस्कृत ही है।

अमरवाणी का वाङ्मय एक विशाल सागर है। जिसमें ज्ञान, विज्ञान तथा कला के अनेकों रत्न बिखरे पड़े हैं। इसमें जो जितना ही गोता लगाता है वह उतना ही रत्न पाता है। इसके मंथन से अमृत तत्व की प्राप्ति सुनिश्चित है। इस प्रकार के अमर साहित्य की तुलना विश्व का कोई भी साहित्य नहीं कर सकता। इसके सामने सभी को नतमस्तक होना पड़ता है। अतः भारतीयों को इस अमर निधि पर गर्व करना स्वाभाविक है।

चारों वेद अमर वाणी के मुख्य अंग हैं। यजुर्वेद की दो प्रसिद्ध शाखायें हैं—शुक्लयजुर्वेद तथा कृष्णयजुर्वेद। वेद पहले एक ही था, परन्तु यज्ञ की सुविधा के लिये भगवान व्यास ने उसे चार भागों में विभक्त किया। इसी से उनका नाम वेदव्यास पड़ा। इन्होंने चारों वेदों को क्रमशः अपने प्रमुख शिष्य पैल, वैशम्पायन, जैमिनि तथा सुमन्तु को पढ़ाया। उन चारों ने अपने-अपने शिष्यों को पढ़ाया। इस प्रकार की परम्परा से वेद की अनेक शाखायें हो गयीं। परन्तु वे सभी उपलब्ध नहीं हैं। वेद के मुख्यतया चार भाग हैं, जिसमें संहिता भाग मुख्य है। इसमें केवल मन्त्र हैं। ब्राह्मण तथा अरण्यक भाग में मन्त्रों की व्याख्या है। इसका मुख्य सम्बन्ध यज्ञयागादिकों से है। उपनिषदों का क्षेत्र ज्ञान है। आत्मा-परमात्मा, जीव-जगत् आदि का विवेचन ही उपनिषदों का अन्तिम भाग है। इसी से इसे वेदांत भी कहते हैं। यहीं से भारतीय दर्शन की शुरुआत होती है। वैसे तो उपनिषदों की संख्या १०८ हैं, परन्तु उसमें से मुख्य १४ हैं। जो ऐतरेय, कौशीतिकी, तैत्तिरीय, बृहदारण्यक, छान्दोग्य, केन, मुण्डक, कठ, प्रश्न, श्वेताश्वर, नारायण, माण्डूक्य तथा नारायणी के नाम से जाने जाते हैं।

अमरवाणी वाङ्मय में वेदों के बाद वेदाङ्ग का क्रम आता है, जो छः हैं। इसमें व्याकरण वेद का मुख, ज्योतिष-नेत्र, निरुक्त-श्रोत, कल्प-हाथ, शिक्षा-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नासिका तथा छन्द-पैर हैं।—यहाँ पाणिनि की शिक्षा में आया एक श्लोक द्रष्टव्य है।

छन्दः पादौ तु वेदस्य हस्तौ कल्पोऽथ पठ्यते।
ज्योतिषामयनं चक्षुर्निरुक्तं श्रोत्रमुच्यते॥
शिक्षा घ्राणंतु वेदस्य मुखं व्याकरणं स्मृतम्।
तस्मात् साङ्गमधीत्यैव ब्रह्मलोके महीयते॥

जिसकी सहायता से वेदमन्त्रों की उच्चारण विधि की जानकारी सम्यक् हों जाय उसे शिक्षा कहते हैं। जिसकी सहायता से मन्त्रों का सस्वर गान किया जाय उसे छन्द कहते हैं। निरुक्त वह विद्या है जिससे शब्दों की व्युत्पत्ति का ज्ञान होता है। प्रकृति प्रत्यय की सहायता से अर्थ-ज्ञान कराने वाले को व्याकरण कहते हैं। काल का सही ज्ञान कराने की विद्या को ज्योतिष कहते हैं। यज्ञ यागादि के विधान में सहायक सूत्र-ग्रन्थ को कल्प कहते हैं। इसके दो भेद हैं—१. श्रौत सूत्र, २. स्मृति सूत्र। स्मृति सूत्र के पुनः दो भेद हैं, गृह्य सूत्र तथा धर्म सूत्र। श्रौत्र में यज्ञों की विविध बातों का वर्णन है। गृह्य सूत्रों में गृहस्थ के लिये नित्य अनुष्ठान करने योग्य आचारों तथा षोडश संस्कारों का विस्तृत वर्णन है। धर्म सूत्रों में वर्ण तथा आश्रम सम्बन्धी सामाजिक व्यवस्थाओं का वर्णन स्मृति तथा सूत्र ग्रंथों को ही धर्मशास्त्र कहा जाता है। समाज-शास्त्र के लिये इसमें पर्याप्त सामग्री है।

वेद तथा वेदाङ्गों के अन्दर इतिहास तथा पुराणों का क्रम आता है। इतिहास से हमारा तात्पर्य रामायण तथा महाभारत से और पुराणों से व्यास निर्मित १८ पुराणों से है। 'इतिहास पुराणाभ्यां वेदं समुपवृह्येत्' अर्थात् इतिहास और पुराण वेद के उपवृहक हैं। इनके ज्ञान से वेद का सही-सही ज्ञान असम्भव है। रामायण इतिहास के साथ महाकाव्य भी है, इसके रचयिता आदि कवि वाल्मीकि जी हैं। इसमें कुल २४००० श्लोक हैं। महाभारत भी १ लाख श्लोंकों का विशाल काव्य ग्रंथ हैं, इसमें कुल १८ पर्व हैं। इसमें कौरवों तथा पांडवों की प्रसिद्ध युद्ध गाथा के साथ तत्कालीन राजनीतिक, सामाजिक, धार्मिक व्यवस्था का सांगोपांग वर्णन है। इसमें जो कुछ नहीं है वह कहीं नहीं है। अतः महाभारत हमारा पाचवाँ वेद है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पुराण साहित्य भी विशाल हैं। इसकी कुल संख्या १८ है। यथा—मत्स्य, मारकण्डेय, भागवत, भविष्य, ब्रह्म, ब्रह्मवैवर्त, ब्रह्माण्ड, विष्णु, वामन, वायु, वाराह, अग्नि, नारदीय, पद्म, लिंग, गरुण, कूर्म, तथा स्कन्द। इसमें भागवत दो है—देवी भागवत् तथा श्रीमद्भागवत उपपुराण भी १८ है, जिनके नाम नीचे दिये गये हैं। सनत्कुमार, नृसिंह नारद, शिव, दुर्वासा, कपिल, मनु, उशना, वरुण, कालिका, साम्बु, नन्दी, और पराशर, आदित्य, माहेश्वर, भागवत और वशिष्ठ। पुराणों में कुल ४ लाख श्लोक हैं। इसके मुख्य प्रतिपाद्य विषय पाँच हैं—सर्ग, प्रतिसर्ग, वंश, मन्वन्तर तथा वंशानुचरित। इन मुख्य विषयों के अतिरिक्त दान, श्रत, उत्सव, राजनीति, वर्ण, आश्रम, धर्म, दर्शन, विष्णु-अवतार, शिव-अवतार, देवी अवतार आदि विविध बातों का निदर्शन पुराणों में भरा पड़ा है। इस प्रकार पुराण हमारी संस्कृति के निर्माण में सहायक हैं। वेद यदि भारतीय संस्कृति का शिरो भाग है तो पुराण उसका हृदय भाग है। पुराणों की भाषा इतनी सरल एवं प्रवाहमयी है कि पाठक सहज ही उसका हृदयंगम कर लेते हैं। पुराण लोक कल्याणार्थ लिखे गये हैं। इसकी शैली कथात्मक है। कथाओं से विषय के स्पष्टीकरण में सहायता मिलती है।

वेद, पुराण और धर्मशास्त्र के बाद दर्शनशास्त्र का विशाल वाङ्मय आता है। दर्शन की दो धारायें हैं—आस्तिक तथा नास्तिक। आस्तिक का अर्थ है वेदम्—लक तथा नास्तिक का अर्थ है वेद के विपरीत। आस्तिक दर्शन मुख्यतया छः हैं। १—वेदांत, २—मीमांसा, ३–सांख्य, ४–योग, ५–न्याय तथा ६–वैशेषिक। नास्तिक दर्शन ३ प्रकार के हैं—चार्वाक, २—जैन, ३—बौद्ध। वेदान्त दर्शन के कई सम्प्रदाय हैं। यथा—शंकर, रामानुज, बल्लभ, मध्व, निम्बार्क आदि। बौद्ध दर्शन के भी वैभाषिक, सैद्धान्तिक, योगाचार तथा माध्यमिक नाम के चार सम्प्रदाय हैं। इन दर्शनों का विशाल साहित्य है, इनमें जीवजगत्, आत्मापरमात्मा और मोक्ष के विषय में तर्क वितर्क किया गया हैं। ये दर्शन हमारी उन्नत विचार धाराओं के परिचायक हैं। इनसे हम गौरवान्वित होते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इन सभी शास्त्रों के अन्दर हमारा साहित्य वाङ्मय आता है। यहाँ साहित्य से हमारा अभिप्राय है—काव्य, कथा, आख्यायिक नाटक आदि। वास्तव में काव्य के अन्तर्गत नाटक, कथा, आख्यायिका आदि सभी आ जाते हैं। इसी से साहित्य शास्त्र के तीन भेद किये गए हैं—१—गद्य, २—पद्य, ३—चम्पू। गद्य के भी तीन भेद हैं। १—नाटक, २–कथा, ३–आख्यायिका, नाटक को ही दृश्य काव्य भी कहते हैं। यह काव्य का मुख्य अंग हैं। 'काव्येषु नाटकं रहस्यम्'। आचार्य भरत का 'नाट्यशास्त्र' नाटक साहित्य का विशिष्ट शास्त्रिय ग्रंथ है। संस्कृत नाटकों में कालिदास का 'अभिज्ञानशाकुन्तल' विश्व साहित्य में सर्वोपरि स्थान माना जाता है। अन्य नाटकों में भासकृत वासकृत वासवदत्ता, विशाखदत्त कृत मुद्राराक्षस, शूद्रककृत मृच्छकटिकम्, भवभूति कृत उत्तररामचरितम् विशेष उल्लेखनीय और सुबन्धु की वासवदत्ता प्रसिद्ध है।

अमर वाणी का काव्य साहित्य अत्यन्त ही समृद्ध है। इसके मुख्यतया दो भेद हैं—१—प्रवन्ध काव्य, २–मुक्तक काव्य। प्रवन्ध काव्यों में वाल्मीकिकृत रामायण आदि काव्य के रूप में विख्यात है। इसके अतिरिक्त कालिदास द्वारा रचित रघुवंश तथा कुमारसम्भव, माघ कृत शिशुपालवधम्, भारवि कृत किरातार्जुनीयम्, श्रीहर्ष कृत नैषधीयचरित विशेष उल्लेखनीय हैं। प्रवन्ध काव्यों की यह विशेषता होता है कि उसमें कथा प्रवाह के साथ ही साथ नदी, पर्वत, वन, सन्ध्या प्रभात आदि प्राकृतिक दृश्यों का भी मनोरम वर्णन होता है। मुक्तक काव्य स्वतन्त्र होती है। इसके अन्तर्गत संस्कृत के श्लोक स्तोत्र तथा फुटकर काव्य ग्रंथ आते हैं। स्तोत्रों में पण्डितराज जगन्नाथ की गंगा-लहरी, लक्ष्मी लहरी और अमृत लहरी तथा फुटकर काव्यों में उन्हीं का 'भामिनी विलास' तथा अमरु का शतक एवं जयदेव का गीतगोविन्द प्रसिद्ध हैं। इनके द्वारा मानव जीवन सरस तथा सहृदय बनता है। अतः इसका अध्ययन अध्यापन मानव मात्र के लिए श्रेयस्कर है।

इनके अतिरिक्त हमारे संस्कृत वाङ्मय में साहित्य का शास्त्रीय विवेचन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भी कम नहीं हुआ है। शास्त्रीय ग्रन्थों में आचार्य मम्मट का काव्यप्रकाश, पण्डितराज जगन्नाथ का रसगंगाधर, आनन्दवर्धन का ध्वन्यालोक तथा विश्वनाथ का साहित्य दर्पण प्रसिद्ध हैं। ईनमें काव्य के विशिष्ट तत्व रस, अलंकार गुण, रीति, अभिधा, लक्षणा और व्यंजना आदि का सम्यक् निरूपण किया गया है। संस्कृत साहित्य में लक्षण ग्रन्थों का बाहूल्य है। ईसी कारण से हमारे लक्ष्य ग्रन्थ मर्यादित हैं। ईन शास्त्र ग्रंथों से अनुशासित होकर लिखे गये हमारे काव्य ग्रन्थ देववाणी के आभूषण स्वरूप हैं।

ईनके अलावाँ अमरवाणी-वाङ्मय में आयुर्वेद, धनुर्वेद, शिल्प-शास्त्र, तन्त्रशास्त्र, कामशास्त्र, नीतिशास्त्र, अर्थशास्त्र आदि अनेक विषयों में विपुल ग्रन्थों का निर्माण हुआ है। ईसमें भी विषय अछूता नहीं रह गया है। वेदों में विज्ञान का भी विशिष्ट उल्लेख किया गया है। इसी वैदिक विज्ञान के आधार पर आज चारों ओर विज्ञान की चर्चा फैली हुई है।

परिणामस्वरूप यह कहा जा सकता है कि हमारी अमर वाणी का वैभव अनन्त है। जो यहाँ नहीं है वह कहीं भी नहीं है। अतः इस अमर वाणी के विशाल वाङ्मय का अंनुशीलन, पठन-पाठन, तथा प्रचार-प्रसार होना चाहिए। क्योंकि ईसी के द्वारा ही मानव का कल्याण सम्भव है।

४५. संस्कृत की उपयोगिता या महत्व

आज संस्कृत भाषा के पठन-पाठन के प्रति लोगों में उदासीनता दिखाई दे रही है। यहाँ तक कि शिक्षित लोग भी ईसी वातावरण से पूर्णतया प्रभावित हो गये हैं। इतना ही नहीं हमारा संस्कृतज्ञ समाज भी अपने वच्चों को संस्कृत पढ़ाने से हिचक रहा है। ईन सबों का सबसे प्रमुख कारण है आर्थिक समस्या। आज का युग अर्थ प्रधान है। अर्थोपार्जन ही सभी का प्रधान लक्ष्य बन चुका है। परन्तु संस्कृत विद्या का लक्ष्य केवल अर्थ ही प्राप्त करना नहीं। यह लक्ष्य तो धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष ईन चारों पुरुषार्थ को प्राप्त कराना है। ईसमें से भी धर्म और मोक्ष प्रधान तथा अर्थ और काम गौड हैं। ईस भौतिकता के

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

युग में उल्टी गंगा बह रही हैं। अर्थात् अर्थ और काम को ही प्रधानता दी जा रही है। धर्म और मोक्ष अप्रधान हो गये हैं। अतः संस्कृत विद्या का ह्रास होना स्वाभाविक बात है। एक बात और है कि अंग्रेजों के शासन काल में संस्कृत भाषा को मृत भाषा की संज्ञा दे दी गयी थी। अतः इस भाषा की ओर से लोगों की प्रवृत्ति नष्ट हो गयी। दूसरी बात यह है कि संस्कृत पठन-पाठन की अवैज्ञानिकता तथा कठिनता से लोगों को कठिनाई होती है। भारत के स्वतन्त्र हो जाने के बाद अन्य योजनाओं के साथ संस्कृत भाषा की उन्नति के लिए भी योजना बनायी गई। इसके लिए संस्कृत आयोग तथा संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना की गई। इसकी शिक्षा में आवश्यक सुधार किये गये। इसे अर्थकारी बनाने के लिए इसके साथ अन्य विषय भी पढ़ाये जाने लगे। संस्कृत को सरलतम ढंग से पढ़ाने के लिए अनेक विधियाँ बनाई गयी। इसके महत्व को बताकर लोगों में आकर्षण पैदा किया गया।

सामान्यतया यह प्रश्न उठता है कि संस्कृत का अध्ययन क्यों किया जाय ? इसका महत्व क्या है ? क्योंकि कहा गया है कि—'उद्देश्यमनुदिश्य मूढ़ोऽपि न प्रवर्तते' अर्थात् मूर्ख भी बिना उद्देश्य के किसी कार्य में प्रवृत्त नहीं होता हैं। ऊपर कहा जा चुका है कि इसका मूल उद्देश्य धर्म है। धर्म का अर्थ जैसा लोग समझते हैं, वैसा संकीर्ण नहीं है क्योंकि धर्म ही मानव का आधार है। धर्म के बिना मनुष्य पशु तुल्य हैं 'धर्मेण हीना पशुभि समानाः'। मनु महाराज के अनुसार धर्म का लक्षण निम्न है—

"धृतिः क्षमामदोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ॥"

अर्थात् धर्म, क्षमा, दम (कुभाव की ओर मन को न जाने देना) चोरी करना, शौच (शरीर, मन और वाणी की पवित्रता) इन्द्रियों को वश में रखना, विवेक, विद्या, सत्य तथा क्रोध न करना ही धर्म के दस लक्षण है।

यह धर्म व्यक्ति या जाति विशेष के लिए नहीं बल्कि मानव मात्र के लिए हितकारी है। संस्कृत शिक्षा से ही मानव में इनका समावेश हो सकता है। क्योंकि संस्कृत वाङ्मय में इनकी शिक्षा पदे-पदे दी गई है। चाहे वेद हो,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चाहे पुराण हो और चाहे साहित्य, । सर्वत्र मानवता के मूल आधार धर्म का वर्णन सुलभ है। आज हम निश्चय ही इस तत्व से हीन हो गये हैं। इसका एक मात्र कारण है कि संस्कृत के पठन-पाठन की उपेक्षा। अतः इस स्वाभाविक लाभ के लिए संस्कृत का ज्ञान होना आवश्यक हैं जो पठन-पाठन से ही सम्भव है।

संस्कृति हमारी संस्कृति की भी आधार-शिला है। आज संस्कृति की सर्वत्र चर्चा है। संस्कृति का सीधा अर्थ है—हमारे प्राचीन। यहाँ संस्कार से हमारा तात्पर्य चूड़ाकरण, यज्ञोपवीत तथा विवाह आदि से है। ये सभी हमारी संस्कृति के अंग हैं। संस्कृति इनसे भी बढ़कर आत्मिक तत्व है। संस्कृति का सम्बन्ध आत्मा से अधिक होता है। हमारे यहाँ आत्मतत्व का चिन्तन अधिक हुआ है। आत्मा से सम्बद्ध विनय-शील, सदाचार आदि सद्गुण भी संस्कृति के उपादान है। धर्म और संस्कृति का घनिष्ठ सम्बन्ध है। दर्शन संस्कृति का प्राण है। कला इसका सौन्दर्य है। आचरण तथा रहन-सहन ही संस्कृति का शरीर हैं। इन सम्पूर्ण सांस्कृतिक तत्वों का सम्यक् परिशीलन संस्कृति के ग्रन्थों में पर्याप्त मात्रा में किया गया है। अतः संस्कृति की रक्षा के लिए हमें संस्कृत का ज्ञान होना नितान्त आवश्यक है।

भारतीय इतिहास के आदि श्रोत हमारे वेद, पुराण, रामायण, महाभारत तथा काव्य ग्रंथ हैं। उनका वास्तविक ज्ञान किये बिना हम कुछ भी बताने में असमर्थ रहेंगे। गुप्त काल के इतिहास का ज्ञान हमें तत्कालीन काव्यों, नाटकों, तथा अभिलेखों से ही होता है। वे सभी संस्कृत में ही लिखे गये हैं। उनका मौलिक ज्ञान इतिहास की वास्तविक जानकारी के लिए आवश्यक है। इसी प्रकार राजनीति के तुलनात्मक ज्ञान के लिये भी चाणक्य का अर्थशास्त्र, कामन्दकीय नीतिशास्त्र आदि प्राचीन ग्रन्थों का पर्यालोचन आवश्यक है। कानून की जानकारी के लिए मिताक्षरा का ज्ञान अत्यन्त ही आवश्यक है। कहने का अभिप्राय यह है कि संस्कृत—ज्ञान के बिना व्यवहार का ज्ञान अधूरा ही रह जायगा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इस समय साहित्यों तथा कार्यों का पठन-पाठन बड़े ही जोर-शोर से हो रहा है। परन्तु क्या बिना संस्कृत के मूल ग्रंथों का ज्ञान प्राप्त किये, हमें साहित्य का वास्तविक ज्ञान हो सकता है। बिना साहित्य दर्पण तथा काव्य प्रकाश आदि ग्रन्थों का सम्यक् अनुशीलन किए, हमें रस तथा अलंकारों का वास्तविक ज्ञान होना असम्भव है। कालिदास की उपमा तथा दण्डी का पद लालित्य, बिना उनके काव्यों को पढ़े समझ में आना असम्भव हैं। जयदेव का 'गीतगोविन्द' तथा पण्डितराज की 'गंगा लहरी' का काव्य सौन्दर्य किसी अन्य भाषा में मिलना दुर्लभ है। कहने का अभिप्राय यह हैं कि संस्कृत भाषा की काव्य सम्पदा बेजोड़ है। उसका रसास्वादन प्रत्येक सहृदय के लिए अत्यंत ही आवश्यक है। अतः यह सिद्ध होता है कि काव्य रस के पूर्ण आस्वादन के लिए भी संस्कृत का पूर्ण ज्ञान होना अवाञ्छनीय है।

इस समय नाटकों की भी बड़ी धूम मची हुई है। परन्तु क्या यह मालूम नहीं है कि—"काव्येषु नाटकं रम्यं तत्र रम्या शकुन्तला" अर्थात् काव्यों में नाटक सुन्दर हैं तथा नाटकों में 'अभिज्ञान शाकुन्तलम्',। इसे पढ़ने के लिए नाटक-प्रेमी का मन ही ललक उठता होगा। क्या उसकी पूर्ति अनुवाद के द्वारा हो सकती है। मूल में जो आनन्द होता है वह उसके अनुवाद में नहीं। भवभूति द्वारा रचित 'उत्तररामचरितम्' करुणरस प्रधान नाटक है। उसमें कितनी कारुणिक उक्तियाँ हैं इसका ज्ञान सहृदय संस्कृतज्ञ ही कर सकता है। कहने का अभिप्राय यह कि नाटक, आख्यायिका आदि काव्य ग्रन्थों का विशाल एवं व्यवस्थित प्रणयन जो संस्कृत साहित्य में है वह अतुलनीय है।

गीता हमारी जीवन धारा को प्रभावित करने वाली विलक्षण रचना है। इसमें एक ही साथ दर्शन, राजनीति, धर्म, कर्म, आचार, विचार आदि सभी भारतीय चिंतन देखने को मिलते हैं। उसको भी जानने का प्रमुख साधन संस्कृत-ज्ञान ही है। बिना संस्कृत की जानकारी से हम गीता के ज्ञान से वंचित रह जायेंगे। जिस कारण से हम जीवन में तथा जगत् में उपहास के पात्र बन सकते हैं। अध्यात्म चिंतन के लिए उपनिषदों का ज्ञान तथा भक्ति भावना के

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लिए भागवत का ज्ञान और कर्म का मर्म जानने के लिए मीमांसा का ज्ञान प्राप्त करना मानव जीवन में अत्यन्त ही आवश्यक है।

इन उच्चकोटि के गहन ग्रंथों के अलावाँ सूक्तियों का भण्डार भी इसी भाषा में उपलब्ध हैं। जिसका अनुपालन करके मनुष्य अपना जीवन नैतिक तथा सरल बना सकता है। ये सूक्तियाँ सभी को अच्छी लगने वाली होती हैं। कुछ सूक्तियाँ देखने योग्य हैं—

१—हितं मनोहारि च दुर्लभं वचः।

२—परोपकाराय सतां विभूतयः।

३—सन्तोष एव पुरुषस्य परं निधानम्।

४—सत्यान्नास्ति परो धर्मः।

५—विद्या ददाति विनयम्।

६—विद्या धर्मेण शोभते।

७—गुणो भूषयते रूपम्।

८—विद्या विहीना पशुभिः समाना।

९—उद्यमेन हि सिध्यन्ति कार्याणि न च मनोरथैः।

१०–द्वयमपि परिरक्ष्यं संस्कृतिः संस्कृतश्च।

प्राचीन शास्त्रों एवं काव्य-नाटकों की विशेषता का वर्णन नहीं किया जा सकता है। क्योंकि वे सभी अतुलनीय हैं। अब जरा सा संस्कृत शिक्षा के सामयिक तथा व्यवहारिक लाभ पर ध्यान देना चाहिये। आज हमारी राष्ट्र भाषा हिन्दी है। हिन्दी को आर्थिक दृष्टि से महत्वपूर्ण पद देने के लिए, सभी को सीखना आवश्यक है। इसके शब्द जो आज बने हुए हैं तथा बनाये जा रहे हैं, वे सब कहाँ से लिए गये हैं यह विचारणीय प्रश्न है। हिन्दी का आदि श्रोत तथा इसकी शब्दावली की प्रकृति संस्कृत ही-है। संस्कृत की धातुओं में प्रत्यय लगाकर शब्दों का निर्माण किया जाता है। इस स्थिति में हिन्दी की जननी संस्कृत की उपेक्षा करना अत्यन्त ही घातक है। संस्कृत के ज्ञान के बिना कोई भी हिन्दी के शब्दों को शुद्ध-शुद्ध नहीं लिख सकता है। क्योंकि संस्कृत के प्रकृति प्रत्यय का ज्ञान हिन्दी के लिए भी आवश्यक हैं। इतना ही

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नहीं लिपि का ज्ञान के बिना पूरा नहीं होता है। अन्य भारतीय भाषाओं की जननी संस्कृत भाषा ही है। उनका ज्ञान भी संस्कृत ज्ञान के बिना पूर्ण नहीं हो सकता है।

इस प्रकार संस्कृत भाषा तथा साहित्य के ये अनन्त गुण हैं। अत्यन्त ही कष्ट की बात कि ऐसी गुणशालिनी भाषा का अध्ययन आज मंद होता जा रहा है। शिक्षा शास्त्रियों का ध्यान इस महत्वपूर्ण विषय की ओर जाना चाहिए। जिससे इस भाषा के शिक्षण के लिए सरलतम् विधि का मार्ग दर्शन किया जा सके। अन्यथा सम्पूर्ण विश्व की जनता का भविष्य अन्धकारमय होता चला जा रहा है। हमारी सांस्कृतिक मान्यतायें काल के गाल में समा रही हैं। हमारा शास्त्र पुस्तकों तक ही सीमित हो रहा है। हमारा नैतिक एवं सामाजिक स्तर निम्न हो रहा है। हमारा संचित प्राचीन गौरव क्षीण हो रहा है। जिससे हम लोग कहीं के नहीं रह जायेंगे। अभी भी समय है, हमें इस विचारणीय विषय पर ध्यान देकर विचार करना चाहिए तथा संस्कृत भाषा के महत्व को समझ कर इसका घर-घर प्रचार-प्रसार करना चाहिए। क्योंकि संस्कृत ही हमारी आध्यात्मिक, सांस्कृतिक तथा नैतिक उन्नति का एक मात्र साधन हैं।

४६. संस्कृत भाषा का प्रचार

हमारे देश की प्राचीनतम भाषा संस्कृत है। इसमें अनेकों रत्न-राशियाँ इधर-उधर बिखरी पड़ी हैं। इसके ज्ञान के बिना हमारी आत्मिक तथा सांस्कृतिक उन्नति असम्भव है। परतन्त्रता काल में संस्कृत को सङ्कीर्ण दायरे में रखकर हम लोगों का बड़ा अहित किया गया। हम अपनी सभ्यता और संस्कृति को भूल से गए हैं। हमारा घोर नैतिक पतन हो गया। स्वतन्त्रता पाने के बाद हमारे राष्ट्र नायकों ने संस्कृत के उन्नति की ओर ध्यान दिया। अनकों योजनायें बनीं। संस्कृत-आयोग, संस्कृत अकादमी तथा संस्कृत विश्व-विद्यालय आदि की स्थापना की गई। संस्कृतज्ञों का उचित सम्मान हुआ। संस्कृत के अध्यापकों का कुछ वेतन बढ़ाया गया। संस्कृत की परीक्षाओं को समकक्ष मान्यता दी गई। देश के संविधान में भी इसको उचित स्थान दिया

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गया। कहने का अभिप्राय यह है कि पहले की अपेक्षा अब संस्कृत उपेक्षित तथा कुण्ठित नहीं है। इसको राजकीय प्रश्रय प्राप्त हुआ, जिससे यह उन्नति के लिये अग्रसर हुई।

इतना सब होते हुए भी आज संस्कृत के प्रति लोगों की उदासीनता चिन्तनीय है। जो भाषा किसी समय जन भाषा थी तथा सम्पूर्ण देश में प्रचार प्रसार था। वह आज के स्वतन्त्र भारत में उपेक्षित होकर एक कोने में पड़ी रहे इससे बढ़कर लज्जा की बात और क्या हो सकती है ? जिसका अध्ययन अध्यापन गौरवपूर्ण था, उसको पढ़ने में आज लज्जा का अनुभव किया जाय, यह क्या हम लोगों के लिए दुर्भाग्यपूर्ण नहीं हैं ? विदेशी भाषा तथा वेषभूषा में पहले हमारे भाई ही संस्कृतज्ञों को देखकर नाक सिकोड़ें, इससे बढ़कर चिन्तनीय और क्या हो सकता है ? इस समय ये सभी प्रश्न विचारणीय हैं। इनका समाधान अवश्य ही ढूढ़ना होगा। तभी संस्कृति तथा संस्कृत का वास्तविक उन्नयन सम्भव है।

इसके प्रचार के विषय में सरकार द्वारा स्थापित अनेक संस्थाएँ कर रही हैं। परन्तु केवल सरकार तथा संस्थाओं का ही यह कार्य नहीं है। संस्कृत के पण्डितों का भी इसमें पूर्ण सहयोग अपेक्षित है। संस्कृत को व्यवहारोपयोगी बनाने के लिए उसमें निहित ज्ञान राशि को सर्व सुलभ करने के लिए तथा संस्कृत के अध्ययन से सर्वाङ्गीण विकास करने के लिए भी संस्कृतज्ञों को कमर कसकर मैदान में आना होगा। इसके लिए उन्हें त्याग और परिश्रम करना होगा। और स्वार्थ से ऊपर उठकर उदार वातावरण बनाना होगा। संस्कृत शिक्षा की सरल विधि तैयार करनी होगी। कठिन ग्रन्थों का सरल अनुवाद प्रस्तुत करना होगा। भूगोल, राजनीति तथा अर्थशास्त्र आदि विषयों में नवीन पुस्तकें लिखनी होगी। अन्वेषण कार्य में लगना पड़ेगा। घर-घर घूम कर लोगों को संस्कृत का महत्व बताकर उनके भीतर संस्कृत का भाव भरना होगा। आवश्यकतानुसार व्यापक आन्दोलन भी करना होगा। अपने बच्चों को संस्कृत पढ़ाना होगा। स्वयं संकीर्णता का त्याग करके अन्यों के सामने आदर्श

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रस्तुत करना पड़ेगा। नवीन सामाजिक मान्यताओं को अपने में मिलाना होगा। अंग्रेजी आदि अन्य भाषाओं के साहित्य का ज्ञान प्राप्त करके संस्कृत को सर्वाङ्गपूर्ण बनाना होगा। इसके अतिरिक्त वैज्ञानिक प्रगति में भी हाथ बटाना होगा। क्योंकि इस वैज्ञानिक युग में हम विज्ञान से विमुख होकर उन्नति नहीं कर सकते हैं। इतना ध्यान तो रखना होगा ही कि अपनेपन को न भुलाकर जन-जन में आध्यात्मिकता का भाव भरना होगा। तभी हमारा वास्तविक उत्थान हो सकेगा। इसका अभिप्राय यह है कि इस समय अध्यात्म और विज्ञान का समन्वय करके देश की संस्कृति को अक्षुण बनाये रखने के लिये पूर्ण सचेष्ठ होना होगा।

संस्कृत के विद्वानों के साथ ही साथ अन्य विषयों के विद्वानों को भी इसके प्रचार में सहयोग करना होगा क्योंकि यह किसी वर्ग विशेष के लिए न होकर सम्पूर्ण मानव के लिए है। इसमें निहित सामग्रियों से सभी का हित सम्भव है। संस्कृत भाषा में भरी पड़ी विद्या को जानकर निश्चय ही सभी प्रकार के शिक्षितों का लाभ होगा। अतः वकील, डाक्टर, इन्जिनीयर सभी विद्यालयों के प्रधानाचार्य तथा अध्यापक सरकारी तथा गैर सरकारी सभी कर्मचारी आदि का परम पुनीत कर्त्तव्य है कि वे स्वयं संस्कृत में निहित ज्ञान को सीखें और अपने बच्चों को संस्कृत पढ़ावें। क्योंकि जब तक शिक्षित वर्गों में संस्कृत भाषा और साहित्य के प्रति रूचि उत्पन्न नहीं होगी तब तक उसका तथा स्वयं का विकास कठिन है। यदि लोग चाहे तो प्रत्येक नगर तथा कस्बों में संस्कृत का विद्यालय चला सकते है। रात के समय प्रौढ़ों को संस्कृत की जानकारी की व्यवस्था की जा सकती है। समय-समय पर संस्कृतज्ञों का भाषण कराया जा सकता है। संस्कृत की पुस्तकों एवं पत्र पत्रिकाओं का एक पुस्तकालय की व्यवस्था कर सकते है। स्वयं संस्कृतज्ञ बनकर अपने बच्चों को संस्कृत का ज्ञान दे सकते हैं। कहने का अभिप्राय यह है कि संस्कृत के प्रचार प्रसार में शिक्षितों का सहयोग परम अपेक्षित है।

आज देश में नेताओं की कमी नहीं है। नेता ही देश का वास्तविक निर्माण करते हैं। देश के निर्माण का व्यावहारिक पक्ष यदि कृषि, व्यापार तथा उद्योग

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है तो सैद्धांतिक पक्ष शिक्षा और संस्कृति है। सभी जगह आज शिक्षा का प्रचार हो रहा है। परन्तु क्या संस्कृत के बिना भारतीय शिक्षा पूरी मानी जा सकती है ? भारतीय शिक्षा में संस्कृत का वही महत्व हैं, जो फूल में सुगन्धि की होती है। हमारे नेता समय-समय पर अमूल्य भाषणों तथा सुझावों से इस दिशा में हमारा मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं। बड़े नेताओं का इसमें अधिक दायित्व होता है।

माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों को भी संस्कृत के प्रचार में सक्रिय योगदान देना चाहिए। क्योंकि उनकी सेना बड़ी लम्बी हैं। भारत का सम्पूर्ण भविष्य उन्हीं के ही हाथों में है। उनका परम पुनीत कर्त्तव्य होता है कि वे अपने विद्यार्थियों को अधिकाधिक संख्या में संस्कृत पढ़ने के लिए प्रवृत्त करें। हाईस्कूल तथा इण्टर में संस्कृत का पाठ्यक्रम नगण्य हैं। अतः संस्कृत विश्व-विद्यालय के पाठ्यक्रमों के अनुसार कुछ छात्रों को तैयार करके उन्हें संस्कृत की परीक्षा में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित करें। इससे वे आवश्यक समझें तो एक संस्कृत का भी विद्यालय चला सकते हैं। इससे संस्कृत के प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान मिल सकता है।

इसके अतिरिक्त भारतीय ग्रामीणों, नागरिकों, व्यवसायियों तथा धनी-मानी लोगों को भी इस कार्य के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। प्रत्येक गाँव में संस्कृत पढ़ाने की व्यवस्था होनी चाहिए। उनकी आर्थिक व्यवस्था का समाधान पहले की तरह से आज भी धनी मानी लोगों को अपने हाथ में लेना चाहिए। वास्तव में तो गाँवों में ही संस्कृत का अधिक प्रचार-प्रसार करने की आवश्यकता है। एक समय था जब कि गाँवों में संस्कृत का पूर्ण वोल-बाला था। वहाँ पर पण्डितों का बाहूल्य था। समाज में उनका अच्छा सम्मान था। सुन्दर वातावरण था। आज भी उस वातावरण को पुनः वापस लाने की आवश्यकता है। इसके लिए घर-घर में संस्कृत का प्रचार करना होगा, तथा गाँव वालों को भी सक्रिय सहयोग प्रदान करना होगा।

उपर्युक्त उन सभी लोगों को संस्कृत प्रचार कार्य में लगाने के साथ ही साथ हमें अपनी स्थिति भी सुदृढ़ करनी होगी। हमारी शिक्षण संस्थायें आज

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दीन की अवस्था में पड़ी हुई हैं। वहाँ पर छात्रों का अभाव और ही चिंता का कारण बना हुआ है। जब सरकार संस्कृत परीक्षाओं को समकक्षता की मान्यता दे चुकी है नाना प्रकार की नौकरियों के लिए संस्कृत परीक्षोत्तीर्ण व्यक्तियों की नियुक्तियाँ हो रही हैं। संस्कृत की शिक्षा व्यवस्था भी निःशुल्क है, तो क्या कारण है कि संस्कृत विद्यालयों में छात्रों की कमी है। इसके लिए संस्कृत विद्यालय के प्रबन्धकों, निरीक्षकों तथा प्रधानाचार्यों को स्वार्थ छोड़ कर इस भाषा के महत्व को ध्यान में रखते हुए, इसके प्रचार-प्रसार को कटिबद्ध होकर करना चाहिए। क्योंकि जब तक हम अपनी कमियों को दूर करके वास्तविक स्थिति जनता के सामने नहीं रखेंगे, जब तक संस्कृत विद्यालयों में अन्य विषयों के योग्य अध्यापकों की नियुक्ति नहीं करेंगे, जब तक विद्यालय की उपकरणों से साज-सज्जा नहीं करेंगे, जब-तक विद्यालयों में समुचित पठन-पाठन की व्यवस्था ठीक नहीं करेंगे, तब तक अन्य लोगों से संस्कृत के प्रचार प्रसार के लिए बात करना अनुचित है। अतः हमें सर्वप्रथम अपना संस्कार स्वयं करना होगा। जिससे प्रभावित होकर लोग अपने बालकों संस्कृत पढ़ाने के लिए स्वयं उत्सुक होंगे। जब पाठशालायें समृद्ध होगी तथा संस्कृत विद्यालयों से लोक जीवन सफल होगा तब हमारी दीनता-हीनता की भावना अपने आप दूर हो जायेंगी। इसके लिए संस्कृतज्ञों को कर्त्तव्य परायण होना होगा। हमारा तो यह विचार है कि अल्प निजी स्वार्थ के लिए आज संस्कृत के रक्षक ही भक्षक बन गए हैं। सभी संस्कृत के रक्षक स्वार्थान्ध होकर अपना विवेक खो बैठे हैं।

आज स्त्रियों में संस्कृत शिक्षा का अभाव पूरे देश के लिए अत्यधिक खेद का विषय है। स्त्रियाँ ही हम सब की जननी हैं। हमें बनाने तथा बिगाड़ने का पूर्ण दायित्व माताओं को ही हैं। क्योंकि उनकी जिस प्रकार की शिक्षा होगी उसी प्रकार बालकों का निर्माण होगा। इस दिशा में सरकार तथा संस्कृत के कर्णधारों की ओर से अभी तक किसी योजना का निर्माण नहीं किया गया है। परिणामस्वरूप पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली में शिक्षित हमारी मातायें तथा बहनें विपरीत मार्ग का अनुसरण करके भारतीय आदर्शों को नष्ट करती जा रही हैं। इस तरफ सभी का ध्यान आकृष्ट होना चाहिये। स्त्रियों के लिये उनके

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था अलग से होनी चाहिए। स्त्रियों का पाठ्यक्रम बालकों से भिन्न होना चाहिए। इनके लिए रामायण, महाभारत, पुराण आदि का सम्यक् ज्ञान उनके लिए उपयोगी होगा। स्त्रियों के लिए संगीत, कला तथा काव्य की शिक्षा भी अत्यन्त आवश्यक तथा उपयोगी होगी। इसके अतिरिक्त अगर वे संस्कृत का समुचित ज्ञान प्राप्त करना चाहें तो, व्यवस्था होनी चाहिए। संस्कृत शिक्षा का प्रचार-प्रसार तभी सुचारु रूप से सम्भव होगा।

आज के समाज का एक अत्यन्त भीषण भ्रम यह है कि संस्कृत केवल ब्राह्मणों को पढ़ने की धर्म-भाषा है। इस भ्रम का निवारण करना होगा। साथ ही साथ उन्हें इस तथ्य से अवगत कराना होगा कि राजा भोज के समय में स्त्रियाँ लकड़ी बेचने वाले, जुलाहें आदि सभी इस भाषा में बात-चीत करते थे। उस समय यह जन-भाषा थी। इसका साहित्य जन साधारण का मार्ग दर्शन कर सकता है। यह सभी के लिए समान लाभदायी तथा उन्नतिकारक है। अतः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र आदि सभी वर्णों को इसका पठन-पाठन तथा अनुशीलन करना चाहिए।

उक्त रीति से जब हमारी सरकार, नागरिक, नर-नारी सभी संस्कृत-प्रचार रूपी यज्ञ में दत्तचित होकर सहयोग की भावना से तल्लीन होंगे, तभी संस्कृत का सर्वाङ्गीण विकास तथा प्रचार सम्भव है। इस युग में इसकी अत्याधिक आवश्यकता है। देश का सर्वाङ्गीण विकास करने के लिए इस पवित्र एवं सांस्कृतिक कार्य में लोगों को परस्पर सहयोग पूर्वक एकजुट हो जाना चाहिए। क्योंकि परस्पर सहयोग से कठिन कार्य आसान हों जाता है।

"परस्परं भावयन्तः श्रेयः तरमवाप्स्यथ।"

४७. सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

भारतवर्ष के स्वातन्त्र्य सूर्योदय के साथ ही संस्कृत विद्या का भी भाग्योदय हुआ। होना ही चाहिए था। क्योंकि हमारी संस्कृति की आधार-शिला संस्कृत-विद्या ही तो है। हमारे प्राचीन वाङ्मय वेद, पुराण तथा दर्शन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

से ही भारतीयों को सदा प्रकाश मिलता रहा है। जब हम सदियों की दासता के बन्धन से मुक्त होकर अपने स्वतन्त्र देश के सर्वाङ्गीण विकास की योजना बनाते हैं, तो सांस्कृतिक निधि की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होना स्वाभाविक ही है। परिणामतः हमारी जागरूक सरकार ने इसके सर्वाङ्गीण उन्नयन के लिये एक संस्कृत-आयोग का गठन किया। इस आयोग में संस्कृत के मूर्धन्य मनीषी रखे गये। उन्होंने संस्कृत के सर्वाङ्गीण विकास को ध्यान में रखकर एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रकाशित किया। उसमें कई आवश्यक बातों के साथ ही साथ प्रमुख बात यह थी कि देश में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना होनी चाहिये। जिसके माध्यम से पठन-पाठन के साथ-साथ संस्कृत विद्या का विधिवत् अनुसन्धान किया जा सके। इस आवश्यक बात को सभी ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया। इस योजना को क्रियान्वित करने का गौरव सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश सरकार को प्राप्त हुआ। तत्कालीन मुख्य मंत्री डॉ० सम्पूर्णानंद जी के पवित्र प्रयास से ११ सितम्बर सन् १९५६ को विद्या और कला की सांस्कृतिक नगरी वाराणसी में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना के सन्दर्भ में निर्विरोध विधेयक पारित हुआ। इसके अनुसार दिनांक २२ मार्च सन् १९५८ ई. को शिक्षा मंत्री पं. कमलापति त्रिपाठी की अध्यक्षता में वैदिक मंगलाचरण के साथ 'वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय' का उद्घाटन कार्य सम्पन्न किया गया। इसकी स्थापना का प्रमुख उद्देश्य संस्कृत भाषा और साहित्य के सम्यक् प्रचार-प्रचार के साथ-साथ इसमें बिखरी हुई अनंत रत्नराशियों का अन्वेषण करके प्रकाशित करना भी है।

विद्या की राजधानी वाराणसी में 'राजकीय संस्कृत महाविद्यालय' सैकड़ों वर्षों से संस्कृत विद्या का पठन-पाठन तथा अनुसन्धान करता चला आ रहा था। 'सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय' उसी संस्था का परिष्कृत एवं परिवर्धित रूप है। इसका इतिहास गौरवपूर्ण रहा है। देश के पराधीनत्व काल में इसने संस्कृत भाषा की जो महती सेवा की है, वह सराहनीय रही है। डॉ. थीवो, ग्रिफिथ, वैलेन्टाइन तथा वेनिस आदि विद्वान और डॉ. गंगानाथ झा, म. म. पं. गोपीनाथ कविराज प्रभृति भारतीय विद्वान इस संस्था के प्रिन्सिपल रह चुके हैं। इसमें महामहिम बालशास्त्री, शिवकुमार शास्त्री, गंगा-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

धर शास्त्री, दामोदर शास्त्री, सुधाकर शास्त्री आदि प्रतिभा सम्पन्न विद्वान अध्यापन कार्य कर चुके हैं। आज जो विश्वविद्यालय का अनुसन्धान पुस्तकालय बना हुआ है, वह इस संस्था का प्रमुख अंग रहा है।

इस विश्वविद्यालय के कुलाधिपति विधानतः उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महोदय हुआ करते हैं। इसके प्रति कुलाधिपति काशीं नरेश श्री विभूतिनारायण सिह जी हैं। इसमें कुलपति का चुनाव प्रति तीसरे वर्ष हुआ करता है। कुलपति महामहिम डॉ. गंगानाथ झा जी के सुपुत्र पं. श्री आदित्यनाथ झा आई. सी. एस. बनाये गये थे। उन्होंने इस संस्था की सर्वविधि उन्नति की महती योजना तैयार की तथा सरकार ने उसकी स्वीकृति प्रदान की। इसके परिणामस्वरूप वेद, वेदांग, पुराण, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, साहित्य, न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग, वेदांत, मीमांसा, आगम, बौद्ध-दर्शन, जैनदर्शन, प्राकृत, पालि आदि प्राचीन शास्त्रों के साथ ही साथ हिन्दी, अंग्रेजी, इतिहास, भूगोल, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि आधुनिक शास्त्रों के विभागों की स्थापना हुई। इन सभी विभागों में सुयोग्य अध्यापकों की नियुक्ति कर पठन-पाठन को विश्वविद्यालयीय रूप प्रदान किया गया। सरस्वती भवन पुस्तकालय का विस्तार किया गया। एक स्वतंत्र अनुसन्धान संस्थान की स्थापना की गयी। अनुसन्धान करने वाले छात्रों के लिये छात्रवृत्तियाँ निर्धारित की गयीं। विद्यावारिधि, विद्यावाचस्पति ये दो उपाधियाँ उनके लिये निर्धारित की गयीं। अनुसन्धान तथा प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया गया। संस्कृत के स्नातकों के प्रशिक्षण के लिये प्रशिक्षण विभाग खोला गया। भारतीय छात्रों को फ्रेंच, जर्मनी, तिब्बती आदि विदेशी भाषाओं की शिक्षा देने के लिये तथा विदेशी छात्रों को संस्कृत की शिक्षा देने के लिते प्रमाणपत्रीय विभाग खोले गये। वैदिक विधान के अनुरूप एक यज्ञशाला तथा नाट्य शास्त्रीय विधि के अनुरूप एक नाट्यशाला का निर्माण हुआ। प्राचीन मूर्तियों तथा कलाकृतियों का एक संग्रहालय का भी निर्माण किया गया। पाठ्यक्रम में व्यापकता लाई गयी। छात्रों के निवास के लिये चार वृहद् छात्रावासों का निर्माण कराया गया। अध्यापकों के निवास के लिए दो अध्यापकावासों की व्यवस्था की गयी है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बात यह है कि अध्यापकों तथा अन्य कर्मचारियों का वेतन मान अन्य विश्वविद्यालयों के समान किया गया सम्मानित अध्यापकों की नियुक्तियाँ की गई। इस प्रकार यह विश्वविद्यालय अन्य विश्वविद्यालयों के समकक्ष बनकर संस्कृत विद्या के प्रसार में अग्रसर हुआ।

इस समय परिपुष्ट एवं समुन्नत दशा में होते हुए आज यह विश्वविद्यालय एकतीसवें वर्ष में चल रहा है। इसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा प्रदेश सरकार पूर्ण प्रश्रय प्राप्त है। यह उन्नति की शिखर की ओर अग्रसर है। आगे चलकर कई नये विभाग और खोले गये हैं। जैसे—योग-तन्त्र विभाग, प्राचीन राजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र विभाग तथा आयुर्वेद विभाग। आयुर्वेद विभाग में पठन-पाठन के साथ प्रयोग के लिये विशुद्ध आयुर्वेदिक अस्पताल भी चल रहा है। भाषा-विज्ञान के पठन पाठन तथा अनुसन्धान की दिशा में भी यहाँ पर उल्लेखनीय कार्य हो रहा है। ग्रंथालय विज्ञान की शिक्षा भी यहाँ प्रदान की जाती है।

विश्वविद्यालय के छात्रावासों में लगभग पाँच छः सौ छात्र रहते हैं। छात्रों से किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता है। प्रत्युत उन्हें छात्र-वृत्तियाँ भी प्रदान की जाती हैं। छात्रों के खेल-कूद की समुचित व्यवस्था के लिये क्रीड़ा विभाग की व्यवस्था की गयी है। यहाँ पर एन. सी. सी. तथा एन. एस. एस. की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया गया है। कार्यालयीय कार्य के लिये कार्यालय का निर्माण हुआ है निकट भविष्य में और भी व्यवस्था होने की सम्भावना है।

विश्वविद्यालय के सरस्वती भवन पुस्तकालय का विस्तार किया गया है। पुस्तकालय के लिये पहले एक ही भवन था, परन्तु अब दो भवन हो गया है। प्राचीन सरस्वती भवन में हस्तलिखित ग्रंथों का विशाल संग्रह है तथा दूसरे नये भवन में प्रकाशित ग्रन्थों का महान संग्रह किया हैं। इसी के भीतर छात्रों को बैठकर पढ़ने के लिये विस्तृत तथा व्यवस्थित वाचनालय की समुचित व्यवस्था की गई है। ये दोनों संग्रह अनुसन्धान करने वाले छात्रों के लिये परमोपयोगी सिद्ध हुये हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विश्वविद्यालय का अनुसन्धान विभाग अपनी पूर्व निश्चित योजना के अनुरूप चल रहा है। इसके भीतर ही एक प्रकाशन विभाग भी है। इस विभाग ने अब तक हजारों दुर्लभ एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थों को प्रकाशित कर चुका है। सरस्वती सुषमा नामक एक त्रैमासिक अनुसन्धानात्मक पत्रिका भी इसी विभाग से प्रकाशित होती है। इसका एक स्वयं का समृद्ध मुद्रणालय भी है। यहाँ से एक विश्वविद्यालयीय पञ्चाङ्ग का प्रकाशन प्रति वर्ष होता है। जिसका प्रवर्तन महामहिम बापूदेव शास्त्री ने किया था।

विश्वविद्यालय की परीक्षाओं को अन्य विश्वविद्यालयों ने भी मान्यता प्रदान की है। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों ने यहां के स्नातकों को प्रतियोगिता परीक्षाओं में भाग लेने के लिए मान्य घोषित कर दिया है। विश्वविद्यालय ने भी अपनी परीक्षाओं में उदारता बरती है। ज्योंकि संस्कृत के साथ, जूनियर हाई स्कूल पास छात्र को पूर्वमध्यमा में, संस्कृत के साथ हाई-स्कूल उत्तीर्ण को उत्तर मध्यमा में, संस्कृत सहित इण्टरमिडिएट उत्तीर्ण व्यक्ति को शास्त्री में तथा संस्कृत सहित बी० ए० उत्तीर्ण व्यक्ति को आचार्य परीक्षा में प्रविष्ट होने का अधिकार प्रदान कर रखा है।

विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हजारों से अधिक संस्कृत विद्यालय देश के कोने-कोने में संस्कृत की शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। इनमें अध्यापन-रत अध्यापकों का वेतन-मान अत्यन्त ही कम तथा उपेक्षित है। विश्वविद्यालय के अधिकारियों के प्रयास से सरकार इन अध्यापकों का वेतनमान बढ़ाने का विचार कर रही है। इण्टर कालेजों के समान पेंशन आदि की सुविधायें भी मिलने वाली हैं। जिससे संस्कृत शिक्षा का स्तर ऊपर उठ सकेगा।

इस प्रकार संस्कृत भाषा तथा संस्कृतज्ञों को हर प्रकार से समुन्नत बनाता हुआ संस्कृत विश्वविद्यालय भारतीय जीवनधारा को प्राचीन भारतीय आदर्शों की ओर उन्मुख करने में पूर्णरूपेण संलग्न है। इसका आदर्श वाक्य है—'श्रुतं मे गोपाय'। इस आदर्श वाक्य की दृढ़ नींव पर प्रतिष्ठित होकर यह विश्वविद्यालय शास्त्ररत्नों के अन्वेषण तथा संरक्षण में, अध्ययन तथा अध्यापन में और प्रचार तथा प्रसार में संलग्न है। इसी के अनुकरण से विहार तथा उड़ीसा आदि अन्य प्रदेशों में संस्कृत-विश्वविद्यालय खोले गये हैं। वह समय दूर नहीं जब कि देश के हर एक प्रान्त में संस्कृत विश्वविद्यालय खुलेंगे और संस्कृत-विद्या का उचित आदर होगा।

卐

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है तो सैद्धांतिक पक्ष शिक्षा और संस्कृति है। सभी जगह आज शिक्षा का प्रचार हो रहा है। परन्तु क्या संस्कृत के बिना भारतीय शिक्षा पूरी मानी जा सकती है ? भारतीय शिक्षा में संस्कृत का वही महत्व हैं, जो फूल में सुगन्धि की होती है। हमारे नेता समय-समय पर अमूल्य भाषणों तथा सुझावों से इस दिशा में हमारा मार्ग प्रशस्त कर सकते हैं। बड़े नेताओं का इसमें अधिक दायित्व होता है।

माध्यमिक विद्यालयों के प्रधानाचार्यों को भी संस्कृत के प्रचार में सक्रिय योगदान देना चाहिए। क्योंकि उनकी सेना बड़ी लम्बी हैं। भारत का सम्पूर्ण भविष्य उन्हीं के ही हाथों में है। उनका परम पुनीत कर्त्तव्य होता है कि वे अपने विद्यार्थियों को अधिकाधिक संख्या में संस्कृत पढ़ने के लिए प्रवृत्त करें। हाईस्कूल तथा इण्टर में संस्कृत का पाठ्यक्रम नगण्य हैं। अतः संस्कृत विश्वविद्यालय के पाठ्यक्रमों के अनुसार कुछ छात्रों को तैयार करके उन्हें संस्कृत की परीक्षा में सम्मिलित होने के लिए प्रोत्साहित करें। इससे वे आवश्यक समझें तो एक संस्कृत का भी विद्यालय चला सकते हैं। इससे संस्कृत के प्रचार में महत्वपूर्ण योगदान मिल सकता है।

इसके अतिरिक्त भारतीय ग्रामीणों, नागरिकों, व्यवसायियों तथा धनी-मानी लोगों को भी इस कार्य के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए। प्रत्येक गांव में संस्कृत पढ़ाने की व्यवस्था होनी चाहिए। उनकी आर्थिक व्यवस्था का समाधान पहले की तरह से आज भी धनी मानी लोगों को अपने हाथ में लेना चाहिए। वास्तव में तो गाँवों में ही संस्कृत का अधिक प्रचार-प्रसार करने की आवश्यकता है। एक समय था जब कि गाँवों में संस्कृत का पूर्ण बोल-बाला था। वहाँ पर पण्डितों का बाहूल्य था। समाज में उनका अच्छा सम्मान था। सुन्दर वातावरण था। आज भी उस वातावरण को पुनः वापस लाने की आवश्यकता है। इसके लिए घर-घर में संस्कृत का प्रचार करना होगा, तथा गाँव वालों को भी सक्रिय सहयोग प्रदान करना होगा।

उपर्युक्त उन सभी लोगों को संस्कृत प्रचार कार्य में लगाने के साथ ही साथ हमें अपनी स्थिति भी सुदृढ़ करनी होगी। हमारी शिक्षण संस्थायें आज

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

दीन की अवस्था में पड़ी हुई हैं। वहाँ पर छात्रों का अभाव और ही चिंता का कारण बना हुआ है। जब सरकार संस्कृत परीक्षाओं को समकक्षता की मान्यता दे चुकी है नाना प्रकार की नौकरियों के लिए संस्कृत परीक्षोत्तीर्ण व्यक्तियों की नियुक्तियाँ हो रही हैं। संस्कृत की शिक्षा व्यवस्था भी निःशुल्क है, तो क्या कारण है कि संस्कृत विद्यालयों में छात्रों की कमी है। इसके लिए संस्कृत विद्यालय के प्रबन्धकों, निरीक्षकों तथा प्रधानाचार्यों को स्वार्थ छोड़ कर इस भाषा के महत्व को ध्यान में रखते हुए, इसके प्रचार-प्रसार को कटिबद्ध होकर करना चाहिए। क्योंकि जब तक हम अपनी कमियों को दूर करके वास्तविक स्थिति जनता के सामने नहीं रखेंगे, जब तक संस्कृत विद्यालयों में अन्य विषयों के योग्य अध्यापकों की नियुक्ति नहीं करेंगे, जब तक विद्यालय की उपकरणों से साज-सज्जा नहीं करेंगे, जब-तक विद्यालयों में समुचित पठन-पाठन की व्यवस्था ठीक नहीं करेंगे, तब तक अन्य लोगों से संस्कृत के प्रचार प्रसार के लिए बात करना अनुचित है। अतः हमें सर्वप्रथम अपना संस्कार स्वयं करना होगा। जिससे प्रभावित होकर लोग अपने बालकों संस्कृत पढ़ाने के लिए स्वयं उत्सुक होंगे। जब पाठशालायें समृद्ध होगी तथा संस्कृत विद्यालयों से लोक जीवन सफल होगा तब हमारी दीनता-हीनता की भावना अपने आप दूर हो जायेंगी। इसके लिए संस्कृतज्ञों को कर्त्तव्य परायण होना होगा। हमारा तो यह विचार है कि अल्प निजी स्वार्थ के लिए आज संस्कृत के रक्षक ही भक्षक बन गए हैं। सभी संस्कृत के रक्षक स्वार्थान्ध होकर अपना विवेक खो बैठे हैं।

आज स्त्रियों में संस्कृत शिक्षा का अभाव पूरे देश के लिए अत्यधिक खेद का विषय है। स्त्रियाँ ही हम सब की जननी हैं। हमें बनाने तथा बिगाड़ने का पूर्ण दायित्व माताओं को ही हैं। क्योंकि उनकी जिस प्रकार की शिक्षा होगी उसी प्रकार बालकों का निर्माण होगा। इस दिशा में सरकार तथा संस्कृत के कर्णधारों की ओर से अभी तक किसी योजना का निर्माण नहीं किया गया है। परिणामस्वरूप पाश्चात्य शिक्षा प्रणाली में शिक्षित हमारी मातायें तथा बहनें विपरीत मार्ग का अनुसरण करके भारतीय आदर्शों को नष्ट करती जा रही हैं। इस तरफ सभी का ध्यान आकृष्ट होना चाहिये। स्त्रियों के लिये उनके

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुरूप शिक्षा की व्यवस्था अलग से होनी चाहिए। स्त्रियों का पाठ्यक्रम बालकों से भिन्न होना चाहिए। इनके लिए रामायण, महाभारत, पुराण आदि का सम्यक् ज्ञान उनके लिए उपयोगी होगा। स्त्रियों के लिए संगीत, कला तथा काव्य की शिक्षा भी अत्यन्त आवश्यक तथा उपयोगी होगी। इसके अतिरिक्त अगर वे संस्कृत का समुचित ज्ञान प्राप्त करना चाहें तो, व्यवस्था होनी चाहिए। संस्कृत शिक्षा का प्रचार-प्रसार तभी सुचारु रूप से सम्भव होगा।

आज के समाज का एक अत्यन्त भीषण भ्रम यह है कि संस्कृत केवल ब्राह्मणों को पढ़ने की धर्म-भाषा है। इस भ्रम का निवारण करना होगा। साथ ही साथ उन्हें इस तथ्य से अवगत कराना होगा कि राजा भोज के समय में स्त्रियाँ लकड़ी बेचने वाले, जुलाहें आदि सभी इस भाषा में बात-चीत करते थे। उस समय यह जन-भाषा थी। इसका साहित्य जन साधारण का मार्ग दर्शन कर सकता है। यह सभी के लिए समान लाभदायी तथा उन्नतिकारक है। अतः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र आदि सभी वर्णों को इसका पठन-पाठन तथा अनुशीलन करना चाहिए।

उक्त रीति से जब हमारी सरकार, नागरिक, नर-नारी सभी संस्कृत-प्रचार रूपी यज्ञ में दत्तचित होकर सहयोग की भावना से तल्लीन होंगे, तभी संस्कृत का सर्वाङ्गीण विकास तथा प्रचार सम्भव है। इस युग में इसकी अत्याधिक आवश्यकता है। देश का सर्वाङ्गीण विकास करने के लिए इस पवित्र एवं सांस्कृतिक कार्य में लोगों को परस्पर सहयोग पूर्वक एकजुट हो जाना चाहिए। क्योंकि परस्पर सहयोग से कठिन कार्य आसान हों जाता है।

"परस्परं भावयन्तः श्रेयः तरमवाप्स्यथ।"

४७. सम्पूर्णानन्द संस्कृत विश्वविद्यालय

भारतवर्ष के स्वातन्त्र्य सूर्योदय के साथ ही संस्कृत विद्या का भी भाग्योदय हुआ। होना ही चाहिए था। क्योंकि हमारी संस्कृति की आधार-शिला संस्कृत विद्या ही तो है। हमारे प्राचीन वाङ्मय वेद, पुराण तथा दर्शन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

से ही भारतीयों को सदा प्रकाश मिलता रहा है। जब हम सदियों की दासता के बन्धन से मुक्त होकर अपने स्वतन्त्र देश के सर्वाङ्गीण विकास की योजना बनाते हैं, तो सांस्कृतिक निधि की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होना स्वाभाविक ही है। परिणामतः हमारी जागरूक सरकार ने इसके सर्वाङ्गीण उन्नयन के लिये एक संस्कृत-आयोग का गठन किया। इस आयोग में संस्कृत के मूर्धन्य मनीषी रखे गये। उन्होंने संस्कृत के सर्वाङ्गीण विकास को ध्यान में रखकर एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रकाशित किया। उसमें कई आवश्यक बातों के साथ ही साथ प्रमुख बात यह थी कि देश में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना होनी चाहिये। जिसके माध्यम से पठन-पाठन के साथ-साथ संस्कृत विद्या का विधिवत् अनुसन्धान किया जा सके। इस आवश्यक बात को सभी ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया। इस योजना को क्रियान्वित करने का गौरव सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश सरकार को प्राप्त हुआ। तत्कालीन मुख्य मंत्री डॉ० सम्पूर्णानंद जी के पवित्र प्रयास से ११ सितम्बर सन् १९५९ को विद्या और कला की सांस्कृतिक नगरी वाराणसी में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना के सन्दर्भ में निर्विरोध विधेयक पारित हुआ। इसके अनुसार दिनांक २२ मार्च सन् १९५८ ई. को शिक्षा मंत्री पं. कमलापति त्रिपाठी की अध्यक्षता में वैदिक मंगलाचरण के साथ 'वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय' का उद्घाटन कार्य सम्पन्न किया गया। इसकी स्थापना का प्रमुख उद्देश्य संस्कृत भाषा और साहित्य के सम्यक् प्रचार-प्रचार के साथ-साथ इसमें बिखरी हुई अनंत रत्नराशियों का अन्वेषण करके प्रकाशित करना भी है।

विद्या की राजधानी वाराणसी में 'राजकीय संस्कृत महाविद्यालय' सैकड़ों वर्षों से संस्कृत विद्या का पठन-पाठन तथा अनुसन्धान करता चला आ रहा था। 'सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय' उसी संस्था का परिष्कृत एवं परिवर्धित रूप है। इसका इतिहास गौरवपूर्ण रहा है। देश के पराधीनत्व काल में इसने संस्कृत भाषा की जो महती सेवा की है, वह सराहनीय रही है। डॉ. थीबो, ग्रिफिथ, वैलेन्टाइन तथा वेनिस आदि विद्वान और डॉ. गंगानाथ झा, म. म. पं. गोपीनाथ कविराज प्रभृति भारतीय विद्वान इस संस्था के प्रिन्सिपल रह चुके हैं। इसमें महामहिम बालशास्त्री, शिवकुमार शास्त्री, गंगा-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

धर शास्त्री, दामोदर शास्त्री, सुधाकर शास्त्री आदि प्रतिभा सम्पन्न विद्वान अध्यापन कार्य कर चुके हैं। आज जो विश्वविद्यालय का अनुसन्धान पुस्तकालय बना हुआ है, वह इस संस्था का प्रमुख अंग रहा है।

इस विश्वविद्यालय के कुलाधिपति विधानतः उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महोदय हुआ करते हैं। इसके प्रति कुलाधिपति काशी नरेश श्री विभूतिनारायण सिंह जी हैं। इसमें कुलपति का चुनाव प्रति तीसरे वर्ष हुआ करता है। कुलपति महामहिम डॉ. गंगानाथ झा जी के सुपुत्र पं. श्री आदित्यनाथ झा आई. सी. एस. बनाये गये थे। उन्होंने इस संस्था की सर्वविधि उन्नति की महती योजना तैयार की तथा सरकार ने उसकी स्वीकृति प्रदान की। इसके परिणामस्वरूप वेद, वेदांग, पुराण, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, साहित्य, न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग, वेदांत, मीमांसा, आगम, बौद्ध-दर्शन, जैनदर्शन, प्राकृत, पालि आदि प्राचीन शास्त्रों के साथ ही साथ हिन्दी, अंग्रेजी, इतिहास, भूगोल, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि आधुनिक शास्त्रों के विभागों की स्थापना हुई। इन सभी विभागों में सुयोग्य अध्यापकों की नियुक्ति कर पठन-पाठन को विश्वविद्यालयीय रूप प्रदान किया गया। सरस्वती भवन पुस्तकालय का विस्तार किया गया। एक स्वतंत्र अनुसन्धान संस्थान की स्थापना की गयी। अनुसन्धान करने वाले छात्रों के लिये छात्रवृत्तियाँ निर्धारित की गयीं। विद्यावारिधि, विद्यावाचस्पति ये दो उपाधियाँ उनके लिये निर्धारित की गयीं। अनुसन्धान तथा प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया गया। संस्कृत के स्नातकों के प्रशिक्षण के लिये प्रशिक्षण विभाग खोला गया। भारतीय छात्रों को फ्रेंच, जर्मनी, तिब्बती आदि विदेशी भाषाओं की शिक्षा देने के लिये तथा विदेशी छात्रों की संस्कृत की शिक्षा देने के लिते प्रमाणपत्रीय विभाग खोले गये। वैदिक विधान के अनुरूप एक यज्ञशाला तथा नाट्य शास्त्रीय विधि के अनुरूप एक नाट्यशाला का निर्माण हुआ। प्राचीन मूर्तियों तथा कलाकृतियों का एक संग्रहालय का भी निर्माण किया गया। पाठ्यक्रम में व्यापकता लाई गयी। छात्रों के निवास के लिये चार वृहद् छात्रावासों का निर्माण कराया गया। अध्यापकों के निवास के लिए दो अध्यापकावासों की व्यवस्था की गयी।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

से ही भारतीयों को सदा प्रकाश मिलता रहा है। जब हम सदियों की दासता के बन्धन से मुक्त होकर अपने स्वतन्त्र देश के सर्वाङ्गीण विकास की योजना बनाते हैं, तो सांस्कृतिक निधि की ओर हमारा ध्यान आकृष्ट होना स्वाभाविक ही है। परिणामतः हमारी जागरूक सरकार ने इसके सर्वाङ्गीण उन्नयन के लिये एक संस्कृत-आयोग का गठन किया। इस आयोग में संस्कृत के मूर्धन्य मनीषी रखे गये। उन्होंने संस्कृत के सर्वाङ्गीण विकास को ध्यान में रखकर एक विस्तृत प्रतिवेदन प्रकाशित किया। उसमें कई आवश्यक बातों के साथ ही साथ प्रमुख बात यह थी कि देश में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना होनी चाहिये। जिसके माध्यम से पठन-पाठन के साथ-साथ संस्कृत विद्या का विधिवत् अनुसन्धान किया जा सके। इस आवश्यक बात को सभी ने मुक्त कंठ से स्वीकार किया। इस योजना को क्रियान्वित करने का गौरव सर्वप्रथम उत्तर प्रदेश सरकार को प्राप्त हुआ। तत्कालीन मुख्य मंत्री डॉ० सम्पूर्णानंद जी के पवित्र प्रयास से ११ सितम्बर सन् १९५९ को विद्या और कला की सांस्कृतिक नगरी वाराणसी में संस्कृत विश्वविद्यालय की स्थापना के सन्दर्भ में निर्विरोध विधेयक पारित हुआ। इसके अनुसार दिनांक २२ मार्च सन् १९५८ ई. को शिक्षा मंत्री पं. कमलापति त्रिपाठी की अध्यक्षता में वैदिक मंगलाचरण के साथ 'वाराणसेय संस्कृत विश्वविद्यालय' का उद्घाटन कार्य सम्पन्न किया गया। इसकी स्थापना का प्रमुख उद्देश्य संस्कृत भाषा और साहित्य के सम्यक् प्रचार-प्रचार के साथ-साथ इसमें बिखरी हुई अनंत रत्नराशियों का अन्वेषण करके प्रकाशित करना भी है।

विद्या की राजधानी वाराणसी में 'राजकीय संस्कृत महाविद्यालय' सैकड़ों वर्षों से संस्कृत विद्या का पठन-पाठन तथा अनुसन्धान करता चला आ रहा था। 'सम्पूर्णानंद संस्कृत विश्वविद्यालय' उसी संस्था का परिष्कृत एवं परिवर्धित रूप है। इसका इतिहास गौरवपूर्ण रहा है। देश के पराधीनत्व काल में इसने संस्कृत भाषा की जो महती सेवा की है, वह सराहनीय रही है। डॉ. थीबो, ग्रिफिथ, वैलेन्टाइन तथा वेनिस आदि विद्वान और डॉ. गंगानाथ झा, म. म. पं. गोपीनाथ कविराज प्रभृति भारतीय विद्वान इस संस्था के प्रिन्सिपल रह चुके हैं। इसमें महामहिम बालशास्त्री, शिवकुमार शास्त्री, गंगा-

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

धर शास्त्री, दामोदर शास्त्री, सुधाकर शास्त्री आदि प्रतिभा सम्पन्न विद्वान अध्यापन कार्य कर चुके हैं। आज जो विश्वविद्यालय का अनुसन्धान पुस्तकालय बना हुआ है, वह इस संस्था का प्रमुख अंग रहा है।

इस विश्वविद्यालय के कुलाधिपति विधानतः उत्तर प्रदेश के राज्यपाल महोदय हुआ करते हैं। इसके प्रति कुलाधिपति काशी नरेश श्री विभूतिनारायण सिंह जी हैं। इसमें कुलपति का चुनाव प्रति तीसरे वर्ष हुआ करता है। कुलपति महामहिम डॉ. गंगानाथ झा जी के सुपुत्र पं. श्री आदित्यनाथ झा आई. सी. एस. बनाये गये थे। उन्होंने इस संस्था की सर्वविधि उन्नति की महती योजना तैयार की तथा सरकार ने उसकी स्वीकृति प्रदान की। इसके परिणामस्वरूप वेद, वेदांग, पुराण, धर्मशास्त्र, दर्शनशास्त्र, साहित्य, न्याय-वैशेषिक, सांख्य-योग, वेदांत, मीमांसा, आगम, बौद्ध-दर्शन, जैनदर्शन, प्राकृत, पालि आदि प्राचीन शास्त्रों के साथ ही साथ हिन्दी, अंग्रेजी, इतिहास, भूगोल, राजनीति शास्त्र, अर्थशास्त्र आदि आधुनिक शास्त्रों के विभागों की स्थापना हुई। इन सभी विभागों में सुयोग्य अध्यापकों की नियुक्ति कर पठन-पाठन को विश्वविद्यालयीय रूप प्रदान किया गया। सरस्वती भवन पुस्तकालय का विस्तार किया गया। एक स्वतंत्र अनुसन्धान संस्थान की स्थापना की गयी। अनुसन्धान करने वाले छात्रों के लिये छात्रवृत्तियाँ निर्धारित कीं गयीं। विद्यावारिधि, विद्यावाचस्पति ये दो उपाधियाँ उनके लिये निर्धारित की गयीं। अनुसन्धान तथा प्रकाशन का कार्य प्रारम्भ किया गया। संस्कृत के स्नातकों के प्रशिक्षण के लिये प्रशिक्षण विभाग खोला गया। भारतीय छात्रों को फ्रेंच, जर्मनी, तिब्बती आदि विदेशी भाषाओं की शिक्षा देने के लिये तथा विदेशी छात्रों की संस्कृत की शिक्षा देने के लिते प्रमाणपत्रीय विभाग खोले गये। वैदिक विधान के अनुरूप एक यज्ञशाला तथा नाट्य शास्त्रीय विधि के अनुरूप एक नाट्यशाला का निर्माण हुआ। प्राचीन मूर्तियों तथा कलाकृतियों का एक संग्रहालय का भी निर्माण किया गया। पाठ्यक्रम में व्यापकता लाई गयी। छात्रों के निवास के लिये चार वृहद् छात्रावासों का निर्माण कराया गया। अध्यापकों के निवास के लिए दो अध्यापकावासों की व्यवस्था की गयी है

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

बात यह है कि अध्यापकों तथा अन्य कर्मचारियों का वेतन मान अन्य विश्वविद्यालयों के समान किया गया सम्मानित अध्यापकों की नियुक्तियाँ की गई। इस प्रकार यह विश्वविद्यालय अन्य विश्वविद्यालयों के समकक्ष बनकर संस्कृत विद्या के प्रसार में अग्रसर हुआ।

इस समय परिपुष्ट एवं समुन्नत दशा में होते हुए आज यह विश्वविद्यालय एकतीसवें वर्ष में चल रहा है। इसे केन्द्रीय विश्वविद्यालय अनुदान आयोग तथा प्रदेश सरकार पूर्ण प्रश्रय प्राप्त है। यह उन्नति की शिखर की ओर अग्रसर है। आगे चलकर कई नये विभाग और खोले गये हैं। जैसे—योग-तन्त्र विभाग, प्राचीन राजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र विभाग तथा आयुर्वेद विभाग। आयुर्वेद विभाग में पठन-पाठन के साथ प्रयोग के लिये विशुद्ध आयुर्वेदिक अस्पताल भी चल रहा है। भाषा-विज्ञान के पठन पाठन तथा अनुसन्धान की दिशा में भी यहाँ पर उल्लेखनीय कार्य हो रहा है। ग्रंथालय विज्ञान की शिक्षा भी यहाँ प्रदान की जाती है।

विश्वविद्यालय के छात्रावासों में लगभग पाँच छः सौ छात्र रहते हैं। छात्रों से किसी प्रकार का शुल्क नहीं लिया जाता है। प्रत्युत उन्हें छात्रवृत्तियाँ भी प्रदान की जाती हैं। छात्रों के खेल-कूद की समुचित व्यवस्था के लिये क्रीड़ा विभाग की व्यवस्था की गयी है। यहाँ पर एन. सी. सी. तथा एन. एस. एस. की शिक्षा का भी प्रबन्ध किया गया है। कार्यालयीय कार्य के लिये कार्यालय का निर्माण हुआ है निकट भविष्य में और भी व्यवस्था होने की सम्भावना है।

विश्वविद्यालय के सरस्वती भवन पुस्तकालय का विस्तार किया गया है। पुस्तकालय के लिये पहले एक ही भवन था, परन्तु अब दो भवन हो गया है। प्राचीन सरस्वती भवन में हस्तलिखित ग्रंथों का विशाल संग्रह है तथा दूसरे नये भवन में प्रकाशित ग्रन्थों का महान संग्रह किया हैं। इसी के भीतर छात्रों को बैठकर पढ़ने के लिये विस्तृत तथा व्यवस्थित वाचनालय की समुचित व्यवस्था की गई है। ये दोनों संग्रह अनुसन्धान करने वाले छात्रों के लिये समोपयोगी सिद्ध हुये हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

विश्वविद्यालय का अनुसन्धान विभाग अपनी पूर्व निश्चित योजना के अनुरूप चल रहा है। इसके भीतर ही एक प्रकाशन विभाग भी है। इस विभाग ने अब तक हजारों दुर्लभ एवं महत्वपूर्ण ग्रन्थों को प्रकाशित कर चुका है। सरस्वती सुषमा नामक एक त्रैमासिक अनुसन्धानात्मक पत्रिका भी इसी विभाग से प्रकाशित होती है। इसका एक स्वयं का समृद्ध मुद्रणालय भी है। यहाँ से एक विश्वविद्यालयीय पञ्चाङ्ग का प्रकाशन प्रति वर्ष होता है। जिसका प्रवर्तन महामहिम बापूदेव शास्त्री ने किया था।

विश्वविद्यालय की परीक्षाओं को अन्य विश्वविद्यालयों ने भी मान्यता प्रदान की है। केन्द्रीय तथा प्रान्तीय सरकारों ने यहां के स्नातकों को प्रतियोगिता परीक्षाओं में भाग लेने के लिए मान्य घोषित कर दिया है। विश्वविद्यालय ने भी अपनी परीक्षाओं में उदारता बरती है। ज्योंकि संस्कृत के साथ, जूनियर हाई स्कूल पास छात्र को पूर्वमध्यमा में, संस्कृत के साथ हाईस्कूल उत्तीर्ण को उत्तर मध्यमा में, संस्कृत सहित इण्टरमिडिएट उत्तीर्ण व्यक्ति को शास्त्री में तथा संस्कृत सहित बी० ए० उत्तीर्ण व्यक्ति को आचार्य परीक्षा में प्रविष्ट होने का अधिकार प्रदान कर रखा है।

विश्वविद्यालय से सम्बद्ध हजारों से अधिक संस्कृत विद्यालय देश के कोने-कोने में संस्कृत की शिक्षा प्रदान कर रहे हैं। इनमें अध्यापन-रत अध्यापकों का वेतन-मान अत्यन्त ही कम तथा उपेक्षित है। विश्वविद्यालय के अधिकारियों के प्रयास से सरकार इन अध्यापकों का वेतनमान बढ़ाने का विचार कर रही है। इण्टर कालेजों के समान पेंशन आदि की सुविधायें भी मिलने वाली हैं। जिससे संस्कृत शिक्षा का स्तर ऊपर उठ सकेगा।

इस प्रकार संस्कृत भाषा तथा संस्कृतज्ञों को हर प्रकार से समुन्नत बनाता हुआ संस्कृत विश्वविद्यालय भारतीय जीवनधारा को प्राचीन भारतीय आदर्शों की ओर उन्मुख करने में पूर्णरूपेण संलग्न है। इसका आदर्श वाक्य है—'श्रुतं गोपाय'। इस आदर्श वाक्य की दृढ़ नींव पर प्रतिष्ठित होकर यह विश्वविद्यालय शास्त्ररत्नों के अन्वेषण तथा संरक्षण में, अध्ययन तथा अध्यापन और प्रचार तथा प्रसार में संलग्न है। इसी के अनुकरण से विहार तथा [illegible]सा आदि अन्य प्रदेशों में संस्कृत-विश्वविद्यालय खोले गये हैं। वह समय नहीं जब कि देश के हर एक प्रान्त में संस्कृत विश्वविद्यालय खुलेंगे और [illegible]त-विद्या का उचित आदर होगा।

卐

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0 ... ection

हमारे महत्वपूर्ण प्रकाशन

१- काव्यमीमांसा—(१-५ अध्याय)-'शिखा' संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित–डाँ० चन्द्रमौलि द्विवेदी १०-००

२- किरातार्जुनियम्—(१-२ सर्ग)-'प्रतिभा' संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित–कविश रामकैलाश पाण्डेय ८-७५

३- स्वप्नवासवदत्तम्—'लालमती' संस्कृत तथा 'कृष्णा' हिन्दी व्याख्या सहित–डाँ० नर्मदेश्वर त्रिपाठी १६-२५

४- प्रताप विजय—संस्कृत, हिन्दी व्याख्या सहित —भोलाशंकर व्यास १०-००

५- लिङ्गानुशासनम्—शिवप्रसाद शर्मा २-००

६- संस्कृत निबन्ध मंजरी— शिवप्रसाद शर्मा ८-००

७- बृहदअवकहडाचक्रम्—'विमला' हिन्दी व्याख्या सहित–शिवप्रसाद शर्मा ५-००

८- मुहूर्तचिन्तामणिः—'सुधा' हिन्दी व्याख्या सहित —हरीशंकर पाठक ३५

९- शब्दधातुरुपछन्दसांमंजरी—विनोद पाण्डेय (गुटका) -००

—: प्रकाशक :—

विद्या संस्थान

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection